CIK - 02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

ग्रहशान्ति प्रकरण

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ सं.
इकाई – 1	मण्ड़प एवं कुण्ड विधान का शास्त्रीय परिचय	1
इकाई – 2	मण्ड़ल–विधान का सचित्र विवरण	32
इकाई – 3	पूजन विधान प्रारम्भिक	60
इकाई – 4	गणपति पूजन	87
इकाई – 5	षोड़शमातृका पूजन, वसोर्द्धारा पूजन	110
इकाई – 6	नान्दीश्राद्ध (आभ्युदयिक–कर्म)	144
इकाई – 7	ब्राह्मणवरण	173
इकाई – 8	अग्निस्थापन	207
इकाई – 9	वास्तुपूजन, योगिनीपूजन, क्षेत्रपालपूजन	235
इकाई – 10	भद्रमण्डलादि पूजन (प्रधानकर्मानुसार विश्लेषण)	247
इकाई – 11	हवन प्रकरण	266
इकाई – 12	आरती का महत्व (लौकिक एवं वैदिक आरती संग्रह)	303
इकाई – 13	श्राद्ध परिचय	338

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो.(डॉ.) विनय कुमार पाठक

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

समन्वयक एवं सदस्य

समन्वयक

डॉ. क्षमता चौधरी

सहायक आचार्य (अंग्रेजी) व.म.खु.वि., कोटा

सदस्य

1. **प्रो.(डॉ.) एल.आर. गुर्जर**
   निदेशक, सामाजिक एवं मानविकी विद्या पीठ
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
2. डॉ. क्षमता चौधरी
   सहायक आचार्य (अंग्रेजी)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
3. डॉ. कमलेश जोशी
   उपकुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
4. प्रो. भास्कर श्रोत्रिय
5. डॉ. सरिता भार्गव
6. पं. हेमन्त शास्त्री
   ज्योतिष, कोटा

सम्पादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

सम्पादक

डॉ. देवेश कुमार मिश्रा

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग

उत्तराखण्ड खुला विश्वविद्यालय, उत्तराखण्ड

	लेखक	इकाई सं.
1	*डॉ. भारती शर्मा* *ब्रह्मपुरी, जयपुर*	(1,2,3,4,5)
2	*पं. राजनारायण शर्मा "ज्योतिषाचार्य"* *गोविन्द नगर पश्चिम, जयपुर*	(6,7,8,9,10)
3	*सुश्री लता श्रीमाली* *वरिष्ठ विधि अधिकारी* *ज्योतिष, एम.ए. संस्कृत, विशिष्ट उपाख्य (ज्योतिष), मालवीय नगर, जयपुर*	(11, 12, 13)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) विनय कुमार पाठक
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो.(डॉ.) एल.आर. गुर्जर
निदेशक, सामाजिक एवं मानविकी विद्याा पीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राज.)

प्रो.(डॉ.) पी.के. शर्मा
निदेशक, क्षेत्रीय सेवाएं
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राज.)

पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

श्री योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

उत्पादन

पाठ्यक्रम परिचय

इस प्रश्नपत्र में कुल 13 इकाइयों के माध्यम से अध्ययन हेतु प्रस्तुत विषयों का वर्णन किया गया है। कर्मकाण्ड की विधा से सम्बन्धित इस प्रश्नपत्र में मण्डप और कुण्ड निर्माण विधि से लेकर देव पूजन , याग , अनुष्ठान ,नवग्रहपूजन विधान , विभिन्न देवताओं की आरती इत्यादि सहित विभिन्न श्राद्धादि प्रयोगों के यथा सम्भव वर्णन प्रस्तुत किये गये हैं । प्रथम इकाई में मण्डप और कुण्ड सिद्धि के विधानों से सम्बन्धित प्रयोगों के सविधि चित्रण उपस्थित हैं। यज्ञ को सम्पन्न करवाने के लिए उसके अङ्गों (मण्डप तथा कुण्ड आदि) का ज्ञान आवश्यक है। वैदिक सूत्रग्रन्थों, ब्राह्मणग्रन्थों, पुराणों तथा तान्त्रिक ग्रन्थों में इन अङ्गों की विस्तृत विवेचना की गयी है। इसमें मण्डप तथा कुण्ड के उपाङ्गों (खात, नाभि, कण्ठ, मेखला, योनि, तोरण आदि) का सुस्पष्ट वर्णन मिलता है। दस हाथ या कुछ न्यून से लेकर एक सौ बीस (१२०) या इससे भी अधिक लम्बे-चौड़े मण्डप की निर्माण विधि का प्रमाण भी मिलता है। भूमि के विभाग, स्तम्भों की संख्या तथा वलिका-काष्ठों की संख्या का भी उल्लेख मिलता है। शास्त्रों के अनुसार लगभग २७ प्रकार के मण्ड़पों का वर्णन मिलता है, ये मण्डप आकृतिभेद तथा आयामभेद से विपुल होते हैं। द्वितीय इकाई मण्डल प्रकरण की है। मण्डल देवताओं का ही प्रतीक है, इसमें देवताओं की साङ्गोपाङ्ग पूजा की जाती है। मण्डल देवताओं के अनुसार निर्दिष्ट रूप में ही बनायें जाते हैं। प्राचीन काल से मण्डलों का निर्माण वेदी पर किया जाता है।तृतीय इकाई में प्रारम्भिक पूजन के अन्तर्गत आत्मशुद्धि, गुरु स्मरण, पवित्र धारण, पृथ्वी पूजन, सङ्कल्प, भैरव प्रणाम, दीप पूजन, शङ्ख-घण्टा पूजन के पश्चात् ही देव पूजन करने के विधानों की चर्चा की गयी है। सभी देवताओं में गणपति सर्वप्रथम है, इनका पूजन सभी माङ्गलिक कर्मों में करना चाहिए। चौथी इकाई का यही वर्ण्य विषय है। इकाई पॉच पूजन क्रम में षोड़शमातृकाओं का पूजन अनिवार्य क्रम है, इसके अन्तर्गत गणपति, षोडश देवियों तथा सप्त वसोर्द्धारा देवियों का पूजन किया जाता है , का मुख्य विषय है। छठी इकाई नान्दी श्राद्ध के प्रयोग वर्णन की है। यज्ञ, विवाह, प्रतिष्ठा, उपनयन, समावर्तन, पुत्रजन्म, गृहप्रवेश, नामकरण, सीमन्तोन्नयन, सन्तान का मुख देखने से पूर्व और वृषोत्सर्ग में नान्दीश्राद्ध अवश्य करना चाहिए , सातवीं का प्रतिपाद्य विषय यज्ञादि कर्तृक ब्राह्मणों के पूजन एवं पुण्याहवाचन कर्मादि हैं। आठवें वर्णनक्रम में अग्निस्थापन नवग्रह पूजा विधि का समुचित उल्लेख किया गया है। ग्रहशान्ति प्रकरण में वास्तु, योगिनी व क्षेत्रपाल पूजन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। योगिनियों की संख्या ६४ है। पूजन क्रम में १६ देवियाँ व ७ घृतमातृकायें भी है, परन्तु योगिनियों का विशेष महत्त्व है , यही सब नवीं इकाई का वर्ण्य विषय है।दसवीं तथा ग्यरहवीं इकाइयॉ क्रमश: सर्वतोभद्र मण्डल के देवताओं के पूजन एवं हवन विधान से सम्बन्धित हैं। आरती को " आरार्तिक अथवा " नीराजन भी कहते है। पूजा के अन्त में आरती की जाती है। पूजन में जो भी त्रुटियाँ (मन्त्रहीन/क्रियाहीन/अशुद्धि आदि) रह जाती है, उनकी पूर्ति आरती के द्वारा की जाती है। स्कन्दपुराण के अनुसार :-

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं यत् कृतंपूजनं हरेः। सर्वं सम्पूर्णतामेति कृते नीराजनं शिवे।।

पितरों का ऋण श्राद्ध द्वारा चुकाया जाता है, आश्विनमास के कृष्णपक्ष एवं मृत्युतिथि को श्राद्ध किया जाता है। श्राद्ध का अर्थ है - श्रद्धया दीयते यत् तत् श्राद्धम् अर्थात् जो भी श्रद्धा से दिया जाय। ये विषय बारहवीं एवं तेरहवीं इकाई के हैं।

इकाई — 1

मण्डप और कुण्ड सिद्धि

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मण्डप एवं कुण्ड के माप की विधि

1.4 मण्डप हेतु भूमिपरीक्षण

1.5 यज्ञकर्म में मण्डप -निर्माण हेतु शुभ भूमि के लक्षण

1.6 यज्ञकर्म में मण्डप -निर्माण हेतु दिशा का चयन करते समय राहुमुख का ज्ञान

1.7 भू-शुद्धि

1.8 मण्डप निर्माण

1.9 कुण्ड निर्माण विधि

1.10 वेदी निर्माण

1.11 सारांश

1.12 शब्दावली

1.13 अतिलघुत्तरीय प्रश्न

1.15. लघुत्तरीय प्रश्न

1.16. सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1 प्रस्तावना

यज्ञ को सम्पन्न करवाने के लिए उसके अङ्गों (मण्डप तथा कुण्ड आदि) का ज्ञान आवश्यक है। वैदिक सूत्रग्रन्थों, ब्राह्मणग्रन्थों, पुराणों तथा तान्त्रिक ग्रन्थों में इन अङ्गों की विस्तृत विवेचना की गयी है। इसमें मण्डप तथा कुण्ड के उपाङ्गों (खात, नाभि, कण्ठ, मेखला, योनि, तोरण आदि) का सुस्पष्ट वर्णन मिलता है। दस हाथ या कुछ न्यून से लेकर एक सौ बीस (120) या इससे भी अधिक लम्बे-चौड़े मण्डप की निर्माण विधि का प्रमाण भी मिलता है। भूमि के विभाग, स्तम्भों की संख्या तथा वलिका-काष्ठों की संख्या का भी उल्लेख मिलता है। शास्त्रों के अनुसार लगभग 27 प्रकार के मण्ड़पों का वर्णन मिलता है, ये मण्डप आकृतिभेद तथा आयामभेद से विपुल होते है।

कुण्डों के भेद :- कुण्डों के मुख्यतया दो भेद है - आयामभेद तथा आकृतिभेद । आयामभेद से कुण्ड एकहस्तात्मक, द्विहस्तात्मक, चतुर्हस्तात्मक, षड्हस्तात्मक, अष्टहस्तात्मक तथा दशहस्तात्मक होते है। अन्य प्रकार से मण्डप की आकृतियों के अनुसार भेद होते हैं। आकृति के अनुसार कुण्ड तीन प्रकार के होते हैं :-

1. कोणात्मक कुण्ड :- इनमें त्रिकोण कुण्ड , चतुरस्र कुण्ड , पञ्चास्र कुण्ड , षडस्र कुण्ड , सप्तास्र कुण्ड , अष्टास्र कुण्ड , नवास्र कुण्ड , रुद्र कुण्ड (एकादशास्र कुण्ड), षट्त्रिंशास्र कुण्ड एवं अष्टचत्वारिंशास्र कुण्ड होते हैं।

2. वर्तुल कुण्ड :- इनमें वर्तुल कुण्ड , अर्धचन्द्र कुण्ड तथा पद्मकुण्ड होते है। सूर्यकुण्ड भी वर्तुलाकार होता है।

3. विशिष्ट कुण्ड :- इनमें योनिकुण्ड , असिकुण्ड , कुन्त कुण्ड , चापकुण्ड , मुद्गरकुण्ड , शनिकुण्ड , राहु कुण्ड , केतु कुण्ड , चन्द्र कुण्ड , गुरु कुण्ड , भौम कुण्ड , बुध कुण्ड , शुक्र कुण्ड आदि होते है, जिनका वर्णन तान्त्रिक ग्रन्थों में मिलता है।

1.2 उद्देश्य :-

1. कुण्ड-मण्डप की शास्त्रीय विवेचन का ज्ञान।

2. मुख्य कुण्डों के निर्माण विधि का ज्ञान।

3. कर्मकाण्ड के शास्त्रीय ज्ञान से परिचय।

1.3 मण्डप एवं कुण्ड के माप की विधि

यज्ञकर्ता यजमान को दोनों भुजायें ऊपर की ओर करके सीधा खड़ा होना चाहिए, फिर उसके पैर की अङ्गुलियों के अग्रभाग से लेकर ऊपर खड़े किये गये हाथों की मध्यमा अङ्गुली पर्यन्त नापना चहिए। यह माप रस्सी, सूत्र या फीते से की जा सकती है। वह नाप जितनी भी हो, उसका पाँचवा भाग एक हस्त (हाथ) का माप माना गया है। इस प्रकार यह माप यजमान के शरीर के अनुसार होगा, शासकीय या राजकीय मापसूत्र के अनुसार नहीं। अत: इस माप में प्रति व्यक्ति अन्तर होना भी स्वाभाविक है, जो कि यज्ञकर्ता को फलप्राप्ति हेतु आवश्यक भी है। यजमान के माप के अनुसार निश्चित हस्तप्रमाण से ही मण्डप , कुण्ड , ध्वज, पताका, तोरण, द्वार आदि के परिमाण को नापा जाता है। एक हाथ का मान चौबीस (24) अङ्गुल के बराबर होता है। इस प्रकार एक अङ्गुल का प्रमाण एक हाथ का चौबीसवाँ भाग होता है, तत्पश्चात उस अङ्गुल का अष्टमांश यव होता है। यव का अष्टमांश यूका तथा यूका का अष्टमांश लिक्षा या लीक्षा होता है। लिक्षा का अष्टमांश वालाग्र, वालाग्र का अष्टमांश रथरेणु तथा रथरेणु का अष्टमांश मुट्ठी बाँधे हुए हाथ की जो लम्बाई है, उसको रत्नि (21 अङ्गुल) कहते है। कोहनी से लेकर मध्यमा/तर्जनी पर्यन्त यह माप "अरत्नि (22 अङ्गुल) कहलाती है।

यहाँ वर्णित माप की इकाइयाँ निम्न हैं :-

8 परमाणु	=	1 त्रसरेणु	-	8 त्रसराणु	=	1 रथरेणु
8 रथरेणु	=	1 वालाग्र	-	8 वालाग्र	=	1 लीक्षा
8 लीक्षा	=	1 यूका	-	8 यूका	=	1 यव
8 यव	=	1 अङ्गुल	-	24 अङ्गुल	=	1 हाथ
21 अङ्गुल	=	1 रत्नि	-	22 अङ्गुल	=	1 अरत्नि

मण्डप हेतु भूमिपरीक्षण :-

स्वयं की भूमि पर ही यज्ञादि कर्म करने चाहिए तथापि अन्य तीर्थ अथवा अन्य किसी स्थान पर यज्ञादि कर्म कर रहे है तो उस भूमि का उचित शुक्ल भूस्वामी को दे देना चाहिए अन्यथा यज्ञादि का फल भूस्वामी को ही मिलता है। भूमि का परीक्षण करने हेतु चयनित भूमि में एक वर्ग-हाथ का चतुष्कोण खात बनाकर उस गर्त को सूर्यास्त के समय जल से भर देना चाहिए। यदि दूसरे दिन प्रात: काल उस गड्ढे में जल शेष रह जाये अथवा वह भूमि गीली रह जाये तो वह शुभलक्षण होता है। यदि कीचड़युक्त भूमि रहे तो मध्यफलदायी होता है । यदि उसका जल पूर्णरूप से सूख जाये तो उसमें दरारे पड़ जाये तो उस भूमि को अशुभ फलदायी कहा जाता है। यथा -

श्वभ्रं हस्तमितं खनेदिह जलं पूर्णं निशास्ये न्यसेत्।

प्रातर्दृष्टजलं स्थलं सदजलं मध्यं त्वसत्स्फाटितम्॥

नोट :- रेगिस्तान वाले प्रदेशों में यह विधि उपयोगी नही हैं, अत: क्षेत्रविशेष का ध्यान रखना चाहिए।

1.4 यज्ञकर्म में मण्डप -निर्माण हेतु शुभ भूमि के लक्षण :-

1. सुगन्ध युक्त भूमि ब्राह्मणी, रक्तगन्ध वाली भूमि क्षत्रिया, मधुगन्ध वाली भूमि वैश्या, मद्यगन्ध वाली भूमि शूद्राभूमि कही गयी है, अम्लरस युक्त वैश्या, तिक्त रस युक्त शूद्रा, मधुरसयुक्त भूमि ब्राह्मणी और कड़वी गन्ध वाली भूमि क्षत्रियवर्णा होती है।

2. ब्राह्मणी भूमि सुखकारी, क्षत्रिया राज्यसुख प्रदाता, वैश्याभूमि धनधान्य देने वाली और शूद्रा भूमि त्याज्य होती है।

3. ब्राह्मण को सफेद भूमि, क्षत्रिय को लालभूमि, वैश्य को पीली भूमि, शूद्र को काली भूमि एवं अन्यवर्णों के लिए मिश्रित रङ्ग की भूमि शुभ होती है।

4. ब्राह्मण आदि चारों वर्णों के लिए क्रम से घी, रक्त, अन्न और मद्यगन्ध वाली भूमि शुभ होती है।

5. पूर्व दिशा की ओर भूमि ढालदार हो तो धनप्राप्ति, अग्निकोण में अग्निभय, दक्षिण में मृत्यु, नैऋर्त्य में धनहानि, पश्चिम में पुत्रहानि, वायव्य में परदेश में निवास, उत्तर में धनप्राप्ति, ईशान में विद्यालाभ होता है। भूमि में बीच में गड्ढा हो तो वह भूमि कष्टदायक होती है।

6. ईशान कोण में भूमि ढालदार हो तो यज्ञकर्ता को धन, सुख की प्राप्ति, पूर्व में हो तो वृद्धि, उत्तर में हो तो धनलाभ, अग्निकोण में हो तो मृत्यु तथा शोक, दक्षिण में हो तो गृहनाश, नैऋर्त्य में धनहानि, पश्चिम में मानहानि, वायव्य में मानसिक उद्वेग होता है।

7. ब्राह्मण को उत्तर, क्षत्रिय को पूर्व, वैश्य को दक्षिण और शूद्र को पश्चिम की ओर ढालयुक्त भूमि शुभ होती है। मतान्तर से ब्राह्मणों के लिए सभी प्रकार की ढ़ालयुक्त भूमि शुभ होती है। अन्य वर्णो के कोई नियम नहीं है।

8. पूर्व दिशा में ऊँची भूमि पुत्र का नाश करती है। अग्निकोण में ऊँची भूमि धन देती है। अग्निकोण में नीची भूमि धन की हानि करती है। दक्षिणदिशा में ऊँची भूमि स्वास्थ्यप्रद होती है। नैऋर्त्यकोण में ऊँची भूमि लक्ष्मीदायक होती है। पश्चिम में ऊँची भूमि पुत्रप्रद होती है। वायव्यकोण में ऊँची भूमि द्रव्य की हानि करती है। उत्तरदिशा में ऊँची भूमि स्वास्थ्यप्रद तथा ईशानकोण में ऊँची भूमि महाक्लेशकारक होती है।

9. हल के फाल से भूमि को खोदने पर यदि लकड़ी मिले तो अग्निभय, ईंट मिले तो धनप्राप्ति , भूसा मिले तो धनहानि, कोयला मिले तो रोग, पत्थर मिले तो कल्याणकारी, हड्डी मिले तो कुलनाश, सर्प या बिच्छू आदि जीव मिले तो वे स्वयं ही भय का पर्याय है ।

10. हल के फाल से भूमि को खोदने पर यदि लकड़ी मिले तो अग्निभय, ईंट मिले तो धनप्राप्ति, भूसा मिले तो धनहानि, कोयला मिले तो रोग, पत्थर मिले तो कल्याणकारी, हड्डी मिले तो कुलनाश, सर्प या बिच्छू आदि जीव मिले तो वे स्वयं ही भय का पर्याय है।

11. फटी हुई से मृत्यु, ऊषर भूमि से धननाश, हड्डीयुक्त भूमि से सदा क्लेश, ऊँची-नीची भूमि से शत्रुवृद्धि, श्मशान जैसी भूमि से भय, दीमकों से युक्त भूमि से सङ्कट, गड्ढों वाली भूमि से विनाश और कूर्माकार अर्थात् बीच में से ऊँची भूमि से धनहानि होती है।

12. आयताकार भूमि (जिसकी दोनों भुजाएँ बराबर एवं चारों कोण सम हो) पर निवास सर्वसिद्धिदायक, चतुरस्रभूमि (जिसकी लम्बाई चौड़ाई समान हो) पर यज्ञादि शुभकर्म करने से धन का लाभ, गोलाकार भूमि पर यज्ञादि शुभकर्म करने से बुद्धिबल की वृद्धि , भद्रासन भूमि पर सभी प्रकार का कल्याण, चक्राकार भूमि पर दरिद्रता, विषम भूमि पर शोक, त्रिकोणाकार भूमि पर राजभय, शकट अर्थात् वाहन सदृश भूमि पर धनहानि, दण्डाकार भूमि पर पशुओं का नाश , सूप के आकार की भूमि पर गायों का

नाश, जहाँ कभी गाय या हाथी बंधते हो वहाँ निवास करने से पीड़ा तथा धनुषाकार भूमि पर निवास करने घोर सङ्कट आता है।

13. भूमि खोदते समय यदि वहाँ पत्थर मिल जाये तो धन एवं आयु की वृद्धि होती है, यदि ईंट मिले तो धनागम होता है। कपाल, हड्डी, कोयला, बाल आदि मिले तो रोग एवं पीड़ा होती है।

14. यदि गड्ढे में से पत्थर मिले तो स्वर्णप्राप्ति, ईंट मिले तो समृद्धि, द्रव्य से सुख तथा ताम्रादि धातु मिले तो सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है।

15. भूमि खोदने पर चिऊँटी अर्थात् दीमक, अजगर निकले तो उस भूमि पर निवास नहीं करे। यदि वस्त्र, हड्डी, भूसा, भस्म, अण्डे, सर्प निकले तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है। कौड़ी निकले तो दुःख और झगड़ा होता है, रुई विशेष कष्टकारक है। जली हुई लकड़ी निकले तो रोगकारक होती है, खप्पर से कलहप्राप्ति, लोहा निकले तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है, इसीलिए कुप्रभावों से बचने के लिए इन सभी पक्षों पर विचार करना चाहिए।

1.5 यज्ञकर्म में मण्डप -निर्माण हेतु दिशा का चयन करते समय राहुमुख का ज्ञान :

दिशा के चयन हेतु यथोपलब्ध सामग्री यथा - दिशा सूचक यन्त्र (कम्पास) से दिशा का निर्णय करे।

1.- देवालय के निर्माण में मीन-मेष-वृष का सूर्य हो तो ईशानकोण में, मिथुन-कर्क-सिंह का सूर्य हो तो वायव्यकोण में कन्या-तुला-वृश्चिक का सूर्य हो तो नैऋर्यकोण में तथा धनु-मकर-कुम्भ का सूर्य हो तो अग्निकोण में राहु का मुख रहता है।

2. - गृहनिर्माण में सिंह-कन्या-तुला का सूर्य हो तो ईशानकोण में, वृश्चिक-धनु-मकर का सूर्य हो तो वायव्यकोण में, कुम्भ-मीन-मेष का सूर्य हो तो नैऋत्यकोण में तथा वृष-मिथुन-कर्क का सूर्य हो तो अग्निकोण में राहु का मुख होता है।

3. - जलाशय के निर्माण में मकर-कुम्भ-मीन का सूर्य हो तो ईशानकोण में, मेष-वृष-मिथुन का सूर्य हो तो वायव्यकोण में, कर्क-सिंह-कन्या का सूर्य हो तो नैऋत्यकोण में तथा तुला-वृश्चिक-धनुराशि का सूर्य हो तो अग्निकोण में राहु का मुख रहता है।

राहु के मुख से पिछले भाग में भूमि शोधन के लिए खात अर्थात् खड्ढा खोदना चाहिए । उदाहरण के लिए राहुमुख ईशानकोण में हो तो खड्ढा आग्नेयकोण में खोदना चाहिए। वर्तमान में यही विधि प्रचलित है।

1.6 भू-शुद्धि :-

1. **दहनकर्म** जिस भूमि पर यज्ञादि कर्म हेतु मण्डप निर्माण करना हो, उसके खर-पतवार, काँटे आदि नष्ट करने के लिए उसे यथासम्भव प्रक्रिया से शुद्ध करना चाहिए। यज्ञादि कर्म हेतु चयननित भूमि पर यदि वृक्ष काटने पड़े (जहाँ तक सम्भव हो वृक्षादि जीवों पर हिंसा नहीं करे) तो प्रार्थनापूर्वक वृक्ष काटने चाहिए तथा जितने वृक्ष काट रहे हैं, उनसे अधिक यथासंख्या में वृक्षारोपण करना चाहिए।

यानीह भूतानि वसन्ति तानि, बलिं गृहीत्वा विधिवत्प्रयुक्तम्।

अन्यत्र वासं परिकल्पयन्तु, क्षमन्तु ते चाद्य नमोऽस्तु तेभ्य:।।

अर्थात् जो प्राणी इस वृक्ष में निवास करते है वे मेरे द्वारा दी गयी बलि अथवा भोग को ग्रहण करके अन्यत्र निवास करें, ऐसा कहते हुए नमस्कार करे। आप सभी प्राणी मुझे क्षमा करे क्योंकि मैं इस वृक्ष करे काट रहा हूँ।

2. **खननकर्म :-** शुद्धि के पश्चात् भूमि को समतल करने हेतु कुदाल, फावड़ा, हल आदि से खुदवायें, जिससे भूमि चौरस तथा समतल हो जाये।

3. **सम्प्लवानकर्म :-** शुद्धि, खनन के पश्चात् भूमि को जल से पूरित कर देवे, जिससे एक तो जलप्लवन के कारण भूमि के ढलान का ज्ञान हो जायेगा तथा भूमि छिद्र एवं विवरों से रहित हो जायेगी, तत्पश्चात् लीपने में सुविधा होगी।

दहन-खनन-सम्प्लवन आदि क्रियाओं के पश्चात् स्थूलरूप से भूमि समान हो जायेगी, परन्तु ग्रन्थकार के अनुसार उसे "समानां मुकुरजठरवत् बनाना चाहिए अर्थात् जिस प्रकार से दर्पण सपाट, चिकना एवं समतल होता है, उसी प्रकार भूमि को भी बना देना चाहिए ।

उक्त प्रकार से भूमि की परीक्षा करके भगवान गणेश, भगवती दुर्गा, क्षेत्रपाल तथा आठों दिग्पालों की पुष्प, धूप तथा बलि आदि पूजन सामग्री से पूजा करे।

1.7 मण्डप निर्माण :-

मण्डप की भूमि को सामान्य भूमि से एक हाथ या आधा हाथ प्रमाण ऊँचा रखना चाहिए क्योंकि यज्ञशाला को सामान्य भूमि से ऊँचा न रखने पर उसकी पवित्रता बाधित हो सकती है। देवप्रतिष्ठा आदि कर्मों में यज्ञमण्डप के अतिरिक्त अन्य मण्डप भी (अधिवासनमण्डप , स्नानमण्डप आदि) बनाने चाहिए। अन्य मण्ड़पों को इतने अन्तर से बनाये कि वह अन्तर मण्डप की ऊँचाई से न्यून न हो अर्थात् यदि मण्डप की ऊँचाई पन्द्रह (15) हाथ हो तो कम से कम पन्द्रह हाथ के अन्तर से ही अन्य मण्डप बनाना चाहिए। यथा -

मण्ड़पान्तरमुत्सृज्य कर्तव्यं मण्ड़पान्तरमïं। - वास्तुशास्त्र

यदि स्थान का अभाव हो तो उस स्थिति में एक मण्डप के समीप ही अन्य मण्ड़ल बनाने का विधान है। यथा -

गृहे देवालये वापि सङ्कीर्णं यत्र दृश्यते।

तत्र कार्यं मण्डप ज्ञै: संश्लिष्टं मण्डप द्वयम ï। - रुद्रयामल

1. **मदनरत्न के अनुसार मण्डप की दिशा :-** अन्य मण्ड़पों की दिशा का निर्धारण महामण्डप से चारों ओर करना चाहिए। महामण्डप से इनकी ऊँचाई भी कम रखनी चाहिए। इन सहायक मण्ड़पों की ऊँचाई तो वितस्तिमात्र अर्थात् एक बित्ताभर ही पर्याप्त होती है। महामण्डप या प्रधान मण्डप या प्रधान मण्डप मयदि घर के समीप न बनाना हो तो उसे घर के पूर्व या उत्तर की ओर बनाना उचित है।

2. **मण्डप का माप एवं फल :-** 10 या 12 हाथ का मण्डप अधम, 12-14 हाथ का मण्डप मध्यम, 16-18 हाथों का मण्डप उत्तम होता है। यदि तुलादान करना हो तो बीस हाथ का मण्डप बनाना चाहिए। पञ्चकुण्ड़ी या नवकुण्ड़ी होम एवं सभी कर्मों में मण्ड़पों का क्षेत्रफल आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार निश्चित करना चाहिए। शीतकाल में अपेक्षाकृत छोटे मण्डप में कार्य कर सकते है, परन्तु ग्रीष्मकाल में अग्नि का ताप असह्य हो जाता है, अत: ग्रीष्मऋतु में तो यथासम्भव मण्डप विशाल ही होना चाहिए।

3. **मण्डप भूमि के सम त्रिभाग :-** मण्डप के उत्तर-दक्षिण तथा पूर्व-पश्चिम में तीन-तीन सूत्र देकर समान विभाग के वर्गाकार नौ खण्ड़ बना लेने चाहिए। इसके लिए मण्डप की एक भुजा के माप का सूत्र ले

तथा उसे तिहरा करने पर एक खण्ड़ की माप होगी, उससे ईशानकोण से लेकर तीन बार नापकर अग्निकोण तक पहुँचे। अग्निकोण से नैऋत्य कोण तक तीन सूत्र होंगे। वायव्यकोण से ईशानकोण तक तीन सूत्र की भूमि के नौ बड़े समान वर्गाकार बना ले। जहाँ पर उन खण्ड़ों के कोण पड़ते हो, वहाँ पर स्तम्भ गाड़ देवे। इस प्रकार चार स्तम्भ मध्यभाग में तथा शेष बारह स्तम्भ बाहर की ओर गाड़े जायेंगे। यदि मण्डप पन्द्रह हाथ का होगा तो स्तम्भों की परस्पर दूरी पाँच हाथ पर रहेगी। अठारह (18) हाथ के मण्डप में स्तम्भों की परस्पर दूसरी छः-छः हाथ तथा 21 हाथ के मण्डप में सात-सात हाथ रहेगी।

4. **द्वारनिर्माण :-** किसी भी प्रकार का मण्डप हो, उसके दिगन्तराल (पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर) में चार द्वारों का निर्माण करना चाहिए। इन द्वारों की चौड़ाई दो हाथ होती है। मध्यम मण्डप में इसे चार अङ्गुल तथा उत्तम मण्डप में आठ (8) अङ्गुल बढ़ा देना चाहिए। अधम मण्डप में दो हाथ का चौड़ा द्वार, मध्यम मण्डप में दो हाथ चार अङ्गुल का चौखटयुक्त द्वार तथा उत्तम मण्डप में दो हाथ आठ अङ्गुल का द्वार होना चाहिए। द्वार की ऊँचाई तो मण्डप के उच्छ्राय के तुल्य ही होनी चाहिए क्योंकि मण्डप के बाह्य स्तम्भ पञ्चहस्तप्रमाण के होते है तथा एक हाथ भूमि में गड़े रहते है।

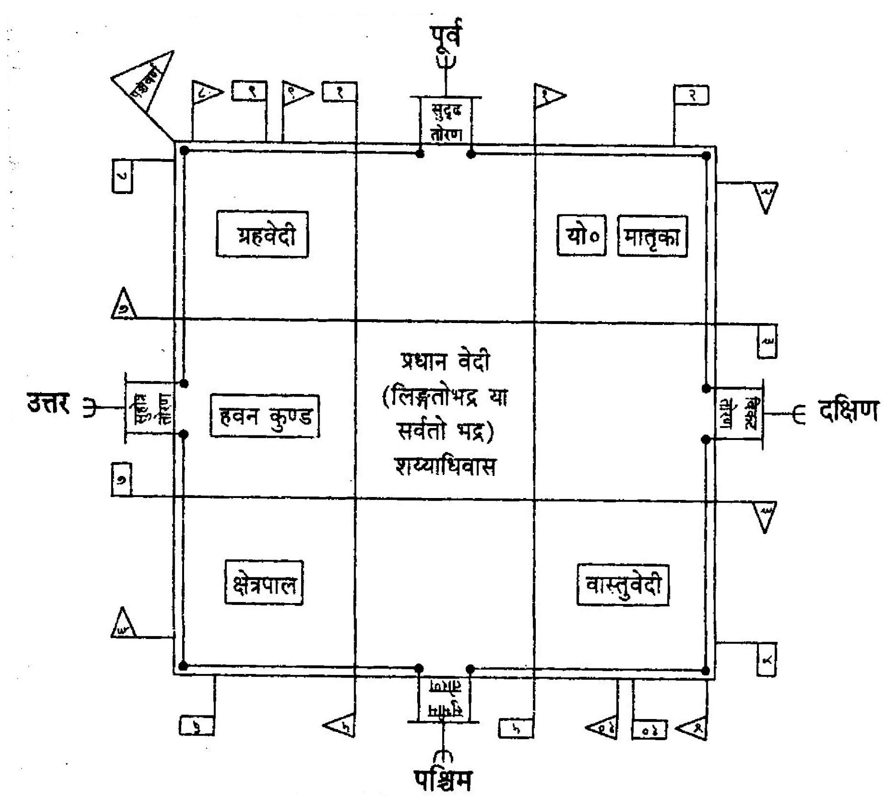

5. **स्तम्भनिवेशन :-** मध्यवेदी के चारों कोणों पर चार स्तम्भ आठ हाथ परिमाण गाड़ने चाहिए। स्तम्भों की ऊँचाई का पञ्चमांश अर्थात् (8/5) भाग (एक हाथ तथा चौदह अङ्गुल) भूमि में गाड़ देवे तथा स्तम्भों के ऊपर चूड़ा निकाल देवे, ये चार स्तम्भ अन्त:स्तम्भ कहलाते है।

स्तम्भों की स्थापना, शिलान्यास, सूत्रयोजना, कील (शङ्कु) निवेशन, खननकार्य आदि का प्रारम्भ अग्निकोण से प्रदक्षिणक्रम से करे अर्थात् प्रथम अग्निकोण से प्रारम्भ करे, तत्पश्चात् नैऋत्यकोण तक जाये, फिर वायव्य तक तथा अन्त में ईशानकोण होते हुए अग्निकोण होते हुए प्रदक्षिणा पूरी करे, इसे ही प्रदक्षिणक्रम कहते है। बाहर के द्वादश स्तम्भ स्थापित करे तथा भीतर के चार स्तम्भ इसी क्रम में गाड़ने चाहिए। प्रथम क्रम में बाहर के स्तम्भ स्थापित करे, तत्पश्चात् उनकी स्थापना के बाद भीतरी चार स्तम्भों को गाड़ना चाहिए। भीतर के चार स्तम्भों में चूड़ा होना आवश्यक है क्योंकि उनमें वलिकाओं के छिद्र स्थापित किये जाते है।

6. **बाह्य स्तम्भ :-** बाहर की ओर गाड़े जाने वाले बारह स्तम्भ पाँच हाथ प्रमाण के हो तथा उनका भी पञ्चमांश (एक हाथ) भूमि में निविष्ट करना चाहिए। यथा -

पञ्चमांशो खनेद्ा् भूमौ सर्वसाधारण विधि:।। - वास्तुशास्त्र

7. **यज्ञशाला में उपयोगी वृक्ष :-** स्तम्भ-निर्माणादि में यज्ञीय वृक्षों का प्रयोग ही समीचीन होता है, जिसमें बाँस, सुपारी, पलाश, फल्गु (अञ्जीर), वट, प्लक्ष (पाकर), अश्वत्थ (पीपल), विकङ्कत, उदुम्बर, विल्व तथा चन्दन का प्रयोग श्रेष्ठ है।

8. **यज्ञशाला में त्याज्य काष्ठ :-** जो वृक्ष घर में लगकर टूट गया हो, स्वत: सूख गया हो, टेढ़ा, पुराना तथा अपवित्र स्थान पर उत्पन्न हो, वह स्तम्भकर्म में त्याज्य है।

9. **वलिकाओं की संख्या :-** ऊपरवर्णित वलिकाओं की संख्या सोलह स्तम्भ के मण्डप हेतु निर्धारित की गयी है। जहाँ और बड़े विशाल मण्डप बनते है, वहाँ स्तम्भों की अधिकता के साथ वलिकायें भी अधिक लगती है, अठाइस हाथ के मण्डप में भूमि के पाँच विभाग होते है। अत: 5 & 5 = 25 खण्ड बनते हैं, जिनमें छत्तीस स्तम्भ लगते है तथा बहत्तर वलिकायें लगती है। इससे अधिक बड़े मण्डप में जो कि पचहत्तर हाथ तक हो सकता है, उसमें सात विभाग होने से 7 & 7 = 49 विभाग हो जाते है तथा उनमें एक सौ अ_ाईस वलिकायें संयोजित की जाती है एवं स्तम्भों की संख्या चौसठ हो जाती

है। पचहत्तर हाथ से अधिक बड़े मण्डप में दश विभाग होते है, अत: 10 & 10 = 100 खण्ड बनते है तथा 11 & 11 = 121 स्तम्भ लगते है, जिसमें दो सौ चालीस वलिकायें लगती है।

10. **वलिका स्थापन विधि :-** सर्वप्रथम मध्यवेदी के चारों कोणों में जो चार बड़े स्तम्भ है, उनके चूड़ा के ऊपर दोनों पार्श्वों में छिद्रयुक्त वलिकाकाष्ठ लगाये। ये चार वलिका दोनों ओर छिद्र वाली होनी चाहिए, जिनके छिद्रों में चूड़ास्तम्भ प्रविष्ट किये जा सके, तत्पश्चात् इसी भाँति द्वादश स्तम्भों के दोनों ओर बारह वलिकाकाष्ठ लगानी चाहिए। इस प्रकार कुल सोलह वलिकाकाष्ठ लग चुके होंगे और चार भीतरी स्तम्भ आपस में संयुक्त हो चुके होंगे, शेष द्वादश स्तम्भ भी परस्पर संयुक्त दिखाई देंगे, इसमें सोलह वलिका लग चुकी होंगी।

तत्पश्चात् भीतर तथा बाहर के स्तम्भों को भी परस्पर संयुक्त करना है, अत: दो-दो वलिकायें प्रत्येक दिशा से मध्य के बाह्य स्तम्भों से लेकर भीतरी स्तम्भ तक संयोजित करे तथा कोणों वाले स्तम्भों से भी भीतर के स्तम्भों को संयोजित करे तब बारह वलिकायें और लग चुकी होंगी। इस प्रकार वलिकाकाष्ठों की संख्या 16 + 12 = 28 हो जायेगी। कोने वाली चार वलिकायें बड़ी होती है, जिन्हें "कर्ण कहते हैं। अब चार बड़ी वलिकायें लेकर भीतर के चार बड़े स्तम्भों के ऊपर से मध्यवेदी के मध्यभाग में ऊँचाई पर शिखर बनाने के लिए लगानी चाहिए। इस प्रकार कुल बत्तीस वलिकाकाष्ठों का संयोजन स्तम्भों के ऊपर करते है। कुछ विद्वान वलिकाओं की संख्या छत्तीस कहते हैं, तात्पर्य यह है कि जितनी वलिकाओं एवं अन्य काष्ठों से मण्डप सुदृढ़ हो जाये, उतनी संख्या में काष्ठों का प्रयोग करना चाहिए।

11. **मण्डप का आच्छादन :-** मण्डप के ऊपरी भाग के मध्य में शिखर का निर्माण करे तथा उसे बाँस एवं कट (कड़वी, सरपत, कुश आदि) से आच्छादित करे, केवल चारो द्वारों को आच्छादित न करे। इस मण्डप एवं स्तम्भों को वस्त्रों से भी वेष्टित करे। नारियल के पत्तों, कदलीस्तम्भों तथा पञ्चपल्लवादि से भी मण्डप को सुशोभित करना चाहिए। हयग्रीव पाञ्चरात्र के अनुसार मण्डप में दर्पण, चामर, घट आदि का उपयोग करने से शोभा बढ़ती है। मण्डप की शोभा बढ़ाने के लिए देवता, अवतार, महापुरुष एवं धार्मिक गुरुओं के चित्रों को मण्डप में लगाया जा सकता है।

12. **तोरणद्वार :-** मण्डप के चारों दिशाओं में पूर्वादि क्रम से चार द्वारों के बाहर तोरणों का निर्माण करना चाहिए। इन तोरणों का निर्माण द्वार से बाहर की ओर हटकर एक हाथ के अन्तराल से करना चाहिए, तोरण बाहरी द्वार होता है। इन तोरणों में प्रत्येक दिशा में पृथक्-पृथक् वृक्ष के काष्ठ का उपयोग होता है।

पूर्व दिशा में वट अथवा पीपल, दक्षिण में जन्तुफल (ऊमर), पश्चिम में पीपल अथवा पाकर, उत्तरदिशा में प्लक्ष अथवा वट के काष्ठ का प्रयोग करना चाहिए। वर्तमान परिस्थिति में जिस प्रदेश में जो भी काष्ठ उपलब्ध हो, उसी का प्रयोग करे। देवता तोरण के रूप में यज्ञमण्डप के बाहर संस्थित होकर विघ्नों का विनाश तथा यज्ञ की रक्षा करते है, अत: पूर्वादि दिशाओं में न्यग्रोधादि का प्रयोग किया जाता है। तोरण की लकड़ी टेढ़ी-मेढ़ी नहीं होनी चाहिए।

मण्डप द्वार से बाहर एक हाथ की दूरी पर यदि अधम मण्डप हो तो पाँच हाथ ऊँचा, मध्यम मण्डप हो तो छ: हाथ तथा उत्तम मण्डप हो तो सात हाथ ऊँचा मण्डप बनाना चाहिए। इनकी चौड़ाई अधम मण्डप में दो हाथ, मध्यममण्डप में दो हाथ तथा छ: अङ्गुल अर्थात् सवा हाथ, उत्तम मण्डप में ढाई हाथ (2 हाथ 12 अङ्गुल) रखनी चाहिए। प्रत्येक तोरण में तीन काष्ठ लगते है। पार्श्व में दो स्तम्भ तथा ऊपर एक वलिका लगती है। इन स्तम्भों की मोटाई द्वारों की भाँति दस अङ्गुल की होनी अपेक्षित है। इन तोरणस्तम्भों को भी पञ्चमांश भूमि में स्थापित करना चाहिए। तोरणस्तम्भ को पाटनेवाली चौड़ी काठ की पटिया (तख्ता / पटना / पाटना) को फलक कहते है। फलक की लम्बाई तोरणस्तम्भ की ऊँचाई से आधी हो अर्थात् यदि तोरण पाँच हाथ का ऊँचा है तो ढाई हाथ का फलक होना चाहिए। उस फलक में दोनों ओर छिद्र बनवाना चाहिए तथा छिद्रों में तोरण-स्तम्भों के चूड़ों को प्रविष्ट कर देना चाहिए। फलकों के मध्यभाग में ऊपर की ओर छोटे छेद में काष्ठनिर्मित कील लगा देनी चाहिए, जिस पर वैष्णव याग में शङ्खादि लगा दिये जाते है तथा शैवयाग में कील के स्थान पर काष्ठनिर्मित त्रिशूल लगाये जाते है। उन कीलों का चतुर्थांश फलक गाड़ना चाहिए।

13. शैव एवं वैष्णव यज्ञ के तोरण द्वारों पर आयुध, ध्वज एवं पताकादि का स्थापन :-भगवान् शङ्कर, श्रीगणेशजी एवं शक्ति (देवी) से सम्बन्धित यज्ञों में त्रिशूल लगाये जाते है। अधम मण्डप में शूल नौ (9) अङ्गुल लम्बा तथा उसका चतुर्थांश (सवा 2 अङ्गुल) चौड़ा हो, उसका दो अङ्गुल भाग फलक में गाड़ना चाहिए। यदि मध्यममण्डप हो तो शूल की लम्बाई दो अङ्गुल बढ़कर ग्यारह अङ्गुल हो जाती है तथा चौड़ाई पौने तीन अङ्गुल (2 अङ्गुल 6 यव) हो जाती है। उसे एक अङ्गुल बढ़ाकर अर्थात् तीन अङ्गुल भाग फलक में गाड़ना चाहिए। उत्तर तोरण में त्रिशूल दो अङ्गुल और लम्बा होकर तेरह अङ्गुल का हो जाता है तथा सवा तीन अङ्गुल (3 अङ्गुल 2 यव) उसकी चौड़ाई होती है एवं उसका चार अङ्गुल भाग फलक में प्रविष्ट रहता है। श्रीविष्णु, श्रीराम आदि से सम्बन्धित यज्ञों में पूर्वद्वार के तोरण पर शङ्ख, दक्षिणी तोरण पर चक्र, पश्चिमी तोरण पर गदा तथा उत्तरी तोरण पर पद्म लगाते है। उन कीलों की मान-वृद्धि विष्णुयाग में एक-एक अङ्गुल होती है अर्थात् अधम मण्डप में दशाङ्गुल, मध्यममण्डप में द्वादशाङ्गुल तथा उत्तममण्डप में चौदह अङ्गुल होती है

। उनकी चौड़ाई क्रमश: सवा तीन, पौने चार तथा सवा चार होती है । साथ ही फलक में प्रविष्टि क्रमश: तीन, चार तथा पाँच अङ्गुल होती है। स्तम्भों के मूल में दो-दो कलशों की स्थापना करना भी अभीष्ट है ।

14. ध्वजा :-ध्वजा की लम्बाई पाँच हाथ तथा चौड़ाई दो हाथ होनी चाहिए। इनके रंग पीत, रक्त (लाल/अरुण), कृष्ण, नील, श्वेत, असित (धूम्र), श्वेत, सित - ये पूर्वादि दिशाओं के दिक्पालों के अनुसार हो तथा इनको दश हाथ लम्बे बाँस पर लगाना चाहिए ।

वस्त्रादि की न्यूनता के कारण ध्वजा-प्रमाण एक हाथ लम्बाई तथा आधा हाथ चौड़ाई का भी रख सकते है । यथा -

सर्वेऽथवा बाहुमिता ध्वजा: स्यु: सूर्याङ्गुलैरायतिका दशैव।

पक्षे यदा दिक्प्रमितास्तदा तु रन्ध्रस्तु रक्तो दशमो सितश्च।।

ध्वजारोपण एक आवश्यक कर्म है क्योंकि ध्वजारहित मण्डप में जो भी माङ्गलिक कृत्य किये जाते है, वे सभी निष्फल हो जाते है। यथा -

ध्वजेन रहिते ब्रह्मनमण्डपे तु वृथा भवेतï।

पूजा होमादिकं सर्वं जपाद्यं यत्कृतं बुधै:।। - पाञ्चरात्र

15. दिशाओं के अनुसार वर्ण व ध्वजाधीश (इन ध्वजाओं पर दिक्पालों के वाहनों का चित्र भी बनाकर इन्हें स्थापित करना चाहिए।) :-

	दिशा	**वर्ण**	**ध्वजाधीश**	**वाहन**
1.	पूर्व	पीत	इन्द्र	हाथी
2.	अग्निकोण	अरुण (लाल)	अग्नि	बकरा
3.	दक्षिण	कृष्ण	यम	महिष

4.	नैऋर्त्य	नीला	निऋर्ति	सिंह
5.	पश्चिम	श्वेत	वरुण	मत्स्य/मकर
6.	वायव्य	असित (धूम्र)	वायु	हिरण
7.	उत्तर	श्वेत	सोम	अश्व
8.	ईशान	श्वेत	शिव	वृषभ
9.	ऊर्ध्व	श्वेत	ब्रह्मा	हंस

(ईशान तथा पूर्व के मध्य में)

10.	अध:	श्वेत	अनन्त	गरुड़

(विष्णु के लिए नैऋर्त्य और पश्चिम के मध्य में)

16. पताका निवेशन :- ध्वजा-निवेशन के पश्चात् पताका-निवेशन भी करना चाहिए। पताकायें भी लोकेशों (दिक्पालों) के वर्णों के अनुसार हो, जिनकी दीर्घता सात हाथ तथा आयति (चौड़ाई) एक हाथ होनी चाहिए। उन पताकाओं में लोकेशों के आयुधों के चित्र बनाकर उन्हे दिक्कर (10 हाथ) लम्बे बाँस के शीर्ष पर लगाकर उन बाँसों का पञ्चमांश (10/5) भूमि में गाड़ देना चाहिए ।

17. दिशाओं के अनुसार वर्ण व पताकाओं के स्वामी :-

दिशा	ध्वज स्थिति	पताका स्थिति
1. पूर्वी द्वार	इन्द्र ऐरावत ध्वज उत्तरी शाखा	वज्र पताका दक्षिणी शाखा में
2. अग्निकोण	पूर्व की ओर अग्नि का उपध्वज	दक्षिण की ओर शक्तिपताका
3. दक्षिण	पूर्वशाखा में यम का महिषध्वज	पश्चिमीशाखा में दण्डपताका

4. नैऋर्त्यकोण	दक्षिण की ओर सिंहध्वज	उत्तर की ओर खड्गपताका
5. वायव्यकोण	पश्चिम की ओर मृगध्वज	उत्तरीशाखा में पाशपताका/मीनध्वज
6. वायव्यकोण	पश्चिम की ओर मृगध्वज	उत्तर की ओर अङ्कुशपताका
7. उत्तरी द्वार	शाखा में मृगध्वज	उत्तर की ओर अङ्कुशपताका
8. ईशानकोण	उत्तरी ओर वृषध्वज	पूर्व में त्रिशूलपताका
9. पूर्व+ईशान	उत्तर में ब्रह्मा का हंसध्वज	दक्षिण की ओर कमण्ड़लुपताका के मध्य
10. नैऋर्त्य	दक्षिण की ओर गरुड़ध्वज	उत्तर की ओर चक्रपताका पश्चिम के मध्य

18. महाध्वज :-इन सभी के अतिरिक्त एक महाध्वज भी लगाये, जिसके अग्रभाग पर किङ्किणी, चँवर आदि सुशोभित होने चाहिए। यह महाध्वज बत्तीस हाथ के बाँस पर लगाये, असमर्थता में इसे दस हाथ या सोलह हाथ या इक्कीस हाथ के बाँस पर प्रयोग करे। इस महाध्वज को विचित्र वर्ण (पञ्चवर्ण) रखे तथा उस पर उस देवता के वाहन का चित्र बनायें, जिसके निमित्त वह यज्ञादि कर्म किये जा रहे है। कहीं ध्वजा चौकोर तथा पताका त्रिकोण बनाते है तथा अनेक विद्वान ध्वजा को त्रिकोण तथा पताका को चतुष्कोण बनाते है। अत: इनके आकार स्थानीय लोकाचार से अनुसार बनायें।

मण्डप की सज्जा में ध्वजाओं, पताकाओं, वाहनों, आयुधों, स्तम्भों, मेखलाओं आदि में प्रयोग किये जाने वाले रङ्गों के गुणधर्म :-

1.8 कुण्ड -निर्माण एवं उनकी संज्ञायें

1. आहुति के अनुसारकुण्ड -निर्माण :-

आहुतिसंख्या	कुण्ड निर्माण का प्रमाण
1. 50-99	रत्निप्रमाणकुण्ड (21 अङ्गुल)

2. 100-999 अरत्निप्रमाणकुण्ड (22 अङ्गुल)

3. 1,000-9,999 एक हाथ प्रमाणकुण्ड (24 अङ्गुल)

4. 10,000-99,999 दो हाथ प्रमाणकुण्ड (34 अङ्गुल)

5. 1,00000-9,99,999 चार हाथ प्रमाणकुण्ड (48 अङ्गुल)

6. 10,00000-1,0000000 छः हाथ प्रमाणकुण्ड (58 अङ्गुल 6 यव)

7. एक करोड़ से अधिक आठ हाथ प्रमाणकुण्ड (67 अङ्गुल 7 यव) **इसका उपयोग कोटिहोम में होता है।**

अन्य मत :-1. एक लाख से दस लाख आहुति एक हाथ से दस हाथ प्रमाणकुण्ड (24 अङ्गुल से 240 अङ्गुल)

तत्पश्चात् दस लाख तक आहुतियों के लिए " लक्षैक वृद्ध्या अर्थात् एक-एक लाख पर एक-एक हाथ बढ़ा देना चाहिए। जितने लाख आहुतियाँ हो , उतने ही हाथ का कुण्ड बनाना चाहिए।

नोट :-हवनकुण्ड के आकार का निर्धारण आचार्य आहुति के अनुसार स्वविवेक से देशकाल परिस्थिति के अनुसार करे।

2. कुण्डों की संज्ञाएँ :-

यदि कुण्डों में पाँच या नौ मेखलायें बनायी जाये तो भी यज्ञमण्डप में अधिक अवकाश की आवश्यकता रहती है। विश्वकर्मप्रकाश के अनुसार विभिन्न मण्ड़पों की संज्ञायें निम्नलिखित है :-

1. पुष्पक	2. पुष्पभद्र	3. सुवृत्त	4. अमृतनन्दन	5. कौशल्या
6. बुद्धिसंकीर्ण	7. गजभद्र	8. जय	9. श्रीवृक्ष	10. विजय
11. वास्तुकोर्ण	12. श्रुतन्तधर	13. जयभद्र	14. विलास	15. संश्लिष्ट

16. शत्रुमर्दन	17. भाग्यपञ्च	18. नन्दन	19. भानु	20. मानभद्रक
21. सुग्रीव	22. हर्षण	23. कर्णिकार	24. पदाधिक	25. सिंह
26. यामभद्र	27. शत्रुघ्न			

3. माप के अनुसार कुण्ड फल :-

	दिशा	कुण्ड	फल
1.	पूर्व	चतुरस्रकुण्ड	कार्यसिद्धि
2.	आग्नेय	योनिकुण्ड	पुत्रप्राप्ति
3.	दक्षिण	अर्धचन्द्रकुण्ड	कल्याण
4.	नैऋर्त्य	त्रिकोणकुण्ड	शत्रुनाश
5.	पश्चिम	वर्तुलकुण्ड	शान्ति
6.	वायव्य	षडस्रकुण्ड	मारण या उच्छेद कर्म हेतु श्रेष्ठ
7.	उत्तर	पद्मकुण्ड	वर्षाकारक
8.	ईशान	अष्टास्रकुण्ड	आरोग्यदायक

ऊपर वर्णित कुण्डों के अतिरिक्त पञ्चास्र तथा सप्तास्र कुण्डों का निर्माण भी कुण्डार्कादि ग्रन्थों में निर्दिष्ट है। पञ्चास्रकुण्ड अभिचारकर्म की शान्ति करता है तथा सप्तकोणकुण्ड भूतदोष की शान्ति कर देता है।

4. कुण्डमानादि चक्र :-

हाथ	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	16
अङ्गुल	24	33	41	48	53	58	63	67	72	75	96

यव	0	7	4	0	5	6	3	7	0	7	0
यूका	0	4	4	0	2	2	7	0	0	1	0
लिक्षा	0	4	3	0	4	3	7	3	0	2	0
बालाग्र	0	3	4	0	6	2	2	5	0	0	0
रथ	0	5	5	0	4	6	0	6	0	4	0
त्र्यस्र	0	4	0	0	0	0	1	0	0	0	0

5. नवकुण्ड़ी यज्ञ हेतु कुण्डों की स्थिति :-आचार्य (प्रधान) कुण्ड /प्रधान वेदी/प्रधान पीठ कौन सा हो, यह संकेत नहीं है, परन्तु शारदातिलक एवं सिद्धान्तशेखर के अनुसार आचार्यकुण्ड को ईशान तथा पूर्व के मध्य में कहा गया है।

6. पञ्चकुण्ड यज्ञ :- पञ्चकुण्ड़ी पक्ष में चार कुण्ड आशाओं (मुख्य दिशाओं) में बनते है तथा पाँचवा ईशान में बनता है। पञ्चकुण्डी पक्ष में यदि यज्ञ हो तो आचार्य कुण्ड को मध्य में ही रखना चाहिए। प्रतिष्ठा में पूर्व एवं ईशान के मध्य भी रख सकते है, ऐसा भी कुछ मूर्धन्य विद्वानों का अभिमत है।

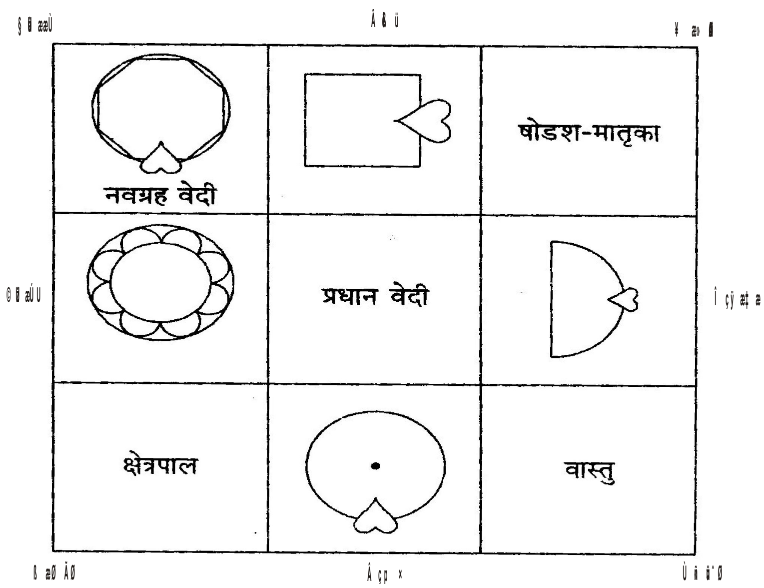

7. एककुण्डी यज्ञ :-

"चैकं यदा पश्चिमसोमशैवे अर्थात् एककुण्ड़ी पक्ष में उस कुण्ड को पश्चिम दिशा में अथवा उत्तर दिशा में ईशानकोण में बनाना चाहिए। देवप्रतिष्ठा में उत्तर दिशा में ही कुण्ड निर्माण करना चाहिए। अन्य में विकल्प से काम कर सकते है। इन कुण्डों में दिशाओं का निर्धारण मध्यवेदी से सवा हाथ की दूरी पर अभीष्ट दिशा में करना चाहिए (यहाँ मध्यवेदी से तात्पर्य मध्यखण्ड स है) । सामान्यत: नवकुण्ड़ी, पञ्चकुण्ड़ी तथा एककुण्ड़ी होम - ये तीन पक्ष है, परन्तु रूद्रयाग में एकादश कुण्ड भी बनाये जा सकते है तथा चतुष्कुण्ड़ी यज्ञ का विधान भी मिलता है। दानादिकार्यों में सप्तकुण्ड का विधान भी है ।

8. वर्णभेद एवं लिङ्गभेद से कुण्डों के आकार का विचार :-

1. ब्राह्मण के लिए चतुरस्र कुण्ड,

2. क्षत्रिय के लिए वृत्ताकार कुण्ड ,

3. वैश्यों के लिए अर्धचन्द्रकुण्ड ,

4. शूद्रों के लिए त्रिकोण कुण्ड ,

5. स्त्रियों के लिए योनिकुण्ड बनाना चाहिए ।

अथवा समस्त वर्णों के लिए चतुरस्र या वृत्ताकार कुण्ड का निर्माण करना सदैव फलदायी होता है ।

9. आचार्य कुण्ड :- जहाँ हवन प्रधानकर्म होगा, वहाँ कुण्ड मध्य में भी बनाते है। अत: नवकुण्ड़ी तथा पञ्चकुण्ड़ी पक्ष में आचार्यकुण्ड मध्य में ही बनता है, परन्तु दीक्षाकार्य एवं प्रतिष्ठा में आचार्यकुण्ड पूर्व-ईशान के मध्य में ही रहना चाहिए।

नवग्रह यज्ञ :- जब नवग्रहों का हवन किया जाये तो सूर्य की प्रधानता से मध्य में जो सूर्यकुण्ड बनेगा, वही आचार्यकुण्ड होगा । जहाँ मध्य में दो कुण्ड हो, वहाँ मध्यखण्ड़ के दो कुण्डों में दक्षिण दिशा का कुण्ड ही आचार्यकुण्ड होगा ।

शतमुख यज्ञ :- जहाँ एक सौ आठ (108) या इससे अधिक कुण्ड हो, वहाँ विशेष वचन से आचार्यकुण्ड होता है, जिनकी योनि पूर्व में होती है।

देवप्रतिष्ठा यज्ञ :- नवकुण्डीपक्ष में पूर्व-ईशान के मध्य आचार्यकुण्ड होता है, परन्तु पञ्चकुण्ड़ी से प्रतिष्ठा कराने पर आचार्यकुण्ड मण्डप के ईशानखण्ड़ में आचार्यकुण्ड रहता है। अन्य मत से ईशान तथा पूर्व का कुण्ड भी आचार्य कुण्ड स्वीकार किया गया है। प्रतिष्ठा में जहाँ एक ही कुण्ड बने, वहाँ उसे ईशान, पूर्व, उत्तर या पश्चिम में विकल्प से बनाया जाता है।

चतुष्कुण्ड़ी विधान :- यदि प्रतिष्ठाकार्य में चार कुण्डों का निर्माण हो तो पूर्व दिशा प्रधान होने से उसी का कुण्ड आचार्यकुण्ड होना चाहिए।

सप्तकुण्ड़ी विधान :- देवप्रतिष्ठा में यदि सप्तकुण्ड़ी विधान हो तो पूर्व दिशा का कुण्ड आचार्यकुण्ड होता है।

त्रयोदश कुण्ड :- इसमें प्रथम पञ्चकुण्ड़ी पक्ष की भाँति चारो मुख्य दिशाओं में एक-एक कुण्ड का निर्माण कर पञ्चम प्रधान (आचार्य) कुण्ड अग्निकोण में बनाते है। तदुपरान्त सभी आठों दिशाओं में एक-एक कुण्ड का निर्माण कर दिया जाता है। तन्त्रसार में यह विधान मिलता है।

1.9 कुण्ड निर्माण

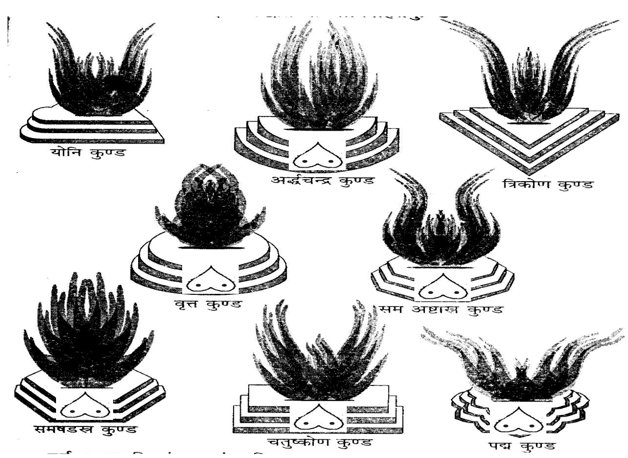

विधि

देशकाल परिस्थिति के अनुसार तथा हवन की मात्रा के अनुसार यदि आवश्यकता न हो तो कुण्ड न बनाकर स्थण्ड़िल ही बना लेना चाहिए। सुनहरी या लालरङ्ग की मिट्टी अथवा अन्य शुद्ध मिट्टी से एक हाथ लम्बा, एक हाथ चौड़ा तथा चार अङ्गुल ऊँचा एक समान चौकोर स्थण्ड़िल बना लेवे। स्थण्ड़िल में योनि भी बनानी चाहिए, परन्तु कण्ठ नहीं बनावे क्योंकि कण्ठ तो खात में ही बन सकता है।

1. कुण्ड हेतु खात :- खात से ही कुण्ड अपना रूप धारण कर पाता है इसलिए खात का भी स्वतन्त्र रूप में कुण्ड के अङ्गों में स्थान है। खात मेखला के साथ ही क्षेत्र के समान आकार एवं आयाम का होना चाहिए। अन्य विद्वानों ने मेखलाओं के बिना ही खात की गहराई निर्धारित की है।

कुण्ड मान के विभाजन :- कुण्ड मान के आठ भाग कीजिये तो चौबीस अङ्गुल में (24/8 = 3) तीन अङ्गुल त्रयात्मक एक भाग होता है।

कुण्ड खात :- भूमितल से पाँच भाग (5 & 3 = 15) अर्थात् पन्द्रह अङ्गुल नीचे तक खनन करना चाहिए और शेष तीन भागों में (3 × 3 = 9) अर्थात् नौ अङ्गुल की ऊँचाई तक तीन मेखलाओं का निर्माण करना चाहिए।

अ. - मेखलासहित खात :- खात की कुल गहराई एक हाथ के कुण्ड में एक हाथ (24 अङ्गुल) ही होनी चाहिए। मान लीजिये कि भूमि से मेखलाओं की ऊँचाई चार अङ्गुल हो तो कुण्ड की गहराई भूमि से नीचे की ओर बीस अङ्गुल की जाती है। इस प्रकार (20 + 4 = 24) कुल चौबीस अङ्गुल का खात मान लेते है, यदि मेखला का मान पाँच अङ्गुल हो तो भूमि से नीचे उन्नीस (19) अङ्गुल खात किया जाता है। छः अङ्गुल (6) मेखला की ऊँचाई हो तो अठारह (18) अङ्गुल का खात किया जाता है। छः अङ्गुल का मान लेते है। सात अङ्गुल की मेखला में भूमि से नीचे सत्रह (17) अङ्गुल का ही खात करते है। आठ अङ्गुल मेखला होने पर खातप्रमाण मात्र सोलह अङ्गुल होगा। नौ अङ्गुल की मेखला होने पर कण्ठ से नीचे खात का प्रमाण मात्र पन्द्रह अङ्गुल ही होता है। इस प्रकार कुल चौबीस अङ्गुल मान लेते है। मेखलासहित खात सूक्ष्म होम द्रव्यों के लिए होता है।

ब. - मेखलारहित खात :- खात करने पर चौबीस अङ्गुल की गहराई में मेखलाओं की ऊँचाई को सम्मिलित नहीं करते है। इस गहराई के ऊपर कण्ठ रहता है, तत्पश्चात् मेखलायें बनायी जाती है। इसमें भूमि में पूरा चौबीस

अङ्गुल खोदते है। पायस, चरु (खीर), बेलफल, इक्षुखण्ड़ आदि के लिए मेखलारहित खात किया जाता है। इसमें कुण्ड की गहराई अधिक होती है, जिससे स्थूल द्रव्यों को कुण्ड में व्यस्थित होने में सुविधा होती है। शारदातिलक के अनुसार कुण्ड की लम्बाई-चौड़ाई के अनुपात में खात भी उतनी ही लम्बाई-चौड़ाई का होना चाहिए। जब समिधा के साथ गोमयपिण्ड़ों (छाणे/कण्ड़े) का उपयोग होता है, तब मेखलारहित खात करना ही उचित होगा क्योंकि वर्तमान काष्ठ के अभाव गोमयपिण्ड का उपयोग सर्वत्र अधिकमात्रा में किया जाता है।

2. कण्ठ निर्धारण :- कुण्ड में उसी के समान आकार का कण्ठ भी भूतल के स्तर पर बनाना चाहिए। यदि एक हाथ का कुण्ड है तो कण्ठ भी एकाङ्गुल ही बनाये। यदि कुण्ड दो हाथ का है तो कण्ठ दो अङ्गुल चौड़ा रखे। कुण्ड के प्रमाण का 24वाँ भाग कण्ठ होना चाहिए। भूमि के स्तर पर चारों भुजाओं में एक अङ्गुल अवकाश (यह अवकाश ही मेखलाएँ होती है) छोड़कर मेखलाएँ बनानी चाहिए। सिद्धान्तशेखर के अनुसार कण्ठ एक ही अङ्गुल चौड़ा माना है, इसे गल भी कहा गया है।

सोमशम्भु के अनुसार कण्ठ का प्रमाण दो अङ्गुल है, उनके मतानुसार कुछ आगमों में कण्ठ दो अङ्गुल भी चौड़ा होता है, परन्तु सर्वसम्मत एवं प्रचलित पक्ष एक अङ्गुल का ही है, वही सर्वमान्य है। दो हाथ वाले कुण्ड (34 अङ्गुल) में कण्ठ दो अङ्गुल बनाया जा सकता है ।

3. कुण्ड की मेखला का निर्माण :-

अ. - प्रथम मेखला :- प्रथम मेखला की ऊँचाई कुण्ड प्रकृति का छठा भाग अर्थात्ा् (24/6 = 4) चार अङ्गुल तथा चौड़ाई भी इतनी ही होनी चाहिए।

ब. - द्वितीय मेखला :- मध्य में द्वितीय मेखला कुण्ड के क्षेत्रफल का गजांश (अष्टमांश) अर्थात्ा् तीन अङ्गुल चौड़ी तथा तीन ही अङ्गुल ऊँची होनी अपेक्षित है।

स. - तृतीय मेखला :- यह सबसे नीचे बनती है, जिसकी ऊँचाई कुण्ड क्षेत्र का अर्कांश अर्थात्ा् 12वाँ भाग होती है। यह 2 अङ्गुल चौड़ी तथा 2 अङ्गुल ऊँची होती है।

एक हाथ को 24वाँ भाग अङ्गुल होता है, उसी के द्वारा मेखला, कण्ठ तथा नाभि का निर्माण करना चाहिए। कुण्ड की माप के लिए कुण्ड कारिका में आज के फीते या स्केल की भाँति पट्टिका बनाने का निर्देश है, जिस काठ की पतली पट्टी पर बनाकर अङ्गुल तथा यव के चिह्न लगते हैं।

द. पाँच या सात मेखलाएँ :- कुण्डों में पाँच तथा सात मेखलाएँ भी बनायी जाती है। लक्षणसंग्रह ग्रन्थ के अनुसार पाँच मेखलाएँ मुख्य होती है तथा तीन मेखला मध्यम होती है। भविष्यपुराण के अनु सार लक्षहोम में सप्तमेखलात्मक कुण्ड का उपयोग होता है अथवा पञ्चमेखला के कुण्ड को बनाना उचित है। जिस प्रकार का कुण्ड हो उसी प्रकार की मेखलाओं का निर्माण करना चाहिए अर्थात् चतुरस्र कुण्ड में मेखला भी चतुस्राकार ही होगी। त्रिकोण कुण्ड की मेखला त्रिकोण, पञ्चास्र की पञ्चभुज, षडस्र की षड्भुज, सप्तास्र की सप्तभुज एवं अष्टास्र की अष्टभुज आकार की होती है। योनिकुण्ड में मेखलायें योन्याकार तथा वृत्तकुण्ड में मेखला वृत्ताकार होती है। पद्मकुण्ड की मेखला भी पद्माकार होती है। यदि कुण्ड विषम षडस्र या विषम अष्टास्र है तो मेखला भी वैसी ही होनी चाहिए।

मेखलाओं का फल :-

मेखला की संख्या	**फल**	**अन्य मत**
1. एक मेखला	अधम	अत्यन्त अधम
2. दो मेखला	मध्यम	अधम
3. तीन मेखला	उत्तम	मध्यम
4. पाँच मेखला	-	उत्तम

वर्ण के अनुसार मेखला :-

वर्ण	**मेखला**
1. ब्राह्मण	तीन मेखलायुक्त कुण्ड
2. क्षत्रिय	दो मेखलायुक्त कुण्ड
3. वैश्य एक	मेखलायुक्त कुण्ड

यज्ञकर्ता यजमान के अनुसार मेखलायें एक-दो या तीन की संख्या में रखी जा सकती है। इन मेखलाओं में प्रथम मेखला सात्त्विकी, दूसरी मेखला राजसी तथा तीसरी मेखला तामसी कही गयी है।

त्रिमेखला के देव :-

1. प्रथम मेखला का वर्ण श्वेत होता है, इसके देवता ब्रह्माजी है, अत: इसमें ब्रह्मदेव का पूजन किया जाता है। इसके ग्रह चन्द्र तथा शुक्र है। 2. द्वितीय मेखला का रक्तवर्ण है, इसके देवता विष्णु (अच्युत) है, इसके ग्रह सूर्य तथा मङ्गल है। 3. तृतीय मेखला कृष्णवर्ण की होती है, जिसके देव भगवान शङ्कर (रुद्र) है तथा इसके ग्रह शनि तथा राहु है। बुध तथा बृहस्पति कण्ठ के ग्रह होते है।

4. कुण्ड में योनि-निर्माण :- पूर्व, आग्रेय तथा दक्षिणखण्ड़ में जो कुण्ड बनाये जाये, उनमें दक्षिण दिशा में योनि लगानी चाहिए तथा योनि का अग्रभाग उत्तरदिशा में हो। तत्पश्चात् नैऋर्त्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर तथा ईशान के पाँच कुण्डों में योनि पश्चिम दिशा में लगानी चाहिए तथा उसका अग्रभाग पूर्व में होना चाहिए। नवकुण्ड (आचार्यकुण्ड) ईशान तथा पूर्वदिशा के मध्य में बनता है, उसमें योनि दक्षिण दिशा की ओर तथा अग्रभाग उत्तर की ओर रहेगा। योनिकुण्ड में योनि नहीं लगानी चाहिए क्योंकि वह पूरा कुण्ड ही योनि के आकार का होता है, परन्तु उस योन्याकार कुण्ड का अग्रभाग उत्तर में रखना चाहिए तथा होता कुण्ड के दक्षिणदिशा में बैठकर हवन करेगा। इस प्रकार किसी भी कुण्ड की भुजा में ही योनि बनानी चाहिए। दो भुजाओं के कोण में योनि कभी नहीं बनानी चाहिए।

पूर्वाग्र योनि के कुण्डों में होता पश्चिम दिशा में बैठकर पूर्वाभिमुख होकर हवन करते है तथा उत्तराग्र योनि वाले कुण्डों में होता दक्षिणदिशा की ओर पीठ करके तथा उत्तराभिमुख होकर बैठते है।

योनि :- सर्वप्रथम प्रकृति चतुरस्र (24) अङ्गुल प्रमाण का आधा (12 अङ्गुल) दीर्घ तथा आठ अङ्गुल विस्तार वाला एक अङ्गुल ऊँचा चतुरस्र बनाये। इस चतुरस्र को कुण्ड की उस दिशा में बनाना चाहिए, जिसमें योनी बनानी है। इसमें छ: अङ्गुल के अन्तर पर मध्य में लम्बाई में एक रेखा खींच दे तथा उस रेखा को मध्य से काटकर जाने वाली दूसरी रेखा भी खींच देवे, यह योनि आगे कुण्ड में झुकी हुई तथा कुण्ड में प्रविष्ट होती दिखनी चाहिए।

योनि बारह (12) अङ्गुल लम्बी, आठ (8) अङ्गुल चौड़ी तथा एक (1) अङ्गुल ऊँची होनी चाहिए। यह कुण्ड में एक (1) अङ्गुल आगे निकली हुई तथा ढलान वाली होनी चाहिए। इसकी ऊँचाई आगे की ओर

ग्यारह (11) अङ्गुल तथा पश्चभाग की ओर बारह अङ्गुल होनी चाहिए। योनि का आकार पीपल के पत्ते अथवा पान के पत्ते के सदृश होना चाहिए।

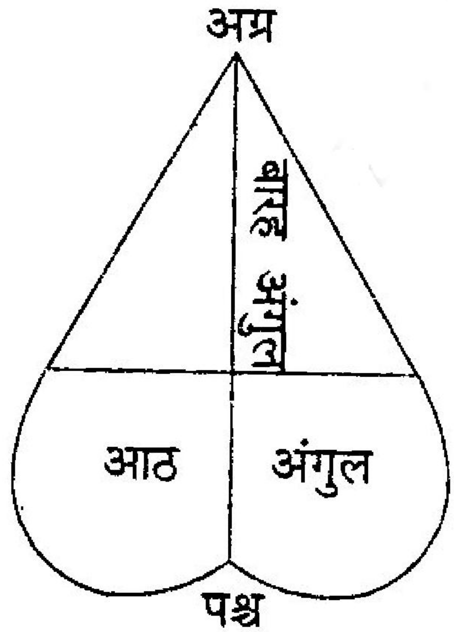

यदि कुण्ड की मेखला द्वादश (12) अङ्गुल हो तो योनि-निवेशन :- जब मेखलाएँ चार-चार अङ्गुल ऊँची तथा इतनी ही चौड़ी होकर तीन की संख्या में हो, तो उस स्थिति में पन्द्रह अङ्गुल लम्बी, दश अङ्गुल चौड़ी तथा पन्द्रह अङ्गुल ऊँची योनि का निर्माण करना चाहिए। प्रयोगसार के अनुसार ऊँचाई का प्रमाण तेरह अङ्गुल बताया गया है। योनि का किनारों की ऊँचाई एक अङ्गुल ही होनी चाहिए।

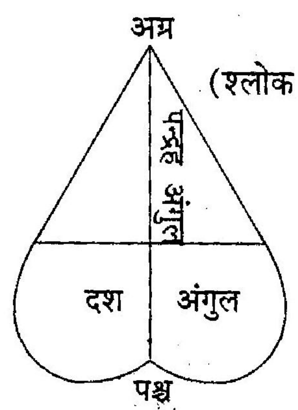

योनि की आवश्यकता : तान्त्रिक यज्ञों में योनि बनाने की परम्परा है तथा कुण्ड में योनि न होने को दोष (भार्या विनाशनं प्रोक्तं कुण्ड़े योनिविना कृते) माना गया है। कहीं-कहीं यह भी बताया गया है कि योन्यभाव में अपस्मार तथा भगन्दर रोग होता है,एवं मानहीनता के कारण दरिद्रता होती है। मध्य मेखला में योनि के पीछे छिद्र बनाया जाता है, जिससे लम्बी-पतली-गोल लकड़ी लगा दी जाती है। योनि बन जाने पर उसके ऊपर दोनों तरफ मिट्टी के दो गोल पिण्ड़ रख दिये जाते है, जो उत्तर तथा दक्षिण में रहते है।

5. कुण्ड में नाभि :- नाभि का आकार कुण्ड के समान ही रखना चाहिए। यदि कुण्ड समचतुरस्र है तो नाभि भी समचतुस्र होगी। यदि त्रिकोण है तो नाभि भी त्रिकोण होगी, इसी प्रकार यानिकुण्ड में नाभि योन्याकार हुआ करती है। षडस्र तथा अष्टास्र कुण्डों में नाभि का आकार इसी प्रकार होता है, परन्तु जो नाभि कुण्ड़ाकार बनाई जाये, उसे गहरी बनानी चाहिए तथा उसका उच्छ्राय वर्णित है, उसे कुण्ड भूतल से गहराई के रूप में बनानी चाहिए। मनुष्यों में नाभि का आकार जैसा होता है, वैसी ही नाभि कुण्ड में बनानी चाहिए। वह गर्तरूप (गड्ढे के समान) या अब्जाकार (कमल की भाँति) होती है, तात्पर्य यह है कि नाभि को गहरा ही बनाना चाहिए और उसे कुण्ड का आकार देना चाहिए।

अ. - अब्जाकार नाभि :- कुण्ड तल में उभरी हुई (ऊँची) होती है, गहरी नहीं। जब नाभि कमल की भाँति बने तो उसे गर्तरूप नहीं बनाना चाहिए, इसे ही पद्माकार नाभि कहते है। अन्य मत से सभी कुण्डों में नाभि बनाते है, परन्तु पद्मकुण्ड में नाभि नहीं बनती है, क्योंकि पद्मकुण्ड में जो कर्णिका होती है, वह स्वयं नाभि का स्थान ग्रहण करती है।

ब. - नाभि निर्माण विधि :- कुण्ड तल के मध्य में दो अङ्गुल ऊँची तथा चार अङ्गुल लम्बी एवं चार अङ्गुल चौड़ी वर्गाकार (ऊँचाई के साथ घनाकार) सनी हुई आर्द्र मिट्टी रखे। तत्पश्चातं् वृत्ताकार स्वरूप प्रदान करे, उसमें परकाल का सहयोग लेना चाहिए। नाभि में आठ पत्र दो अङ्गुल प्रमाण के बनाये। मध्य में कर्णिका तथा केसरमण्ड़ल को कल्पित करे। 12वाँ भाग छोड़कर पत्रों का अग्रभाग बनाना चाहिए। दप्रारम्भ में चारों ओर अङ्गुलादि 0.2.5.2 छोड़ (काट) देतो शेष क्षेत्र में तीन समान वृत्त क्रमश: 0.4.7.1 व्यासार्ध, 1.1.6.2 व्यासार्ध तथा 1.6.5.3 व्यासार्ध का बनाकर नाभि सम्पन्न करे।

1.11 वेदी निर्माण

मण्डप को पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण तीन-तीन भागों में विभाजित करे तो उनके खड़े और तिरछे कटने से कुल नौ खण्ड़ निर्मित हो जाते है, उनमें से मध्यभाग को वेदी कहते है। मध्य में वेदी की ऊँचाई एक हाथ प्रमाण की होनी चाहिए। इस प्रधान वेदी को त्रिवप्रा चतुष्कोण बनाना चाहिए। यज्ञ भगवानां् मध्य में विराजित होकर आहुति ग्रहण करते है, अत: मध्यखण्ड़ में वेदी बनाने का प्रावधान अनेक आचार्यों ने किया है, परन्तु मध्यकुण्ड भी बना सकते है तथा प्रधान वेदी ईशानकोण अथवा पूर्व में बनानी चाहिए। शारदातिलक के अनुसार वेदी मध्यभाग में उचित है, वेदी में तीन वप्र बनाने चाहिए। यथा -

ततो मण्डप सूत्रन्तु त्रिगुणीकृत्य तत्त्ववित्।

पूर्वादिषु क्रमात्तस्य मध्यभागे तु वेदिका।।

यदि मध्य भाग में वेदी बनाई हो तो प्रधान वेदी पूर्व में ही बनानी चाहिए। यथा -

मध्ये तु मण्डपस्यापि कुण्डं कुर्यादां् विचक्षण:।

अष्टहस्तप्रमाणेन आयामेन तथैव च।।

कुण्डस्य पूर्वस्य वेदी कुर्याद्ां् विचक्षण:।

चतुर्हस्तां समाञ्चैव हस्तमात्रोच्छ्रितां नृप।।

1. वेदी के प्रकार :-

अ. चतुरस्रा वेदी :- यह वर्गाकार होती है, यह सभी के लिए शुभफलदायी होती है।

ब. पद्मिनी वेदी :- यह कमल के आकार की होती है, इसका उपयोग वापी, कूप, तड़ागादि की प्रतिष्ठा में होता है।

स. श्रीधरी वेदी :- यह बीस (20) कोणों वाली होती है, इसका निर्माण विवाह-कार्य में करना श्रेष्ठ है। इसका उदर दर्पण की भाँति निर्मल, चमकदार तथा सपाट होना चाहिए।

द. सर्वतोभद्र वेदी :- इसमें चारों दिशाओं में चार भद्र होते है, जिसका उपयोग अभिषेक में करना चाहिए। सर्वतोभद्र का निर्माण तो अधिसंख्य मङ्गलकार्यों में होता है।

2. अष्टकोण वेदी :- श्रीराघवभट्ट ने अष्टकोण वेदी का विधान शतचण्डी, सहस्रचण्ड़ी आदि शक्तियागों हेतु बताया है। मण्डप के मध्यभाग में चारों स्तम्भों के मध्य एक वर्गाकार वेदी बनाये। यदि मण्डप सोलह (16) हाथ का हो तो वेदी एक हाथ तथा अठारह अङ्गुल (पौन दो हाथ & पौन दो हाथ) की बनावे। यदि मण्डप बीस हाथ प्रमाण वाला हो तो वेदी एक तथा चौबीस अङ्गुल अर्थात् दो हाथ (2 & 2 हाथ) की बनावे। चतुरस्र वेदी के दोनों ओर के कोणों को अङ्कित करते हुए सूत्र देने पर अष्टास्र अर्थात् अष्टकोण हो जाती है।

3. तुलादान हेतु मध्यवेदी :- इस हेतु निर्मित मध्यवेदी यदि अधम या मध्यम हो तो पाँच हाथ लम्बी तथा पाँच हाथ चौड़ी होनी चाहिए। यदि उत्तम मण्डप हो तो वेदी सात हाथ लम्बी तथा सात चौड़ी होनी चाहिए। वेदी का उच्छ्राय सभी प्रकार के मण्ड़पों में एक हाथ होना चाहिए।

4. ग्रहवेदी :- सभी प्रकार के मण्ड़पों एवं कार्यों में ग्रहवेदी (नवग्रह वेदी) का निर्माण ईशान कोण में करना चाहिए। यह हाथ ऊँची, एक हाथ लम्बी तथा एक हाथ चौड़ी हो अर्थात् वह एक घन हस्त होना चाहिए। साथ ही उसमें तीन वप्र भी हो अर्थात् तीन सीढ़ियाँ या मेखला लगी हो इसलिए इसे त्रिविप्रा कहा गया है।

महारुद्रयागादि में ईशानकोण में ही प्रधान वेदी का निर्माण करते है क्योंकि रुद्र की दिशा ईशान है, परन्तु नवग्रह वेदी उसके दक्षिण में होनी चाहिए।

5. वेदी-परिधि का प्रमाण :- प्रथम मेखला/परिधि दो अङ्गुल ऊँची, जिसके ऊपर तीन अङ्गुल ऊँचा मेखला हो, फिर उसके ऊपर भी तीन अङ्गुल की मेखला हो। वप्र की चौड़ाई दो अङ्गुल होती है।

6. अन्य वेदियाँ :- यज्ञों में अन्य वेदियों का निर्माण भी होता है। विकल्प से कुछ विद्वान् अग्निकोण में ही मातृकावेदी के साथ ही योगिनीवेदी भी बना देते है। अग्निकोण में ही सप्तघृतमातृका की स्थापना भी हो जाती है, जिसे एक काष्ठ के पट्टे पर कर देते है। मातृका वेदी का अग्निकोण में होना मन्थानभैरव ग्रन्थ के प्रमाणानुसार है। उसी के अनुसार शेष वेदियों को एक हाथ लम्बा, एक हाथ चौड़ा तथा आधा हाथ ऊँचा बनाना चाहिए। देवप्रतिष्ठा में देवों के स्नान हेतु जो वेदी बनायी जाती है, वह दो हाथ लम्बी तथा दो हाथ चौड़ी होनी चाहिए।

6. हवन कुण्ड /वेदी में विकार आने पर उसका फल - माप से अधिक गहरे कुण्ड में हवन करने से मनुष्य रोगी होता है, होता के दोषयुक्त होने से धेनु (गाय) और धन का क्षय, टेढ़ा कुण्ड सन्तापकारक, मेखला से भिन्न आकृति मरणकारक, मेखला से रहित होने से शोककारक, इष्टिका (ईंट) की अधिकता से वित्त का संशय, कुण्डयोनि के न होने से भार्या का विनाश तथा कण्ठ से वर्जित कुण्ड सन्तान का ध्वंस (विनाश) कारक फल देता है अतएव कुण्डनिर्माण मे अनेक प्रकार के दोषों की सम्भावना होने के कारण न्यून और अधिकता दोनों प्रकार के दोष श्रवण से स्थण्डिल (वेदी) का निर्माण अधिक श्रेयस्कर है इसलिए शास्त्रों में उल्लेख है:- "नास्ति यज्ञसमो रिपु:

1.12 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को कुण्ड एवं मण्डप के निर्माण की समुचित विधि का ज्ञान हो पायेगा। किसी भी यज्ञीय कर्म में सर्वप्रथम मण्डप का निर्माण होता है, जिसके लिए शास्त्रों ने विधि-विधान का उल्लेख किया है। इसके अन्तर्गत मण्डप निर्माण हेतु भूमिपरीक्षण, दिशा का चयन, दहन, खनन, सम्प्लावन आदि विधियों का उल्लेख किया गया है। कुण्ड निर्माण के अन्तर्गत इस इकाई में नवकुण्ड व पञ्चकुण्डीय यज्ञ में कुण्डों का विधान भी दिया गया है। आहुति संख्या के अनुसार कुण्डों का प्रमाण सहित विभिन्न कुण्डों का सचित्र विवरण इस इकाई के अध्ययन से छात्रों को प्राप्त हुआ।

1.13 शब्दावली

1. मण्डप = यज्ञ हेतु निर्मित अस्थायी भवन

2. एक हाथ = 24 अङ्गुल

3. रत्नि = मुट्ठी बांधे हुए हाथ की लम्बाई अथवा 21 अङ्गुल परिमाप

4. चतुरस्र = जिसकी चारों भुजायें समान हो अथवा लम्बाई व चौड़ाई समान हो।

5. दहन = जलाना

6. खनन = खोदना

7. सम्प्लावन = जल भरना

8. मेखला = कुण्ड के बाहरकी परिधि

9. तोरणद्वार = मुख्यद्वार

10. अर्धचन्द्र = आधे चन्द्र के समान

1.14 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :-

प्रश्न - 1 : आकृतिभेद से कुण्ड़ो के प्रकार बताइये ?

उत्तर : कोणात्मक, वर्तुल व विशिष्ट।

प्रश्न - 2 : सामान्यत: एक हाथ का मान कितना अङ्गुल होता है ?

उत्तर : सामान्यत: 24 अङ्गुल का एक हाथ का प्रमाण होता है।

प्रश्न - 3 : मण्ड़न निर्माण से पूर्व सर्वप्रथम क्या करना चाहिए ?

उत्तर : सर्वप्रथम भूमिपरीक्षण करना चाहिए।

प्रश्न - 4 : पञ्चकुण्ड़ीय यज्ञ में कितने कुण्डों का निर्माण किया जाता है ?

उत्तर : पञ्चकुण्ड़ीय यज्ञ में पाँच कुण्डों का निर्माण किया जाता है।

प्रश्न - 5 : 50 से 99 आहुतियों तक कितने अङ्गुलात्मक वेदी अथवा कुण्ड का निर्माण करना चाहिए ?

उत्तर : 50 से 99 आहुतियों तक 21 अङ्गुलात्मक वेदी अथवा कुण्ड का निर्माण करना चाहिए।

1.15 लघुत्तरात्मक प्रश्न :-

प्रश्न - 1 : मण्डप एवं कुण्ड निर्माण में एक हाथ से कम मापों का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 2 : मण्डप एवं कुण्ड निर्माण से पूर्व करणीय कृत्यों का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 3 : मण्डप पर विविध दिशाओं में स्थापित की जाने वाली ध्वजाओं का परिचय दीजिये ?

प्रश्न - 4 : नवकुण्ड़ीय यज्ञ में नवकुण्डों की स्थिति का विवेचन कीजिये ?

प्रश्न - 5 : आहुति संख्या के अनुसार एक करोड़ आहुतियों तक कुण्ड निर्माण हेतु माप का प्रमाण बताइये ?

प्रश्न - 6 : किसी भी एक कुण्ड का साङ्गोपाङ्ग सचित्र विवेचन कीजिए ?

1.16 सन्दर्भ ग्रन्थ -

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशती - सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
2. कुण्ड निर्माण विधि- सङ्कलनकर्ता - वैदिक पं. अशोक कुमार गौड़ शास्त्री प्रकाशक - सावित्री ठाकुर प्रकाशन, वाराणसी।
3. अनुष्ठानप्रकाश सम्पादक - पण्डित चतुर्थीलाल शर्मा प्रकाशक - खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई।
4. विश्वकर्मा प्रकाशसम्पादक - गणेशदत्त पाठक प्रकाशक - ठाकुप्रसाद पुस्तक भण्डार, वाराणसी।

इकाई — 2

मण्डल प्रकरण

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 विषय प्रवेश

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

2.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.1 प्रस्तावना :-

मण्डल देवताओं का ही प्रतीक है, इसमें देवताओं की साङ्गोपाङ्ग पूजा की जाती है । मण्डल देवताओं के अनुसार निर्दिष्ट रूप में ही बनायें जाते है। प्राचीन काल से मण्ड़लों का निर्माण वेदी पर किया जाता है। वर्तमान में यह चौकी पर किया जाने लगा है। मण्डल आकार की दृष्टि से त्रिभुजाकार, वर्गाकार, आयताकार, वृत्ताकार निर्मित किये जा सकते है। मण्ड़लों में देवताओं को स्थापित किया जाता है, मण्डल साक्षाताा्‌ देवतुल्य है तथा मन्त्रों से उनकी प्राणप्रतिष्ठा कर दी जाती है। मण्डल साक्षात् देवस्थान है, जहाँ पूजन के क्रम में देवताओं का आवाहन व पूजन किया जाता है। इनके निर्माण में विविध धान्य (चावल, गेहूँ, मूंग, मसूर, उड़द, जौ, चने की दाल, तिल आदि), वस्त्र (लाल, सफेद, पीला, काला, हरा आदि) का उपयोग होता है। देवताओं के लिए मण्डल में निर्दिष्ट वर्ण के अनुसार ही धान्य का उपयोग होता है। धान्य व वस्त्र के अभाव में अथवा भौगोलिक

परिस्थितियों के अनुसार अक्षत को ही गुलाल अथवा कच्चे रंगों से रंगकर मण्ड़लों का निर्माण किया जाता है। कहीं-कहीं केवमात्र गुलाल व रंगों के द्वारा भी मण्ड़लों का निर्माण किया जाता है। ईशानकोण में नवग्रह-मण्डल का, अग्निकोण में योगिनि-मण्डल का, नैर्ऋत्यकोण में वास्तुमण्डल का, वायव्य कोण में क्षेत्रपाल मण्डल का, ईशान और अग्नि के मध्य अर्थात् मध्यपूर्व में प्रधानमण्डल का निर्माण करना चाहिए। मध्यपूर्व से अग्निकोण के मध्य गणेश तथा षोड़श मातृकाओं के मण्डल का निर्माण करना चाहिए तथा मध्यूपर्व से ईशान के मध्य में वरुण-पितृ मण्डल का निर्माण करना चाहिए।प्रधान चौकी पर सबसे उच्च स्थान पर जिस भी देवता का अनुष्ठान किया जा रहा है, उसी देवता का मण्ड़लनिर्माण करना चाहिए। मण्डल निर्माण के पश्चात् ईशान, अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्यादि चार कोणों में चार स्तम्भों का रोपण करके उपर लाल अथवा पीले वस्त्र से मण्ड़लों पर आच्छान कर देना चाहिए।

2.2 उद्देश्य :-इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

1. मण्ड़लों के निर्माण विधि का ज्ञान कर सकेंगे।

2. देवताओं के मण्ड़लों में उपयोग वस्त्र व वर्णादि का ज्ञान करा सकेंगे।

3. मण्ड़लों में अभीष्ट देव का स्थान व दिशा का ज्ञान कराते हुए देवता के प्रति भावना जागृत करने में सहायता करेंगे ।

2.3. विषय प्रवेश :-

सभी माङ्गलिक कार्यों में मण्ड़लों का निर्माण किया जाता है। सर्वप्रथम गणपति मण्डल का निर्माण किया जाता है, शास्त्रीय निर्देश के अनुसार गणपति भद्रमण्डल का निर्माण गणपति पूजन हेतु सर्वश्रेष्ठ है तथापि स्वस्तिक भी इन्हीं का प्रतीक है अर्थात् देशकाल परिस्थिति के अनुसार केवलमात्र स्वस्तिक का निर्माण भी किया जा सकता है। तत्पश्चात् षोड़श मातृकाओं व सप्त वसोद्र्धारा मातृकाओं के मण्डल का निर्माण किया जाता है। तत्पश्चात् नवग्रह, ब्रह्मादि पञ्चदेव, पितर, वरुण, योगिनी, क्षेत्रपाल आदि मण्ड़लों के निर्माण के पश्चातां् मध्य में प्रधान चौकी/वेदी पर पूजन के अनुसार प्रधान देव का स्थापन किया जाता है। कर्म के अनुसार मण्डल निर्माण भी भिन्न-भिन्न होता है।

2.3.1. गणपति मण्डल :-

सर्वप्रथम चौकी/वेदी पर लाल वस्त्र बिछाकर गेहूँ अथवा यथोचित धान्य से स्वस्तिक का निर्माण करना चाहिए। स्वस्ति के मध्य में चार बिन्दु बनाने चाहिए। स्वस्तिक के दायें-बायें दो-दो खड़ी रेखायें बनानी चाहिए।

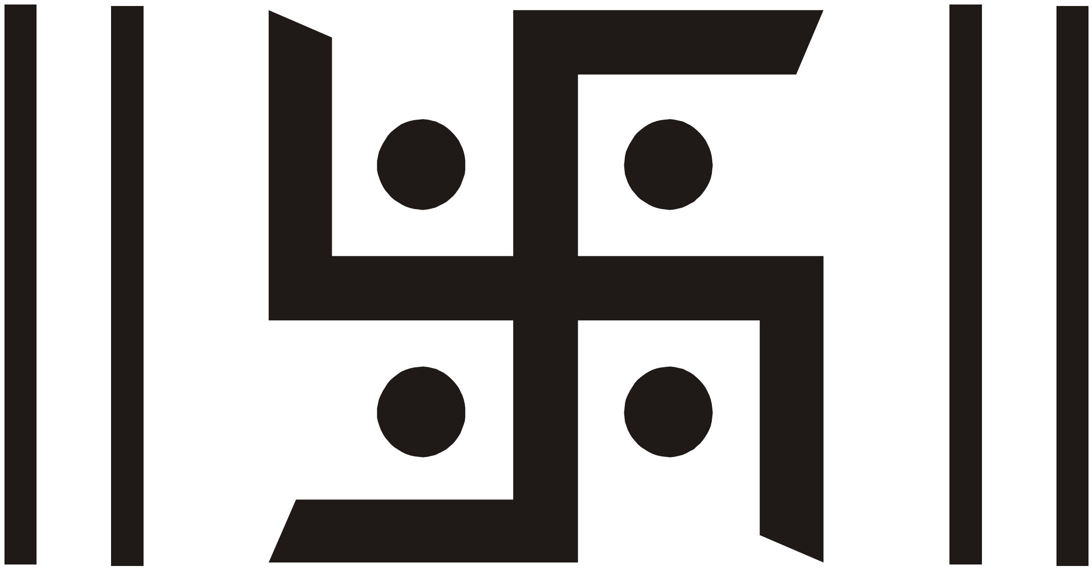

2.3.1.1. गणपति मण्डल पर आवाहित देवतओं का पूजन :-

गणेश व अम्बिका का पूजन :- हाथ में अक्षत लेकर इस मंत्र को पढ़ते हुए गणपति को आवाहन करें

उॅं गणानान्त्वा गणपति गुँ हवामहे निधिनान्त्वा निधिपति गुँ हवामहे । व्वसोमम आहमजाने गब्बर्भधमा त्वमजासि गब्बर्भधम् ।। गणपतये नमः। गणपतिम् आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि । गणेश जी के ऊपर अक्षत छोड़े -

ऊँ अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिकेनमा नयति कश्चन ।

ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् ।। ऊँ अम्बिकायै नमः, अम्बिकाम् आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि । गौरी जी के ऊपर अक्षत छोड़े -

तत्पश्चात् स्वस्तिक मण्डल पर ही षड्विनायक का पूजन करें

1. ऊँ मोदायनमः, मोदमावाहयामि ।

2. ऊँ प्रमोदाय नमः, प्रमोदमावाहयामि ।

3. ॐ सुमुखाय नमः, सुमुखमावाहयामि।

4. ॐ दुर्मुखाय नमः, दुर्मुखमावाहयामि।

5. ॐ अविघ्नाय नमः, अविघ्न मावाहयामि।

6. ॐ विघ्नकरेनमः, विघ्नकर्तारमावाहयामि।

हाथ में अक्षतपुष्प लेकर गणपति की स्थापना करे - ॐ मनोजूति.। ॐ भूर्भुवः स्वः मोदादिषड्विनायकाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु । ॐ मोदादिषड्विनायकेभ्यो नमः - यथोपचार पूजन करे ।अनया पूजया मोदादिषड्विनायकाः प्रीयन्ताम्। इस प्रकार गणपति मण्डल का निर्माण करके उस पर गणपति सहित अम्बिका की स्थापना करनी चाहिए।

vFk "kksM'k ekr`dk pØe~

ॐ आत्मनः कुल–देवतायै नमः 17	ॐ लोकमातृभ्यो नमः 13	ॐ देवसेनायै नमः 9	ॐ es/kk; S ue% 5
ॐ rqf"V; Sue% 16	ॐ ekr H;ksue% 12	ॐ t;k S ue% 8	ॐ 'kP; Sue% 12
ॐ iqf"V Sue% 15	ॐ Lokgk; Sue% 11	ॐ fot ;k S ue% 8	ॐ iùk; Sue% 3
ॐ /kR; Sue% 14	ॐ Lo/kk; Sue% 10	ॐ kfo=; ~Sue% 6	ॐ xkS; Sue% 2 ॐ गणेशाय नमः1

vFk oLk ks kZkpØe~

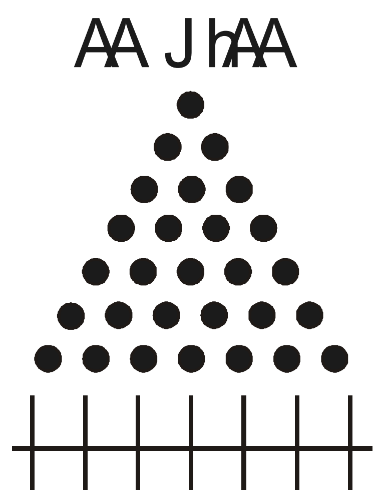

षोड़श मातृका मण्डल एवं सप्तघृतमातृका मण्डल का निर्माण :-

मातृका मण्डल का निर्माण मध्यपूर्व और अग्निकोण के मध्य में वेदी अथवा काष्ठ की चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर यथोचित धान्य अथवा रंग से पश्चिम से पूर्व की ओर समानभाग पर पाँच खड़ी रेखायें बनानी चाहिए तथा दक्षिण से उत्तर की ओर समान भाग से पाँच रेखायें बनाकर चतुरस्र बना लेना चाहिए। इन सोलह कोष्ठकों

पर एक हाथ में जितना धान्य आ जाये, उतनी मात्रा का एक-एक कोष्ठक में एक-एक पुञ्ज रूप में मातृका का स्थापन करना चाहिए। गौरी के साथ में गणेश का स्थापन भी नैर्ऋत्यकोण में करना चाहिए। सप्तघृतमातृकाओं में सर्वप्रथम ऊपर कुमकुम अथवा घृतमिश्रितसिन्दूर से काष्ठ अथवा स्वच्छ शिला पर ''।।श्री।।'' लिखकर उपरोक्त वर्णित चित्र के अनुसार सप्तघृतमातृकाओं की स्थापना करें ।

गौर्यादिमातृका

1. ऊँ गणपतये नम:।	2. ऊँ गौर्यै नम:।	3. ऊँ पद्मायै नम:।
4. ऊँ शच्यै नम:।	5. ऊँ मेधायै नम:।	6. ऊँ सावित्र्यै नम:।
7. ऊँ विजयायै नम:।	8. ऊँ जयायै नम:।	9. ऊँ देवसेनायै नम:।
10. ऊँ स्वधायै नम:।	11. ऊँ स्वाहायै नम:।	12. ऊँ मातृभ्य: नम:।
13. ऊँ लोकमातृभ्य: नम:।	14. ऊँ धृत्यै नम:।	15. ऊँ पुष्ट्यै नम:।
16. ऊँ तुष्ट्यै नम:।	17. ऊँ आत्मकुलदेव्यै नम:।	

सप्तघृतमातृका

1. ऊँ श्रियै नम:।	2. ऊँ लक्ष्म्यै नम:।	3. ऊँ धृत्यै नम:।
4. ऊँ मेधायै नम:।	5. ऊँ स्वाहायै नम:।	6. ऊँ प्रज्ञायै नम:।
7. ऊँ सरस्वत्यै नम:।		

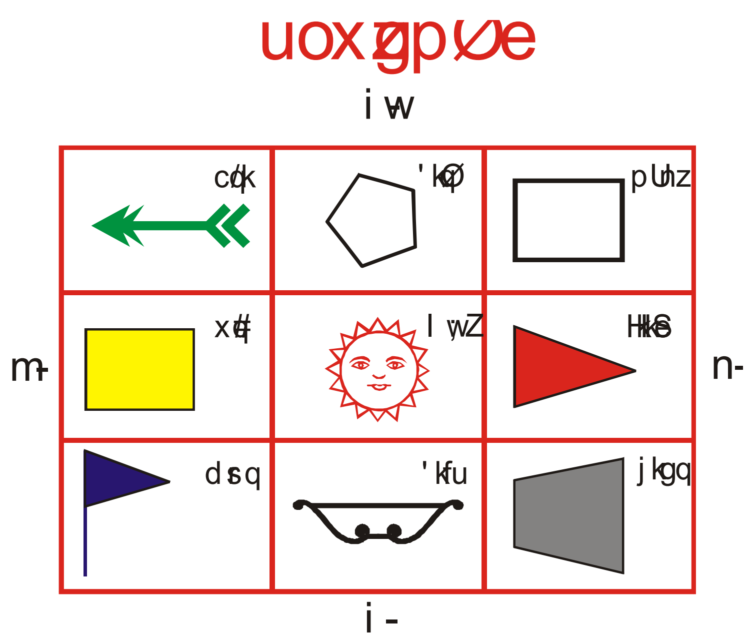

नवग्रह मण्डल का निर्माण :-

ईशान कोण में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर सफेद वस्त्र बिछाकर अक्षत अथवा ग्रहों के वर्ण (उपरोक्त चित्र के अनुसार) के अनुसार धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। समचतुरस्र को नौ भागों में विभाजित करके उनमें यथोक्त विधि से चित्रानुसार आकृति एवं रंग से ग्रहों की स्थापना करनी चाहिए। सूर्यादि ग्रहों के कोष्ठक में अधिपति एवं ग्रहों के प्रत्याधिपति देवताओं का भी स्थापन एवं अर्चन करना चाहिए। यदि उपरोक्त आकृति के अनुसार बनाने में असमर्थ हो तो अक्षतपुञ्ज से भी नवग्रहमण्डल का निर्माण किया जा सकता है।

ग्रहमण्डल-देवता

1. ॐ सूर्याय नम:। 2. ॐ चन्द्रमसे नम:। 3. ॐ भौमाय नम:।

4. ॐ बुधाय नम:। 5. ॐ गुरवे नम:। 6. ॐ शुक्राय नम:।

7. ॐ शनैश्चराय नम:। 8. ॐ राहवे नम:। 9. ॐ केतवे नम:।

अधिपति देवता :-

1. ऊँ ईश्वराय नमः। 2. ऊँ उमायै नमः। 3. ऊँ स्कन्दाय नमः।

5. ऊँ विष्णवे नमः। 5. ऊँ ब्रह्मणे नमः। 6. ऊँ इन्द्राय नमः।

ब - 7. ऊँ यमाय नमः। 8. ऊँ कालाय नमः। 9. ऊँ चित्रगुप्ताय नमः।

प्रत्याधिपति देवता :-

1. ऊँ अग्नये नमः। 2. ऊँ अद्भ्यः नमः। 3. ऊँ धरायै नमः।

5. ऊँ विष्णवे नमः। 5. ऊँ इन्द्राय नमः। 6. ऊँ इन्द्राण्यै नमः।

7. ऊँ प्रजापतये नमः। 8. ऊँ नागेभ्यः नमः। 9. ऊँ ब्रह्मणे

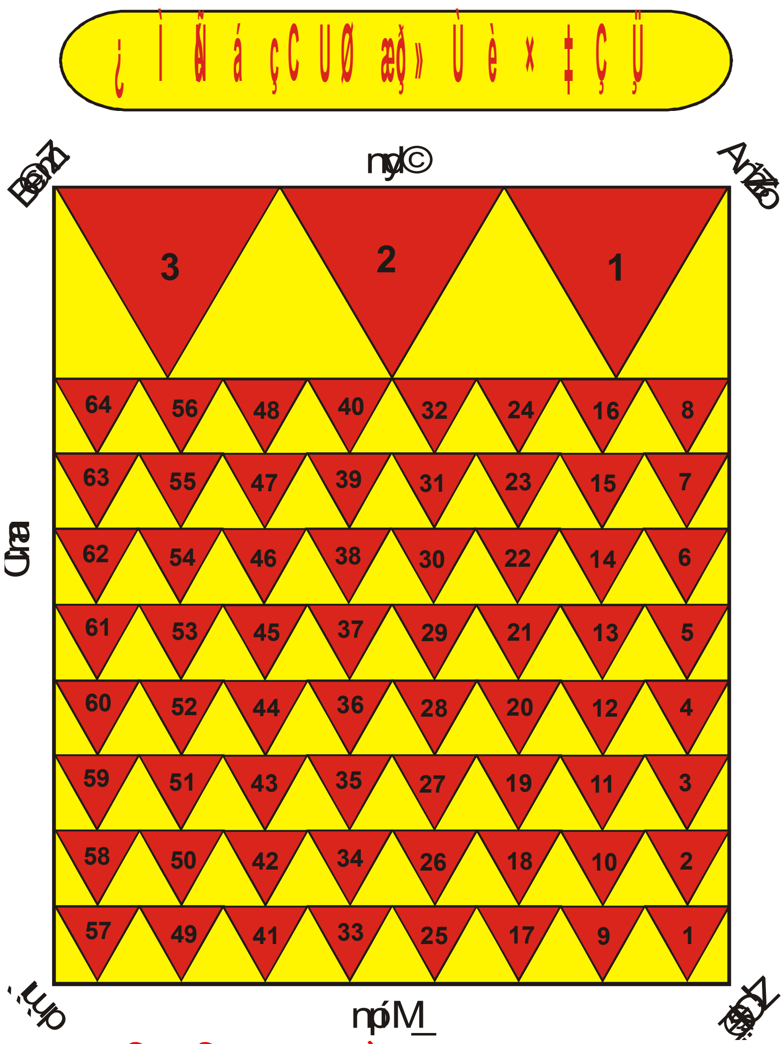

योगिनी मण्डल का निर्माण :-

आग्नेय कोण में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर लाल अथवा हरा वस्त्र बिछाकर मसूर की दाल अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर (उपरोक्त चित्र के अनुसार के अनुसार) धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। 64 कोष्ठकों का निर्माण करके उन पर श्रीमहाकाली, श्रीमहालक्ष्मी, श्रीमहासरस्वती सहित अधोखित मन्त्रों से 64 योगिनियों की स्थापना करनी चाहिए

1. ऊँ महाकाल्यै नम:। 2. ऊँ महालक्ष्म्यै नम:। 3. ऊँ महासरस्वत्यै नम:।

1. ऊँ दिव्ययोगिन्यै नम:। 2. ऊँ महायोगिन्यै नम:। 3. ऊँ सिद्धयोगिन्यै नम:। 4. ऊँ गणेश्वर्यै नम:।

5. ऊँ प्रेताक्ष्यै नम:। 6. ऊँ डाकिन्यै नम:। 7. ऊँ काल्यै नम:।8. ऊँ कालरात्र्यै नम:।

9. ऊँ निशाचर्यै नम:। 10. ऊँ हुकार्यै नम:।

11. ऊँ रुद्रवैतालिकायै नम:। 12. ऊँ खर्पर्यै नम:।

13. ऊँ भूतयामिन्यै नम:। 14. ऊँ ऊध्र्वकेश्यै नम:।

15. ऊँ विरूपाक्ष्यै नम:। 16. ऊँ शुष्कांग्यै नम:।

17. ऊँ मांसभोजन्यै नम:। 18. ऊँ फेत्कार्यै नम:।

19. ऊँ वीरभद्रायै नम:। 20. ऊँ धूम्राक्ष्यै नम:।

21. ऊँ कलहप्रियायै नम:। 22. ऊँ रक्तायै नम:।

23. ऊँ घोररक्तायै नम:। 24. ऊँ विरूपायै नम:।

25. ऊँ भयङ्कर्यै नम:। 26. ऊँ चण्डिक़ायै नम:।

27. ऊँ मारिकायै नम:। 28. ऊँ चण्ड्यै नम:।

29. ऊँ वाराह्यै नमः।	30. ऊँ मुण्ड़धारिण्यै नमः।
31. ऊँ भैरव्यै नमः।	32. ऊँ चक्रपाणिन्यै नमः।
33. ऊँ क्रोधायै नमः।	34. ऊँ दुर्मुख्यै नमः।
35. ऊँ प्रेतवाहिन्यै नमः।	36. ऊँ कण्टक्यै नमः।
37. ऊँ दीर्घलम्बोष्ठयै नमः।	38. ऊँ मालिन्यै नमः।
39. ऊँ मंत्रयोगिन्यै नमः।	40. ऊँ कालाग्न्यै नमः।
41. ऊँ मोहिन्यै नमः।	42. ऊँ चक्रायै नमः।
43. ऊँ कङ्काल्यै नमः।	44. ऊँ भुवनैश्वर्ये नमः।
45. ऊँ कुण्ड़लाक्ष्यै नमः।	46. ऊँ लुह्यै नमः।
47. ऊँ लक्ष्म्यै नमः।	48. ऊँ यमदूत्यै नमः।
49. ऊँ करालिन्यै नमः।	50. ऊँ कौशिक्यै स्वाहा।
51. ऊँ भक्षिण्यै नमः।	52. ऊँ यक्ष्यै नमः।
53. ऊँ कौमार्यै नमः।	54. ऊँ यन्त्रवाहिन्यै नमः।
55. ऊँ विशालायै नमः।	56. ऊँ कामुक्यै नमः।
57. ऊँ व्याघ्र्यै नमः।	58. ऊँ यक्षिण्यै नमः।
59. ऊँ प्रेतभूषिण्यै नमः।	60. ऊँ धूर्जटायै नमः।
61. ऊँ विकटायै नमः।	62. ऊँ घोरायै नमः।

63. ऊँ कपालायै नमः। 64. ऊँ लाङ्गल्यै नमः।

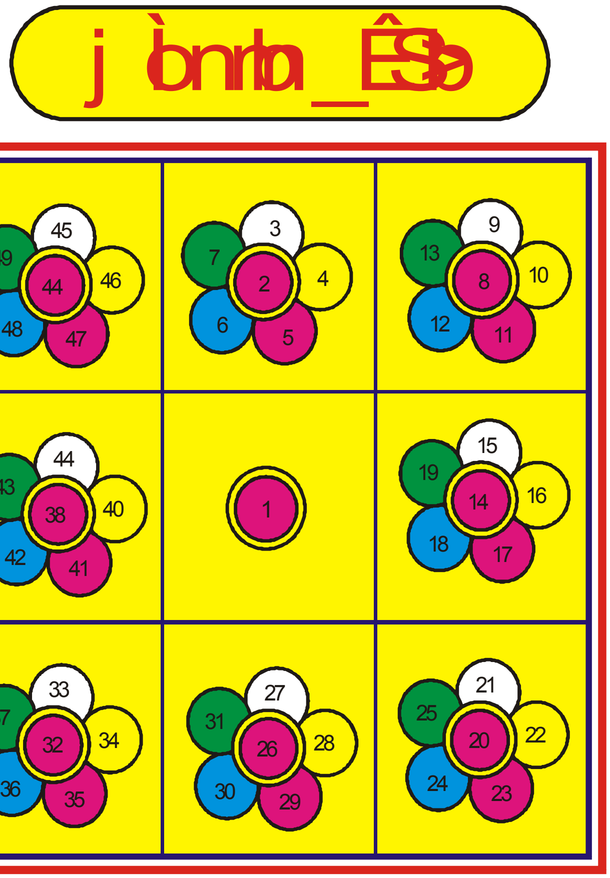

क्षेत्रपाल मण्डल का निर्माण :-

वायव्यकोण में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर काले अथवा लाल वस्त्र बिछाकर उड़द की दाल अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर (उपरोक्त चित्र के अनुसार के अनुसार) धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। 49 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए। समानभाग से नौ कोष्ठक बनाकर मध्य में एक धान्यपुञ्ज तथा शेष आठ कोष्ठकों में प्रत्येक में छः पुञ्जों का निर्माण करते हुए अधोलिखित मन्त्र से उनमें देवाताओं का आवाहन-स्थापन करना चाहिए:-

1. ऊँ अजराय नमः। 2. ऊँ आपकुम्भाय नमः।

3. ऊँ इन्द्रस्तुतये नमः। 4. ऊँ इडाचाराय नमः।

5. ऊँ उक्तसंज्ञाय नम:। 6. ऊँ ऊष्मादाय नम:।

7. ऊँ ऋषिसूदनाय नम:। 8. ऊँ मुक्ताय नम:।

9. ऊँ लूप्तकेशाय नम:। 10. ऊँ लिप्तकाय नम:।

11. ऊँ एकदंताय नम:। 12. ऊँ ऐरावताय नम:।

13. ऊँ ओधवंधवे नम:। 14. ऊँ ओषधीषाय नम:।

15. ऊँ अञ्जनाय नम:। 16. ऊँ अस्त्रवाराय नम:।

17. ऊँ क म्बलाय नम:। 18. ऊँ खरुखानलाय नम:।

19. ऊँ गामुख्याय नम:। 20. ऊँ घण्टादाय नम:।

21. ऊँ डमनसे नम:। 22. ऊँ चण्ड़वारणाय नम:।

23. ऊँ घण्टारोपाय नम:। 24. ऊँ जटालाय नम:।

25. ऊँ झङ्घीवाय नम:। 26. ऊँ चडश्वराय नम:।

27. ऊँ टङ्कपाणये नम:। 28. ऊँ षण्वन्धते नम:।

29. ऊँ डामराय नम:। 30. ऊँ ढक्कारवाय नम:।

31. ऊँ नवार्णवाय नम:। 32. ऊँ तडिद्देहाय नम:।

33. ऊँ थिराय नम:। 34. ऊँ दन्तुराय नम:।

35. ऊँ धनदाय नम:। 36. ऊँ नक्तिक्ताय नम:।

37. ऊँ प्रचण्डकाय नम:। 38. ऊँ फट्कराय नम:।

39. ऊँ वीरसङ्घाय नमः।40. ऊँ भृङ्गाय नमः।

41. ऊँ मेघभासुराय नमः।42. ऊँ युगान्ताय नमः।

43. ऊँ राह्यवाय नमः। 44. ऊँ लम्बोष्ठाय नमः।

45. ऊँ वसवाय नमः। 46. ऊँ शुकनन्दाय नमः।

47. ऊँ षडालाय नमः। 48. ऊँ सुनाम्ने नमः। 49. ऊँ हम्बुकाय नमः।

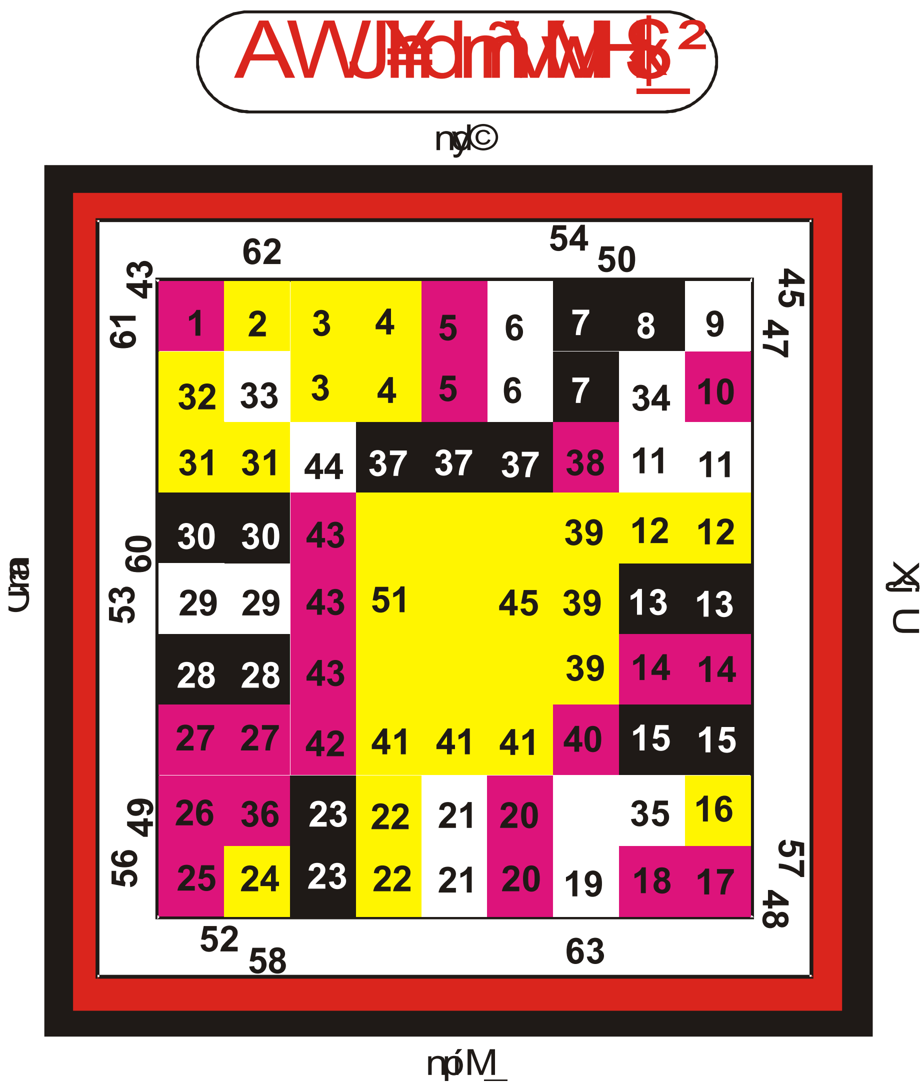

गृहवास्तु मण्डल का निर्माण :-

नैर्ऋत्यकोण में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर काले अथवा यथोपलब्ध वस्त्र बिछाकर यथोचित धान्य अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर (उपरोक्त चित्र के अनुसार के अनुसार) धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। 81 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए। पश्चिम से पूर्व तथा उत्तर से दक्षिण की ओर 10-10 रेखाओं को खीचकर उनमें यथोचित रंग के पुञ्जों का निर्माण करना चाहिए।

चार लोहे की नागफणी की कीलों को आग्नेयादि विदिशाओं में शङ्कुरोपण, बलिदानादि कर्म करना चाहिए।

शङ्कुरोपण :- **ॐ विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वत:।**

अस्मिन् गृहे/मण्ड़ले अवतिष्ठन्तु आयुर्बलकरा: सदा॥

बलिदान :-

1. ॐ अग्न्ये नम: इमं बलिं समर्पयामि,
2. ॐ नैर्ऋत्ये नम: इमं बलिं समर्पयामि,
3. ॐ वायव्यै नम: इमं बलिं समर्पयामि,
4. ॐ ईशानाय नम: इमं बलिं समर्पयामि।

रेखापूजन :- पश्चिम से पूर्व की ओर :-

1. ॐ शान्त्यै नम:, 2. ॐ यशोवत्यै नम:,

3. ॐ विशालाय नम:, 4. ॐ प्राणवाहिन्यै नम:,

5. ॐ सत्यै नम:, 6. ॐ सुमत्यै नम:,

7. ॐ नन्दाय नम:, 8. ॐ सुभद्राय नम:,

9. ॐ सुरथाय नमः,

रेखापूजन :- दक्षिण से उत्तर की ओर :-

1. ॐ हिरण्यायै नमः, 2. ॐ लक्ष्म्यै नमः,

3. ॐ विभूत्यै नमः, 4. ॐ विमलाय नमः,

5. ॐ प्रियाय नमः, 6. ॐ जयाय नमः,

7. ॐ ज्वालाय नमः, 8. ॐ विशालाय नमः, 9. ॐ ईड़ाय नमः।

वास्तु पूजन :-

1. ॐ शिखिने नमः। 2. ॐ पर्ज्जन्याय नमः।

3.ॐ जयन्ताय नमः। 4. ॐ कुलिशायुधाय नमः।

5. ॐ सूर्याय नमः। 6. ॐ सत्याय नमः।

7. ॐ भृशाय नमः। 8. ॐ आकाशाय नमः।

9. ॐ वायवे नमः। 10. ॐ पूष्णे नमः।

11. ॐ वितथाय नमः। 12. ॐ गृहक्षताय नमः।

13. ॐ यमाय नमः। 14. ॐ गन्धर्वाय नमः।

15. ॐ भृङ्गराजाय नमः। 16. ॐ मृगाय नमः।

17. ॐ पितृभ्यः नमः। 18. ॐ दौवारिकाय नमः।

19. ॐ सुग्रीवाय नमः। 20. ॐ पुष्पदन्ताय नमः।

21. ॐ वरुणाय नमः। 22. ॐ असुराय नमः।

23. ॐ शेषाय नमः। 24 ॐ पापाय नमः।

25. ॐ रोगाय नमः। 26. ॐ अहये नमः।

27. ॐ मुख्याय नमः। 28. ॐ भल्लाटाय नमः।

29. ॐ सोमाय नमः। 30. ॐ नागेभ्यः नमः।

31. ॐ अदितये नमः। 32. ॐ दितये नमः।

33. ॐ अद्भ्यः नमः। 34. ॐ सवित्रे नमः।

35. ॐ जयाय नमः। 36. ॐ रुद्राय नमः।

37. ॐ अर्यम्णे नमः। 38. ॐ सवित्रे नमः।

39. ॐ विवस्वते नमः। 40. ॐ विबुधाधिपाय नमः।

41. ॐ मित्राय नमः। 42. ॐ राजयक्ष्मणे नमः।

43. ॐ पृथ्वीधराय नमः। 44. ॐ आपवत्साय नमः।

45. ॐ ब्रह्मणे नमः। 46. ॐ चरक्यै नमः।

47. ॐ विदार्यै नमः। 48. ॐ पूतनायै नमः।

49. ॐ पापराक्षस्यै नमः। 50. ॐ स्कन्दाय नमः।

51. ॐ अर्यम्णे नमः। 52. ॐ जृम्भकाय नमः।

53. ॐ पिलिपिच्छाय नमः। 54. ॐ इन्द्राय नमः।

55. ॐ अग्नये नम:। 56. ॐ यमाय नम:।

57. ॐ निर्ऋत्यै नम:। 58. ॐ वरुणाय नम:।

59. ॐ वायवे नम:। 60. ॐ सोमाय नम:।

61. ॐ ईश्वराय नम:। 61. ॐ ब्रह्मणे नम:।

62. ॐ अनन्ताय नम:।

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो ऽ अनमी वो भवान:।

यत्त्वे महे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भवद्विपदे शं चतुष्पदे।ॐ भूर्भुव: स्व: वास्तुपुरुषाय नम:।

पूजन के पश्चात् वास्तु के लिए वास्तुमण्डल के देवताओं के लिए पायस अथवा यथोपलब्ध सामग्री से बलि देनी चाहिए।

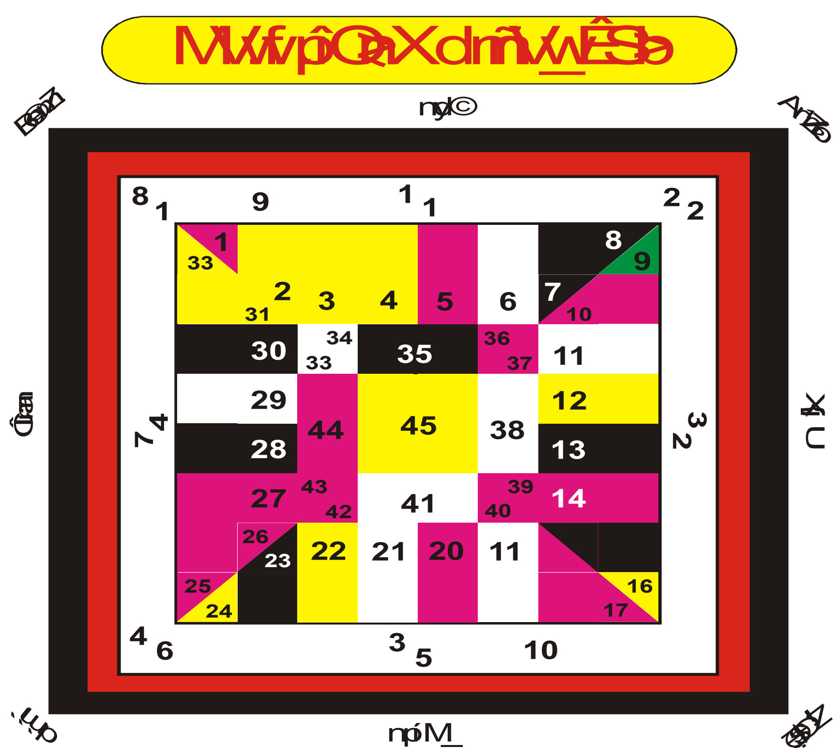

पदीय वास्तुमण्डल का निर्माण :-

नैर्ऋत्यकोण में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर यथोचित वस्त्र बिछाकर अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर (उपरोक्त चित्र के अनुसार के अनुसार) धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। 64 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए। समानभाग से पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर निर्माण करना चाहिए। ईशान से नैर्ऋत्य तथा अग्नि से वायव्य कोण तक धागा अथवा सूत्र के माध्यम से कोष्ठकों को मण्डलानुसार विभाजित करके चतु:षष्ठीपदात्मक वास्तु मण्डल का निर्माण करना चाहिए। पूर्वापर रेखा पूजन : ऊँ लक्ष्म्यै नम:, यशोवत्यै नम:, कान्तायै नम:, सुप्रियायै नम:, यशै नम:, शिवायै नम:, शोभनायै नम:, साधनायै नम:, ईड़ायै नम:।

याम्योत्तर रेखा पूजन : ऊँ धान्यायै नम:, धरायै नम:, विशालायै नम:, स्थिराय नम:, रूपायै नम:, गदायै नम:, निशायै नम:, विभवायै नम:, प्रभवायै नम:। शेष पूजन पूर्ववत् करे।

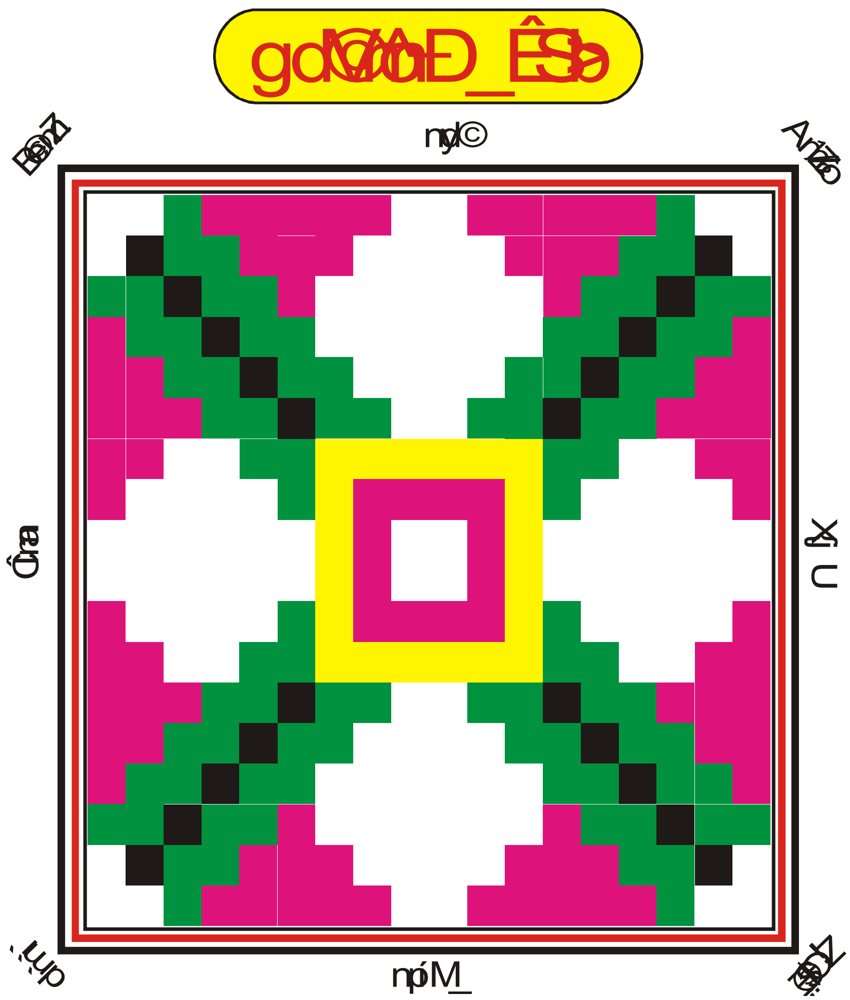

सर्वतोभद्र मण्डल का निर्माण :-

पूर्वदिशा में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्त्र वेदी पर पीत वस्त्र बिछाकर यथोचित धान्य अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर (उपरोक्त चित्र के अनुसार के अनुसार) धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। 324 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए। समानभाग से पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर 18-18 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए । तत्पश्चात् अधोलिखित मन्त्र से उनमें देवाताओं का वर्ण (रंग) के अनुसार स्थापन करके आवाहन-स्थापन करना चाहिए:-

1. ऊँ ब्रह्मणे नम:।
2. ऊँ सोमाय नम:।
3. ऊँ ईशानाय नम:।
4. ऊँ इन्द्राय नम:।
5. ऊँ अग्नये नम:।
6. ऊँ यमाय नम:।
7. ऊँ निर्ऋतये नम:।
8. ऊँ वरुणाय नम:।
9. ऊँ वायवे नम:।
10. ऊँ अष्टवसुभ्य: नम:।
11. ऊँ एकादशरुद्रेभ्य: नम:।
12. ऊँ द्वादशादित्येभ्य: नम:।
13. ऊँ अश्विभ्यां नम:।
14. ऊँ विश्वेभ्यो देवेभ्य: नम:।
15. ऊँ पितृभ्यो नम:।
16. ऊँ सप्तयक्षेभ्य: नम:।
17. ऊँ पञ्चभूतेभ्यो नम:।
18. ऊँ अष्टकुलनागेभ्य: नम:।
19. ऊँ गंधर्वभ्यो नम:।
20. ऊँ अप्सरेभ्यो नम:।
21. ऊँ स्कन्दाय नम:।
22. ऊँ नन्दिने नम:।
23. ऊँ शूलकालाभ्यां नम:।
24. ऊँ दक्षादिसप्तगणेभ्य: नम:।
25. ऊँ दुर्गायै नम:।
26. ऊँ विष्णवे नम:।

27. ॐ स्वधायै नमः। 28. ॐ मृत्यवे नमः।

29. ॐ रोगाय नमः। 30. ॐ गणपतये नमः।

31. ॐ अद्भ्यः नमः। 32. ॐ मरुद्भ्यः नमः।

33. ॐ पृथिव्यै नमः। 34. ॐ गंगादिनदीभ्यः नमः।

35. ॐ सप्तसागरेभ्यः नमः। 36. ॐ मेरवे नमः।

37. ॐ गदायै नमः। 38. ॐ त्रिशूलाय नमः।

39. ॐ वज्राय नमः। 40. ॐ शक्तये नमः।

41. ॐ दण्डाय नमः। 42. ॐ खड्गाय नमः।

43. ॐ पाशाय नमः। 44. ॐ अंकुशाय नमः।

45. ॐ गौतमाय नमः। 46. ॐ भरद्वाजाय नमः।

47. ॐ विश्वामित्राय नमः। 48. ॐ कश्यपाय नमः।

49. ॐ जगदग्नये नमः। 50. ॐ वशिष्ठाय नमः।

51. ॐ अत्रये नमः। 52. ॐ अरुन्धत्यै नमः।

53. ॐ ऐन्द्रयै नमः। 54. ॐ कौमार्यै नमः।

55. ॐ ब्राह्मयै नमः। 56. ॐ वाराह्यै नमः।

57. ॐ चामुण्डायै नमः। 58. ॐ वैष्णव्यै नमः।

59. ॐ माहेश्वर्यै नमः। 60. ॐ वैष्णव्यै नमः।

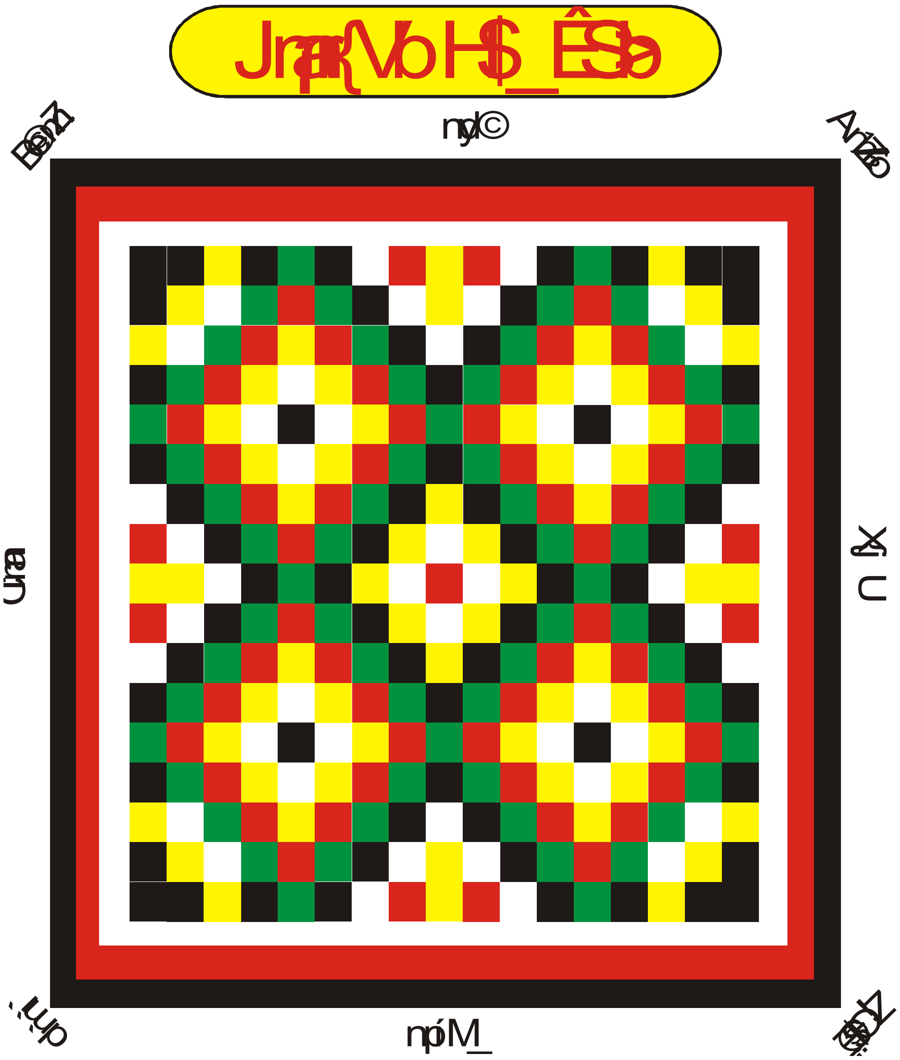

गौरीतिलक मण्डल का निर्माण :- पूर्वदिशा में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर लाल वस्त्र बिछाकर यथोचित धान्य अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर (उपयुक्त चित्र के अनुसार के अनुसार) धान्य से मण्डल का निर्माण करना चाहिए। 289 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए। समानभाग से पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर 17-17 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए। देवी से सम्बन्धित सभी अनुष्ठानों में गौरी तिलक मण्डल का निर्माण करना चाहिए । तत्पश्चात् अधोलिखित मन्त्र से उनमें देवाताओं का वर्ण (रंग) के अनुसार स्थापन करके आवाहन-स्थापन करना चाहिए ।

कलशसमीपे पीतकोष्ठेषु चतुरोदेवान्‌शिरोङ्गशक्तिं पूजयेत्‌ -

1 (ऐशा.) ऊँ महाविष्णवे नम: 2 (नैर्ऋत्यां) ऊँ महालक्ष्म्यै नम: 3 (आग्नेय्यां) ऊँ महेश्वराय नम: 4 (वायव्यां)ऊँ महामायायै नम:।

हृदयाङ्गमध्ये चतुर्षु कोष्ठेषु चतुर्वेदान्पूजयेत्- 5 ऊँ ऋग्वेदाय नम: 6 ऊँ यजुर्वेदाय नम: 7 ऊँ सामवेदाय नम: 8 ऊँ अथर्ववेदाय नम: पूर्वादीशानपर्यन्तं श्वेतकोष्ठेषु अष्टदेवान्‌ पूजयेत्-

9 ऊँ अद्‌भ्यो नम: 10 ऊँ जलोद्भवाय नम: 11 ऊँ ब्रह्मणे नम: 12 ऊँ प्रजापतये नम: 13 ऊँ शिवाय नम:

अग्निकोणे श्वेतकोष्ठयो: -14 ऊँ अनन्ताय नम: 15 ऊँ परमेष्ठिने नम:

अग्निकोणे चतुष्कोष्ठेषु-16 ऊँ धात्रे नम: 17 ऊँ विधात्रे नम: 18 ऊँ अर्य्यम्णे नम: 19 ऊँ मित्राय नम:

दक्षिणश्वेतकोष्ठेषु -20 ऊँ वरुणाय नम: 21 ऊँ अंशुमते नम: 22 ऊँ भगाय नम: 23 ऊँ इन्द्राय नम: 24 ऊँ विवस्वते नम:

नैर्ऋत्यकोणे श्वेतकोष्ठयो:-25 ऊँ पूष्णे नम: 26 ऊँ पर्यन्याय नम:

नैर्ऋत्यकोणे श्वेतकोष्ठेषु-27 ऊँ त्वष्ट्रयै नम: 28 ऊँ दक्षयज्ञाय नम: 29 ऊँ देववसवे नम: 30 ऊँ महासुताय नम:

पश्चिमे श्वेतकोष्ठेषु- 31 ऊँ सुधर्मणे नम: 32 ऊँ शङ्गपदे नम: 33 ऊँ महाबाहवे नम: 34 ऊँ वपुष्मते नम: 35 ऊँ अनन्ताय नम:

वायव्ये श्वेतकोष्ठेषु- 36 ऊँ महेरणाय नम: 37 ऊँ विश्वावसवे नम: 38 ऊँ सुपर्वणे नम: 39 ऊँ विष्टराय नम: 40 ऊँ रुद्रदैवताय नम: 41 ऊँ ध्रुवाय नम:

उत्तरेश्वेतकोष्ठेषु- 42 ऊँ धरायै नम: 43 ऊँ सोमाय नम: 44 ऊँ आपवत्साय नम: 45 ऊँ नलाय नम: 46 ऊँ अनिलाय नम:

ईशान्ये श्वेतकोष्ठेषु- 47 ऊँ प्रत्यूषाय नम: 48 ऊँ प्रभासाय नम:

ईशानकोण श्वेतकोष्ठेषु- 49 ऊँ आवत्राय नम: 50 ऊँ सावत्राय नम: 51 ऊँ द्रोणाय नम: 52 ऊँ पुष्कराय नम:

अथ शिरोंगशक्तिं पूजयेत् 53 ऊँ ह्री कार्यै नम: 54 ऊँ ह्रि यै नम: 55 ऊँ कात्यायन्यै नम: 56 ऊँ चामुण्डायै नम: 57 ऊँ महादिव्यायै नम: 58 ऊँ महाशब्दायै नम: 59 ऊँ सिद्धिदायै नम: 60 ऊँ ऐं नम: 61 ऊँ श्रीं श्रियै नम: 62 ऊँ ह्री ह्रियै नम:।

ईशानकोणे पीतकोष्ठेषु- 63 ऊँ लक्ष्म्यै नम: 64 ऊँ श्रियै नम: 65 ऊँ सुधनायै नम: 66 ऊँ मेधायै नम: 67 ऊँ प्रज्ञायै नम: 68 ऊँ मत्यै नम: 69 ऊँ स्वाहायै नम: 70 ऊँ सरस्वत्यै नम:।

अग्रिकोणे हरित्कोष्ठेषु- 71 ऊँ गौर्यै नम: 72 ऊँ पद्मायै नम: 73 ऊँ शच्यै नम: 74 ऊँ सुमेधायै नम: 75 ऊँ सावित्र्यै नम: 76 ऊँ विजयायै नम: 77 ऊँ देवसेनायै नम: 78 ऊँ स्वाहायै नम: 79 ऊँ स्वधायै नम: 80 ऊँ मातृभ्यो नम: 81 ऊँ गायत्र्यै नम:।

अग्रिकोणे पीतकोष्ठेषु-82 ऊँ लोकमातृभ्यो नम: 83 ऊँ धृत्यै नम: 84 ऊँ पुष्ट्यै नम: 85 ऊँ तुष्ट्यैनम: 86 ऊँ आत्मदेवतायै नम: 87 ऊँ गणेश्वर्यै नम: 88 ऊँ कुलमात्रै नम: 89 ऊँ शान्त्यै नम:

ईशानकोणे वाप्यां कृष्णकोष्ठे श्वेतेषु -90 ऊँ जयन्त्यै नम: 91 ऊँ मङ्गलायै नम: 92 ऊँ काल्यै नम: 93 ऊँ भद्रकाल्यै नम: 94 ऊँ कपालिन्यै नम:

अग्रिकोणे वाप्यां कृष्णकोष्ठे श्वेतेषु -495 ऊँ दुर्गायै नम: 96 ऊँ क्षमायै नम: 97 ऊँ शिवायै नम: 98 ऊँ धात्र्यै नम: 99 ऊँ स्वाहास्वधाभ्यां नम:

(अथ शिखांगदेवपूजनम्) नैर्ऋत्यकोणे हरित्कोष्ठेषु- 11- 100 ऊँ दीप्यमानायै नम: 101 ऊँ दीप्तायै ऊँ 102 ऊँ सूक्ष्मायै नम: 103 ऊँ विभूत्यै नम: 104 ऊँ विमलायै नम: 105 ऊँ परायै नम: 106 ऊँ अमोघायै नम: 107 ऊँ वैद्युतायै नम: 108 ऊँ सर्वतोमुख्यै नम: 109 ऊँ आनन्दायै नम: 110 ऊँ नन्दिन्यै नम:।

नैर्ऋत्यकोणे पीतकोष्ठेषु-8 111 ऊँ शक्त्यै नम: 112 ऊँ महासूक्ष्मायै नम: 113 ऊँ करालिन्यै नम: 114 ऊँ भारत्यै नम: 115 ऊँ ज्योतिषमत्यै नम: 116 ऊँ ब्राह्मयै नम: 117 ऊँ माहेश्वर्यै नम: 118 ऊँ कौमार्यै नम:।

वायुकोणे हरित्कोष्ठेषु-11 119 ऊँ वैष्णव्यै नम: 120 ऊँ वाराह्यै नम: 121 ऊँ इन्द्राण्यै नम: 122 ऊँ चण्डिकायै नम: 123 ऊँ बुद्ध्यै नम: 124 ऊँ लज्जायै नम: 125 ऊँ वपुष्मत्यै नम: 126 ऊँ शान्त्यै नम: 127 ऊँ कान्त्यै नम: 128 ऊँ रत्यै नम: 129 ऊँ प्रीत्यै नम:।

वायुकोणे पीतकोष्ठेषु-8130 ऊँ कीर्त्यै नम: 131 ऊँ प्रभायै नम: 132 ऊँ काम्यायै नम: 133 ऊँ कान्तायै नम: 134 ऊँ ऋद्ध्यै नम: 135 ऊँ दयायै नम: 136 ऊँ शिवदूत्यै नम: 137 ऊँ श्रद्धायै नम: ।

नैर्ऋत्यवाप्यां कृष्णकोष्ठे 1 श्वेतेषु 4- 138 ऊँ क्षमायै नम: 139 ऊँ क्रियायै नम: 140 ऊँ विद्यायै नम: 141 ऊँ मोहिन्यै नम: 142 ऊँ यशोवत्यै नम:।

वायव्यवाप्यां कृष्णकोष्ठेषु 1 श्वेतेषु 4- 143 ऊँ कृपावत्यै नम: 144 ऊँ सलिलायै नम: 145 ऊँ सुशीलायै नम: 146 ऊँ ईश्वर्यै नम: 147 ऊँ सिद्धेश्वर्यै नम:।

कवचांगेषु ऋषीन्पूजयेत्पूर्वेऽरुणपीतकोष्ठेषु-4-148 ऊँ द्वैपायनाय नम: 149 ऊँ भारद्वाजाय नम: 150 ऊँ मित्राय नम: 151 ऊँ सनकाय नम: 152 ऊँ गौतमाय नम: 153 ऊँ सुमन्तवे नम: 154 ऊँ त्वष्ट्रै नम: 155 ऊँ सनन्दाय नम:।

पश्चिमेऽरुणपीतकोष्ठेषु 4- 156 ऊँ देवलाय नम: 157 ऊँ व्यासाय नम: 158 ऊँ ध्रुवाय नम: 159 ऊँ सनातनाय नम:।

उत्तरेऽरुणपीतकोष्ठेषु-4- 160 ऊँ वसिष्ठाय नम: 161 ऊँ च्यवनाय नम: 162 ऊँ पुष्कराय नम: 163 ऊँ सनत्कुमाराय नम:।

ईशाने, अग्निकोणे, नैर्ऋत्यकोणे, वायुकोणे कृष्णकोष्ठे च एकैकम्- 164 ऊँ कण्वाय नम: 165 ऊँ मैत्राय नम: 166 ऊँ कवये नम: 167 ऊँ विश्वामित्राय नम:।

मध्ये पीतकोष्ठेषु-8- 168 ऊँ वामदेवाय नम: 169 ऊँ सुमन्ताय नम: 170 ऊँ जैमिनये नम: 171 ऊँ क्रतवे नम: 172 ऊँ पिप्पलादाय नम: 173 ऊँ गर्गाय नम: 174 ऊँ पराशराय नम: 175 ऊँ वैशंपायनाय नम:।

मध्ये कृष्णकोष्ठेषु ईशानत:-10- 176 ॐ मार्कण्डेयाय नम: 177 ॐ मृकंडाय नम: 178 ॐ लोमशाय नम: 179 ॐ पुलहाय नम: 180 ॐ पुलस्त्याय नम: 181 ॐ बृहस्पतये नम: 182 ॐ जमदग्नये नम: 183 ॐ जामदग्न्याय नम: 184 ॐ दालभ्याय नम: 185 ॐ गालवाय नम:।

मध्ये हरित्कोष्ठेषु ईशानत:-16- 186 ॐ याज्ञवल्क्याय नम: 187 ॐ दुर्वाससे नम: 188 ॐ सौभरये नम: 189 ॐ जावालये नम: 190 ॐ वाल्मीकये नम: 191 ॐ बह्वृचाय नम: 192 ॐ इन्द्रप्रमितये नम: 193 ॐ देवमित्राय नम: 194 ॐ जाजलये नम: 195 ॐ शाकल्याय नम: 196 ॐ मुद्गलाय नम: 197 ॐ जातुकर्ण्याय नम: 198 ॐ बलाकाय नम: 199 ॐ कृपाचार्याय नम: 200 ॐ कौशल्याय नम: 201 नेत्राङ्गपूजनम् ।

ईशानकोणेऽरुणकोष्ठेषु-12- 202 ॐ ब्रह्माग्नये नम: 203 ॐ गार्हष्पत्याग्नये नम: 204 ॐ ईश्वराग्नये नम: 205 ॐ दक्षिणाग्नये नम: 206 ॐ वैष्णवाग्नये नम: 207 ॐ आहवनीयाग्नये नम: 208 ॐ सप्तजिह्वाग्नये नम: 209 ॐ इध्मजिह्वाग्नये नम: 210 ॐ प्रवग्र्याग्नये नम: 211 ॐ वडवाग्नये नम: 212 ॐ जठराग्नये नम: 213 ॐ लौकिकाग्नये नम:।

अग्निकोणे अरुणकोष्ठेषु-12- 214 ॐ सूर्याय नम: 215 ॐ वेदाङ्गाय नम: 216 ॐ भानवे नम: 217 ॐ इन्द्राय नम: 218 ॐ खगाय नम: 219 ॐ गभस्तिने नम: 220 ॐ यमाय नम: 221 ॐ अंशुमते नम: 222 ॐ हिरण्यरेतसे नम: 223 ॐ दिवाकराय नम: 224 ॐ मित्राय नम: 225 ॐ विष्णवे नम:।

नैर्ऋत्यकोणे अरुणकोष्ठेषु-12- 226 ॐ शम्भवे नम: 227 ॐ गिरिशाय नम: 228 ॐ अजैकपदे नम: 229 ॐ अहिर्बुध्न्याय नम: 230 ॐ पिनाकपाणये नम: 231 ॐ अपराजिताय नम: 232 ॐ भुवनाधीश्वराय नम: 233 ॐ कपालिने नम: 234 ॐ विशांपतये नम: 235 ॐ रुद्राय नम: 236 ॐ वीरभद्राय नम: 237 ॐ अश्विनीकुमाराभ्यां नम:।

वायुकोणे अरुणकोष्ठेषु-11-238 ॐ आवहाय नम: 239 ॐ प्रवहाय नम: 240 ॐ उद्वहाय नम: 241 ॐ संवहाय नम: 242 ॐ विवहाय नम: 243 परीवहाय नम: 244 ॐ धरायै नम: 245 ॐ अद्भ्यो नम: 246 ॐ अग्नये नम: 247 ॐ वायवे नम: 248 ॐ आकाशाय नम:।

ऋषीन् पूजयेत् ईशानादीशपर्यन्तं बाह्यपंक्तौ कृष्णकोष्ठेषु 249 ॐ हिरण्यनाभाय नम: 250 ॐ पुष्पञ्जयाय नम: 251 ॐ द्रोणाय नम: 252 ॐ शृंगिणे नम: 253 ॐ बादरायणाय नम: 254 ॐ अगस्त्याय नम: 255 ॐ मनवे नम: 256 ॐ कश्यपाय नम: 257 ॐ धौम्याय नम: 258 ॐ भृगवे नम: 259 ॐ वीतिहोत्राय नम: 260 ॐ

मधुच्छंदसे नम: 261 ऊँ वीरसेनाय नम: 262 ऊँ कृतवृष्णवे नम: 263 ऊँ अत्रये नम: 264 ऊँ मेधातिथये नम: 265 ऊँ अरिष्टांनेमये नम: 266 ऊँ अङ्गिरसाय नम: 267 ऊँ इन्द्रप्रमदाय नम: 268 ऊँ इध्मवाहवे नम: 269 ऊँ पिप्पलादाय नम: 270 ऊँ नारदाय नम: 271 ऊँ अरिष्टासेनाय नम: 272 ऊँ अरुणाय नम: 273 ऊँ कपिलाय नम: 274 ऊँ कर्दमाय नम: 275 ऊँ मरीचये नम: 276 ऊँ क्रतवे नम: 277 ऊँ प्रचेतसे नम: 278 ऊँ उत्तमाय नम: 279 ऊँ दधीचये नम: 280 ऊँ श्राद्धदेवेभ्यो नम: 281 ऊँ गणदेवेभ्यो नम: 282 ऊँ विद्याधरेभ्यो नम: 283 ऊँ अप्सरेभ्यो नम: 284 ऊँ यक्षेभ्यो नम: 285 ऊँ रक्षोभ्यो नम: 286 ऊँ गन्धर्वेभ्यो नम: 287 ऊँ पिशाचेभ्यो नम: 288 ऊँ गुह्यकेभ्यो नम: 289 ऊँ सिद्धदेवेभ्यो नम: 290 ऊँ औषधीभ्यो नम: 291 ऊँ भूतग्रामाय नम: 292 ऊँ चतुर्विधभूतग्रामाय नम: ॥

एकलिंगतोभद्र मण्डलम्

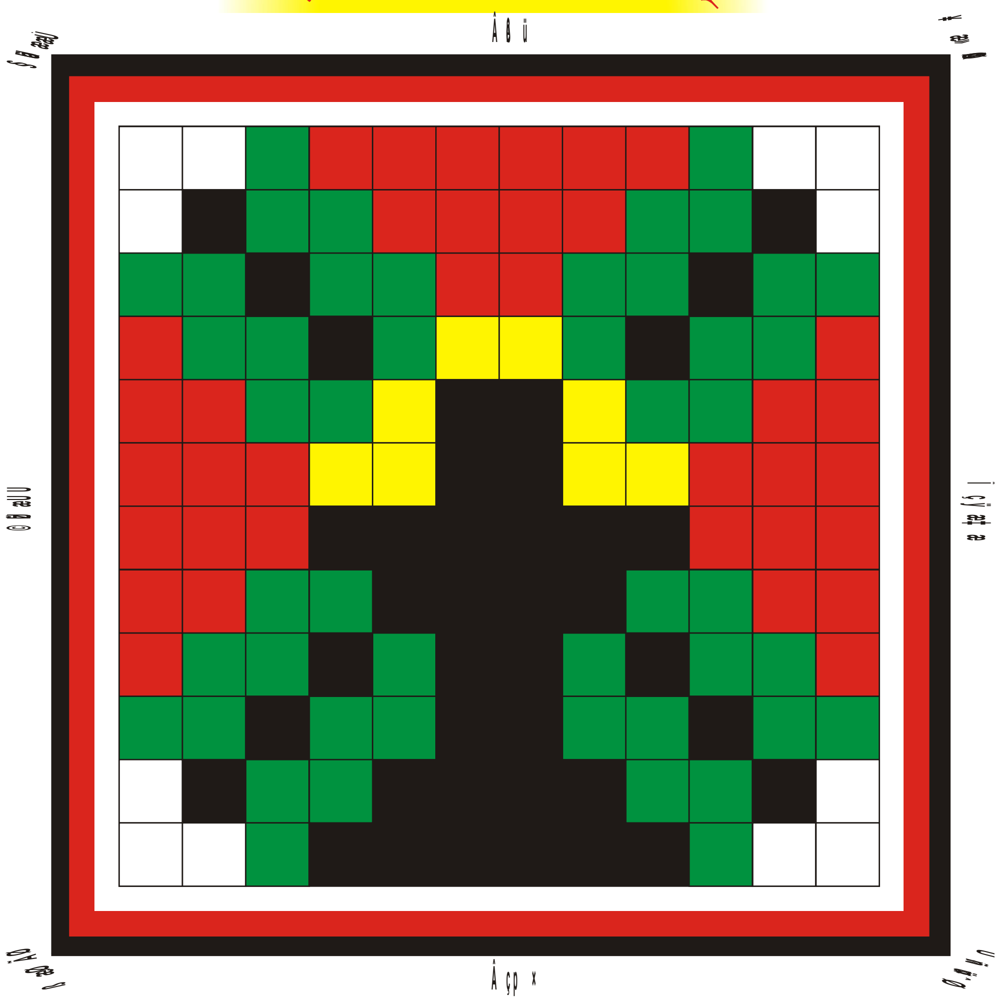

चतुर्लिङ्गतोभद्र मण्डलम्

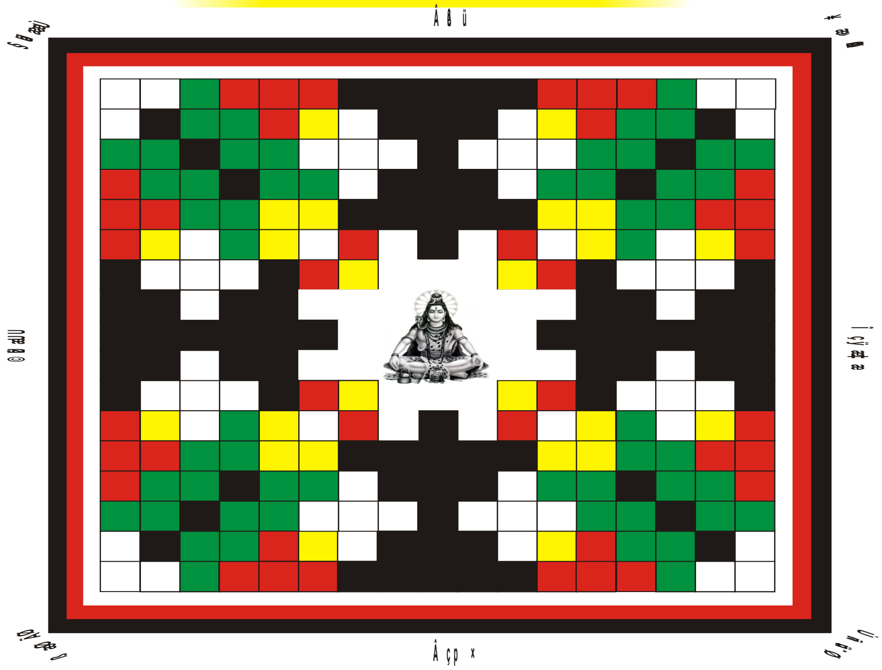

एकलिङ्गतोभद्र विशेष देवता -

1. ऊँ असिताङ्ग भैरवाय नम:।
2. ऊँ रुरुभैरवाय नम:।
3. ऊँ चण्डभैरवाय नम:।
4. ऊँ क्रोधभैरवाय नम:।
5. ऊँ उन्मत्त भैरवाय नम:।
6. ऊँ कपालभैरवाय नम:।
7. ऊँ भीषण भैरवाय नम:।
8. ऊँ संहार भैरवाय नम:।

2.4 सारांश :-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् पूजन विधि के महत्त्वपूर्ण अङ्ग मण्डल-प्रकरण का ज्ञान किया । इसके अन्तर्गत गणपति, षोड़श मातृका, वसोद्र्धारा, नवग्रह, चतु:षष्टी योगिनी, क्षेत्रपाल, गृहवास्तु मण्ड़ल, चतु:षष्टिपद वास्तुमण्ड़ल, सर्वतोभद्र मण्ड़ल, गौरीतिलक मण्ड़ल, एकलिङ्गतोभद्र एवं चतुर्लिङ्गतोभद्र मण्ड़लों के रंगीन चित्रों के साथ उनमें देवताओं के स्थापन की विधि भी बताई गयी है । वर्तमान में मण्डल निर्माण हेतु वेदी के स्थान पर चौकी का भी उपयोग होने लगा है, परन्तु बड़े यज्ञादि अनुष्ठानों में वेदी पर ही

मण्ड़लों का निर्माण करना चाहिए। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप स्वयं अपने स्तर पर मण्ड़लों का निर्माण कर पायेंगे।

2.5 शब्दावली -

1. आवाहन = पूजन में देवताओं को आमन्त्रित करना,

2. शिला = पत्थर,

3. काष्ठ = लकड़ी

4. कुमकुम = रोली

5. मिश्रित = मिलाना

6. मण्ड़ल = देवतओं की स्थापना हेतु स्थान,

7. ईशान = पूर्व व उत्तर का कोण

8. आग्नेय = पूर्व व दक्षिण का कोण

9. नैर्ऋत्य = दक्षिण व पश्चिम को कोण

10. वायव्य = पश्चिम व उत्तर का कोण

10. क्षेत्रपाल = क्षेत्र का रक्षण करने वाले देव

11. गृहवास्तु = घर का वास्तु

12. अक्षतपुञ्ज = चावलों की मुष्टिप्रमाण ढेरी

2.6 अतिलघुत्तरीय प्रश्न :-

प्रश्न - 1 : स्वस्तिक चिह्न का उपयोग किस देवता के मण्ड़ल-निर्माण हेतु किया जाता है?

उत्तर : स्वस्तिक चिह्न का उपयोग गणपति के मण्ड़ल-निर्माण हेतु किया जाता है।

प्रश्न - 2 : षोड़श-मातृका मण्डल में कितने कोष्ठकों का निर्माण किया जाता है ?

उत्तर : षोड़श-मातृका मण्डल में षोड़श कोष्ठकों का निर्माण किया जाता है।

प्रश्न - 3 : नवग्रह मण्डल में बुध की आकृति किस प्रकार की है ?

उत्तर : नवग्रह मण्डल में बुध की धनुष के आकार की है।

प्रश्न - 4 : योगिनी-मण्डल का निर्माण किस कोण में किया जाता है ?

उत्तर : योगिनी-मण्डल का निर्माण आग्नेय-कोण में किया जाता है।

प्रश्न - 5 : सर्वतोभद्र मण्डल का निर्माण किस दिशा में करना चाहिए ?

उत्तर : सर्वतोभद्र मण्डल का निर्माण पूर्व-दिशा के मध्य में करना चाहिए।

2.7 लघुत्तरीय प्रश्न :-

प्रश्न - 1 : गणपति, षोड़शमातृका व वसोद्र्धारा मण्ड़लों का सचित्र वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 2 : नवग्रह-मण्डल का सचित्र वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 3 : चतु:षष्टि योगिनी-मण्डल का सचित्र वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 4 : सर्वतोभद्र-मण्डल का सचित्र वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 5 : एकलिङ्गतोभद्र-मण्डल का सचित्र वर्णन कीजिये ?

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ -

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशतीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

2. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अ. भा. प्रा. ज्यो. शो. सं., जयपुर।

3. अनुष्ठानप्रकाश सम्पादक - पण्डित चतुर्थीलाल शर्मा प्रकाशक - खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई।

इकाई — 3

प्रारम्भिक पूजनकर्म

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 विषय-प्रवेश

3.4 सारांश

3.5 शब्दावलि

3.6 अतिलघुत्तरीय प्रश्न

3.7 लघुत्तरीय प्रश्न

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

3-1 प्रस्तावना :

प्रत्येक पूजन के प्रारम्भ में आत्मशुद्धि, गुरु स्मरण, पवित्र धारण, पृथ्वी पूजन, सङ्कल्प, भैरव प्रणाम, दीप पूजन, शङ्ख-घण्टा पूजन के पश्चात् ही देव पूजन करना चाहिए । व्रतोद्यापन एवं विशेष अनुष्ठानों के समय यज्ञपीठ की स्थापना का विशेष महत्त्व होता है, अत: प्रधान देवता की पीठ रचना पूर्व दिशा के मध्य में की जाये । पीठ रचना हेतु विविध रंगों के अक्षत या अन्नादि लिये जाते है। सभी व्रतोद्यापनों में सर्वतोभद्रपीठ विशेषरूप से बनाया जाता है । पूजन के अनेक प्रकार प्रचलित है और शास्त्रों में पञ्चोपचार, षोडशोपचार, शतोपचार आदि विविध वस्तुओं से अर्चना के विधि विधान की विस्तार से चर्चा है। श्रद्धा भक्ति के अनुसार उनका संग्रह करना चाहिए।

3.2 उद्देश्य :

1. पूजन के आवश्यक नियमों का ज्ञान।

2. पूजन में उपयुक्त सामग्रियों का ज्ञान ।

3. प्रारम्भिक पूजन की विधि का ज्ञान।

3.3 विषय-प्रवेश :

देवार्चन हेतु विशिष्ट सामग्री :-

पंचामृत :- घी, दूध, दही, बूरा, शहद।

पंचगव्य :- गोबर, गौमूत्र, गौदुग्ध, गाय का घी, गाय का दही।

पंचरत्न :- माणिक्य, पन्ना, पुखराज, प्रवाल (मूँगा), मोती।

पंचपल्लव :- पीपल, आम, गूलर, बड़, अशोक

सप्तमृत्तिका :- हाथी का स्थान, घोड़ा, वल्मीक, दीमक, नदी का संगम, तालाब, गोशाला+राजद्वार।

सप्तधान्य :- उड़द, मूँग, गेहूँ, चना, जौ, चावल, कङ्गनी।

सप्तधातु :- सोना, चाँदी, ताम्बा, लोहा, राँगा, सीसा, आरकुट।

अष्टमहादान :- कपास, नमक, घी, सप्तधान्य, स्वर्ण, लोहा, भूमि, गोदान।

अष्टांगअर्घ्य :- जल, पुष्प, कुशा का अग्रभाग, दही, चांवल, केसर (कुमकुम/रोली), दूर्वा, सुपारी, दक्षिणा।

दशमहादान :- गौ, भूमि, तिल, स्वर्ण, घी, वस्त्र, धान्य, गुड़, चाँदी, नमक।

पंचोपचार :- गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य।

पंचदेव :- सूर्य, गणेश, शक्ति, शिव, विष्णु।

सात पाताल :- तल, अतल, सुतल, वितल, तलातल, रसातल, पाताल।

सप्तद्वीप :- जम्बु, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक, पुष्कर।

जम्बुद्वीप :- इलावृत्त, भद्राश्व, हरिवर्ष, केतुमाल, रम्यक, हिरण्यमय, कुरू, किंपुरुष, भारतवर्ष।

बासी जल, पुष्प का निषेध :- जो फूल, पत्ते और जल बासी हो गये हों उन्हें देवताओं पर नहीं चढ़ाएँ, केवल तुलसीदल और गङ्गाजल कभी बासी नहीं होते हैं। तीर्थों का जल भी बासी नहीं होता है। वस्त्र, यज्ञोपवीत और आभूषणों में भी निर्माल्यदोष नहीं लगता है। माली के घर में रखे हुए फूलों में बासी का दोष नहीं लगता है। फूल को जल में डुबोकर धोना मना है, केवल जल से इसका प्रोक्षण कर देना चाहिए। कमल की कलियों को छोड़कर दूसरी कलियों को चढ़ाना मना है। फूल, फल और पत्ते जैसे उगते है उन्हें वैसे ही चढ़ाना चाहिए। उत्पन्न होते समय इनका मुख ऊपर की ओर होता है, अत: चढ़ाते समय इनका मुख ऊपर की ओर ही होना चाहिए। दूर्वा एवं तुलसीदल को अपनी ओर तथा बिल्वपत्र को नीचे मुख करके चढ़ाना चाहिए। इससे भिन्न पत्तों को किसी भी प्रकार से चढ़ा सकते हैं। दाहिने हाथ के करतल को उत्तान कर मध्यमा, अनामिका और अंगूठे की सहायता से फूल चढ़ाना चाहिए। चढ़े हुए फूल को अंगूठे व तर्जनी की सहायता से उतारना चाहिए।

देवताओं की पूजा तथा स्थान :- पञ्चदेव (सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव, विष्णु) की पूजा सभी कार्यों में करनी चाहिए। गृहस्थी एक मूर्ति की पूजा नहीं करे, अपितु अनेक देवमूर्तियों की पूजा करे। इससे कामना पूरी होती है। घर में दो शिवलिङ्ग, तीन गणेश, दो शङ्ख, दो सूर्य, तीन दुर्गा, दो गोमती चक्र और दो शालिग्राम की पूजा करने से गृहस्थी मनुष्य का कल्याण कभी नहीं होता है। शालिग्राम की प्राण प्रतिष्ठा नहीं होती है। बाण लिङ्ग तीनों लोकों में विख्यात है, उनकी प्राण प्रतिष्ठा, संस्कार या आह्वान कुछ भी नहीं होता है। पत्थर, लकड़ी, सोना या अन्य धातुओं की मूर्तियों की प्रतिष्ठा घर या मन्दिर में करनी चाहिए। कुमकुम, केसर और कर्पूर के साथ घिसा हुआ चन्दन, पुष्प आदि हाथ में तथा चन्दन ताम्र पात्र में रखे। तृण, काष्ठ, पत्ता, पत्थर, ईंट आदि से ढके सोमसूत्र का लङ्घन किया जा सकता है। पूजन में जिस सामग्री का अभाव हो उसकी पूर्ति मानसिक भावना से करनी चाहिए अथवा उस सामग्री के लिए अक्षत, पुष्प या जल चढ़ा दे, **"तत्तद् द्रव्यं तु सङ्कल्पस्य पुष्पैर्वापि समर्चयेत्। अर्चनेषु विहीनं यत् तत्तोयेन प्रकल्पयेत्॥** केवल नैवेद्य चढ़ाने से अथवा केवल चन्दनपुष्प चढ़ाने से भी पूजा मान ली जाती है।

''केवलनैवेद्यसमर्पणेव पूजासिद्धिरिति...।

गन्धपुष्पसमर्पणमात्रेण पूजासिद्धिरित्यपि पूर्वैः॥

पूजा करते समय प्रयोग के लिए उपयुक्त आसन

कुश, कम्बल, मृगचर्म, व्याघ्रचर्म और रेशम का आसन जपादि के लिए उत्तम है। बाँस, मिट्टी, पत्थर, तृण, गोबर, पलाश और पीपल जिसमें लोहे की कील लगी हो ऐसे आसन पर नहीं बैठना चाहिए तथा गृहस्थ को मृगचर्म के आसन पर नहीं बैठना चाहिए। स्नान, दान, जप, होम, सन्ध्या और देवार्चन कर्म में बिना शिखा बाँधे कभी कर्म नहीं करना चाहिए।

गणेश, विष्णु, शिव, देवी के पूजन हेतु विशिष्ट नियम :-

1. अङ्गुष्ठ से देवता का मर्दन नहीं करना चाहिए और न ही अधम पुष्पों से पूजन करना चाहिए, कुश के अग्रिम भाग से जल नही प्रोक्षण करना चाहिए, ऐसा करना वज्रपात के समान होता है।
2. अक्षत से विष्णु की, तुलसी से गणेश की, दूर्वा से दुर्गा की और विल्वपत्र से सूर्य की पूजा नहीं करनी चाहिए।
3. अधोवस्त्र में रखा हुआ तथा जल द्वारा भिगोया हुआ पुष्प निर्माल्य हो जाता है, देवता उस पुष्प को ग्रहण नहीं करते हैं।
4. शिव पर कुन्द, विष्णु पर धत्तूरा, देवी पर अर्क तथा सूर्य पर तगर अर्पित नहीं करना चाहिए।
5. पत्र या पुष्प उलटकर नहीं चढ़ाना चाहिए, पत्र या पुष्प जैसा ऊर्ध्व मुख उत्पन्न होता है, वैसे ही अर्पित करना चाहिए। केवल विल्वपत्र ही उलटकर अर्पित करना चाहिए।
6. पत्ते के मूलभाग को, अग्रभाग को, जीर्णपत्र को तथा शिरायुक्त को चढ़ाने पर क्रमशः व्याधि, पाप, आयुष क्षय एवं बुद्धि का नाश होता है।
7. नागरबेल के पत्ते की डण्डी व्याधि और अग्रभाग से पाप होता है, सड़ा हुआ पान आयु और शिरा बुद्धि को नष्ट करती है। अतएव डण्डी, अग्रभाग और शिरा को निकाल देवे।

8. संक्रान्ति द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, रविवार, और सन्ध्या के समय तुलसी को तोड़ना निषिद्ध है। यदि विशेष आवश्यक (भगवान् विष्णु के पूजन हेतु) हो तो नीचे लिखे मन्त्र अथवा भगवान विष्णु का स्मरण करते हुए तोड़ सकते हैं :-

त्वदङ्गसम्भवेन त्वां पूजयामि यथा हरिम।

तथा नाशय विघ्नं मे ततो यान्ति पराङ्गतिम।।

चरणामृत ग्रहण (तीन बार) विधि :- बायें हाथ पर दोहरा वस्त्र रखकर दाहिना हाथ रख दे, तत्पश्चात् चरणामृत लेकर पान करें। चरणामृत ग्रहण करने समय उच्चारणीय मन्त्र :-

कृष्ण! कृष्ण! महाबाहो! भक्तानामार्तिनाशनम ।

सर्वपापप्रशमनं पादोदकं प्रयच्छ मे।।

चरणामृत पान करते समय उच्चारणीय मन्त्र :-

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम।

विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते।।

दु:खदौर्भाग्यनाशाय सर्वपापक्षयाय च ।

विष्णो: पञ्चामृतं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते।।

देव पूजन में विशेष :-

1. **द्रोण पुष्प का महत्व** :- ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि को द्रोणपुष्प अत्यन्त प्रिय है। यह पुष्प दुर्गा को सर्वकामना और अर्थ की सिद्धि के लिए प्रदान करना चाहिए।

2. **किस देवता की कितनी बार प्रदक्षिणा करे ? :-** चण्डी की एक परिक्रमा, सूर्य की सात परिक्रमा, गणेश की तीन, विष्णु की चार तथा भगवान शिव की आधी प्रदक्षिण करनी चाहिए।

3. **दीप निर्वाण का दोष :-** देवताओं के पूजन में स्थित दीपक को शान्त (बुझाना) या हटाना नहीं चाहिए क्योंकि दीपक को हरण करे वाला व्यक्ति अन्धा हो जाता है तथा उसे बुझाने वाला व्यक्ति काणा हो जाता है।

4. **देवताओं को प्रिय पत्र-पुष्प :-** भगवान शिव को बिल्वपत्र बहुत प्रिय है, विष्णु को तुलसी, गणेश को दूर्वा (घास), अम्बाजी को विभिन्न प्रकार के पुष्प तथा भगवान सूर्य को लाल रंग का करवीर पुष्प बहुत प्रिय है।

एक लकड़ी की चौकी के ऊपर गणेश, षोडशमातृका, सप्तमातृका स्थापित करे। दूसरी चौकी पर नवग्रह, पञ्चलोकपाल आदि स्थापति करे। तीसरी चौकी को बीच में स्थापित करके उस पर प्रधान देवता को स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

भूमिपरीक्षण :-

स्वयं की भूमि पर ही यज्ञादि कर्म करने चाहिए तथापि अन्य तीर्थ अथवा अन्य किसी स्थान पर यज्ञादि कर्म कर रहे है तो उस भूमि का उचित शुक्ल भूस्वामी को दे देना चाहिए अन्यथा यज्ञादि का फल भूस्वामी को ही मिलता है। भूमि का परीक्षण करने हेतु चयनित भूमि में एक वर्ग-हाथ का चतुष्कोण खात बनाकर उस गर्त को सूर्यास्त के समय जल से भर देना चाहिए। यदि दूसरे दिन प्रात: काल उस गड्ढे में जल शेष रह जाये अथवा वह भूमि गीली रह जाये तो वह शुभलक्षण होता है। यदि कीचड़युक्त भूमि रहे तो मध्यफलदायी होता है। यदि उसका जल पूर्णरूप से सूख जाये तो उसमें दरारे पड़ जाये तो उस भूमि को अशुभ फलदायी कहा जाता है। यथा -

श्वभ्रं हस्तमितं खनेदिह जलं पूर्णं निशास्ये न्यसेत्।

प्रातर्दृष्टजलं स्थलं सदजलं मध्यं त्वसत्स्फाटितम्।।

नोट :- रेगिस्तान वाले प्रदेशों में यह विधि उपयोगी नही हैं, अत: क्षेत्रविशेष का ध्यान रखे।

यज्ञकर्म हेतु मण्डप -निर्माण हेतु शुभ भूमि के लक्षण :-

1. सुगन्ध युक्त भूमि ब्राह्मणी, रक्तगन्ध वाली भूमि क्षत्रिया, मधुगन्ध वाली भूमि वैश्या, मद्यगन्ध वाली भूमि शूद्राभूमि कही गयी है, अम्लरस युक्त वैश्या, तिक्त रस युक्त शूद्रा, मधुरसयुक्त भूमि ब्राह्मणी और कड़वी गन्ध वाली भूमि क्षत्रियवर्णा होती है।

2. ब्राह्मणी भूमि सुखकारी, क्षत्रिया राज्यसुख प्रदाता, वैश्याभूमि धनधान्य देने वाली और शूद्रा भूमि त्याज्य होती है।

3. ब्राह्मण को सफेद भूमि, क्षत्रिय को लालभूमि, वैश्य को पीली, शूद्र को काली भूमि एवं अन्यवर्णों के लिए मिश्रित रङ्ग की भूमि शुभ होती है।

4. ब्राह्मण आदि चारों वर्णों के लिए क्रम से घी, रक्त, अन्न और मद्यगन्ध वाली भूमि शुभ होती है।

5. पूर्व दिशा की ओर भूमि ढालदार हो तो धनप्राप्ति, अग्रिकोण में अग्निभय, दक्षिण में मृत्यु, नैऋर्त्य में धनहानि, पश्चिम में पुत्रहानि, वायव्य में परदेश में निवास, उत्तर में धनप्राप्ति, ईशान में विद्यालाभ होता है। भूमि में बीच में गड्ढा हो तो वह भूमि कष्टदायक होती है।

6. ईशान कोण में भूमि ढालदार हो तो यज्ञकर्ता को धन, सुख की प्राप्ति, पूर्व में हो तो वृद्धि, उत्तर में हो तो धनलाभ, अग्रिकोण में हो तो मृत्यु तथा शोक, दक्षिण में हो तो गृहनाश, नैऋर्त्य में धनहानि, पश्चिम में मानहानि, वायव्य में मानसिक उद्वेग होता है।

7. ब्राह्मण को उत्तर, क्षत्रिय को पूर्व, वैश्य को दक्षिण और शूद्र को पश्चिम की ओर ढालयुक्त भूमि शुभ होती है। मतान्तर से ब्राह्मणों के लिए सभी प्रकार की ढ़ालयुक्त भूमि शुभ होती है। अन्य वर्णों के कोई नियम नहीं है।

8. पूर्व दिशा में ऊँची भूमि पुत्र का नाश करती है । अग्रिकोण में ऊँची भूमि धन देती है। अग्रिकोण में नीची भूमि धन की हानि करती है। दक्षिणदिशा में ऊँची भूमि स्वास्थ्यप्रद होती है। नैऋर्त्यकोण में ऊँची भूमि लक्ष्मीदायक होती है। पश्चिम में ऊँची भूमि पुत्रप्रद होती है। वायव्यकोण में ऊँची भूमि द्रव्य की हानि करती है। उत्तरदिशा में ऊँची भूमि स्वास्थ्यप्रद तथा ईशानकोण में ऊँची भूमि महाक्लेशकारक होती है ।

9. हल के फाल से भूमि को खोदने पर यदि लकड़ी मिले तो अग्निभय, ईंट मिले तो धनप्राप्ति, भूसा मिले तो धनहानि, कोयला मिले तो रोग, पत्थर मिले तो कल्याणकारी, हड्डी मिले तो कुलनाश, सर्प या बिच्छू आदि जीव मिले तो वे स्वयं ही भय का पर्याय है ।

10. हल के फाल से भूमि को खोदने पर यदि लकड़ी मिले तो अग्निभय, ईंट मिले तो धनप्राप्ति, भूसा मिले तो धनहानि, कोयला मिले तो रोग, पत्थर मिले तो कल्याणकारी, हड्डी मिले तो कुलनाश, सर्प या बिच्छू आदि जीव मिले तो वे स्वयं ही भय का पर्याय है ।

11. फटी हुई से मृत्यु, ऊषर भूमि से धननाश, हड्डीयुक्त भूमि से सदा क्लेश, ऊँची-नीची भूमि से शत्रुवृद्धि, श्मशान जैसी भूमि से भय, दीमकों से युक्त भूमि से सङ्कट, गड्ढों वाली भूमि से विनाश और कूर्माकार अर्थात् बीच में से ऊँची भूमि से धनहानि होती है।

12. आयताकार **भूमि (जिसकी दोनों भुजाएँ बराबर एवं चारों कोण सम हो) पर निवास सर्वसिद्धिदायक, चतुरस्रभूमि (जिसकी लम्बाई चौड़ाई समान हो)** पर यज्ञादि शुभकर्म करने से धन का लाभ, गोलाकार भूमि पर यज्ञादि शुभकर्म करने से बुद्धिबल की वृद्धि , भद्रासन भूमि पर सभी प्रकार का कल्याण, चक्राकार भूमि पर दरिद्रता, विषम भूमि पर शोक, त्रिकोणाकार भूमि पर राजभय, शकट अर्थात् वाहन सदृश भूमि पर धनहानि, दण्डाकार भूमि पर पशुओं का नाश, सूप के आकार की भूमि पर गायों का नाश, जहाँ कभी गाय या हाथी बंधते हो वहाँ निवास करने से पीड़ा तथा धनुषाकार भूमि पर निवास करने घोर सङ्कट आता है।

13. भूमि खोदते समय यदि वहाँ पत्थर मिल जाये तो धन एवं आयु की वृद्धि होती है, यदि ईंट मिले तो धनागम होता है। कपाल, हड्डी, कोयला, बाल आदि मिले तो रोग एवं पीड़ा होती है।

14. यदि गड्ढे में से पत्थर मिले तो स्वर्णप्राप्ति, ईंट मिले तो समृद्धि, द्रव्य से सुख तथा ताम्रादि धातु मिले तो सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है।

15. भूमि खोदने पर चिऊँटी अर्थात् दीमक, अजगर (अजगर की 16 पक्ष की निद्रा होती है) निकले तो उस भूमि पर निवास नहीं करे। यदि वस्त्र, हड्डी, भूसा, भस्म, अण्डे, सर्प निकले तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है। कौड़ी निकले तो दुःख और झगड़ा होता है, रुई विशेष कष्टकारक है। जली हुई लकड़ी निकले तो रोगकारक होती है, खप्पर से कलहप्राप्ति, लोहा निकले तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है, इसीलिए कुप्रभावों से बचने के लिए इन सभी पक्षों पर विचार करना चाहिए।

16. यज्ञकर्म हेतु मण्डप -निर्माण हेतु कार्यारम्भ हेतु दिशाका चयन करते समय राहुमुख का ज्ञान :-

दिशा के चयन हेतु यथोपलब्ध सामग्री यथा - दिशा सूचक यन्त्र (कम्पास) से दिशा का निर्णय करे।

मन्त्र बोलते हुए पूजन सामग्री पर जल छोड़े

ऊँ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

य: स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तर:शुचि:।।

ॐ पुनन्तु मांदेवजना: पुनन्तु मनसाधिय:।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेद: पुनीहिमा।।

ॐ पुण्डरीकाक्ष: पुनातु (तीन बार उच्चारण करे)

यजमान बायें हाथ में जल लेकर तीन बार आचमन करे :- ॐ केशवाय नम:। ॐ नारायणाय नम:। ॐ माधवाय नम:। पुन: गोविन्दाय नम: बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे-धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

सर्वप्रथम गुरु का स्मरण करे :-गुरूस्मरण (निम्न मन्त्रों से गुरु का प्रत्यक्ष अथवा मानसिक ध्यान करते हुए पूजन करे) गुं गुरुभ्यो नम:, लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि। (कनिष्ठिकुष्ठाभ्याम्)

गुं गुरुभ्यो नम:, हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।

गुं गुरुभ्यो नम:, यं वाय्वात्मकं धूपं आघ्रापयामि।

गुं गुरुभ्यो नम:, रं वङ्घयात्मकं दीपं सन्दर्शयामि।

गुं गुरुभ्यो नम:, वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि।

गुं गुरुभ्यो नम:, सं सर्वात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि।

ॐ ब्रह्मरन्ध्रसरसीरुहोदरे नित्यलग्नमवदातमद्भुतम्।

कुण्डलीकनककाण्डमण्डितं द्वादशान्तसरसीरुहं भजे।।1।।

तस्य कन्दलितकर्णिकापुटे क्लृप्तपत्रमकथादिरेखया।

कोणलक्षितहलक्षमण्डलं भावलक्ष्यमनलालयं भजे।।2।।

तत्पुटे पटुतडित्कडारिमस्पर्धमानपरिपाटलप्रभम्।

चिन्तयामि हृदि चिन्मयं सदा बिन्दुनादमणि पीठमण्डलम्।।3।।

ऊध्र्वमस्य हुतभुक्शिखारुणं चिद्विलासपरिबृंहणास्पदम्।

विश्वघस्मरमहश्छटोत्कटं व्यामृशामि युगमादिहंसयोः।।4।।

तत्र नाथचरणारविन्दयोः संविदामृतझरीमरन्दयोः।

द्वन्द्वमिन्दुकरकन्दशीतलं मानसं स्मरतु मलास्पदम्।।5।।

निषक्तमणिपादुकं नियमिताघकोलाहलं,

स्फुरत्किसलयारुणं नखसमुन्मिषच्चन्द्रिकम्।

परामृतसरोवरोदितसरोजरोचिष्णु तद्

भजामि शिरसि स्थितं गुरुपदारविन्दद्वयम्।।6।।

व्योमाम्बुजे कर्णिकमध्यसंस्थं सहासने संस्थित दिव्यमूर्तिम्।

ध्यायेद् गुरुं चन्द्रशिलाप्रकाशं चित्युस्तकाभीतिवरान्दधानम्।।7।।

श्वेताम्बरं श्वेतविभूषणाढ्यं मुक्ताविभूषं मुदितं त्रिनेत्रम्।

वामा‘पीठस्थितरक्तशक्तिं मन्दस्मितं पूर्णकृपानिधानम्।।8।।

पादुकापञ्चकस्तोत्रं पञ्चवक्त्रमुखोद्गतम्।

षडाम्नायक्रमप्राप्तिः प्रपञ्चे चातिदुर्लभम्।।9।।

स्तोत्रानेतान् पठेद्यस्तु स्वे स्वे स्थानेऽर्चनक्रमे ।

सविधूयाखिलान् विघ्नानभीष्टं लभतेऽचिरात्।।10।।

प्रार्थयेत् - हाथ में पुष्प लेकर इस मंत्र को बोलते हुए

ॐ विहितं विदधेनाथ! विधेयं यत्कृपाकर।

अविरुद्धं भवत्वत्र तत् त्वदीयप्रसादत:।।

नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्।

शिरसा योगपीठस्थं मुक्तिकामार्थसिद्धये।।

ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम्।

विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिणाम्।।

पुरस्तात् पाश्र्वयो: पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यध:।

सदाह्यचिन्त्यरूपेण विधेहि भवदासनम्।। इति श्रीगुरुं प्रणम्य तच्चरणयुगलविगलदमृतधारया आत्मानं प्लुतं सुप्रसन्नं च विभाव्य मनसा तदाज्ञां गृहीत्वा वामे श्रीगुरुपङ्क्त दक्षे गणपqत सम्मुखे श्रीइष्टदेवं ध्यायेत्।

पवित्रीधारणम् – **पवित्रीधारण** करें -

ॐ पवित्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व प्प्रसवऽउत्पन्नुनाम्यच्छिद्द्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभि:। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्काम: पुनेतच्छकेयम्।।

यथा वज्रं सुरेन्द्रस्य यथा चक्रं हरेस्तथा।

त्रिशूलं च त्रिनेत्रस्य तथा मम पवित्रकम्।।

सपत्नीक: यजमानभाले स्वस्तितिलकम् :- (यजमान का तिलक करे) :-

ऊँ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा व्विश्ववेदा:।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमि: स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

त्रिपुण्डधारण (त्रिपुण्ड़ का तिलक करे) :-

त्र्यायुषञ्जमदग्ने कश्श्यपस्य त्र्यायुषम्।

यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽ अस्तु त्र्यायुषम् ॥

रुद्राक्षमाला धारण (माला धारण करे) :-

त्र्यम्बकँ य्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्त्योर्म्मुक्षीय मामृतात्।

शिखा बन्धन (शिखा का बन्धन करे तथा सिर पर वस्त्र रख देवे) :-

मा नस्तोके तनये मानऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु-रीरिष।

मा नो व्वीरान्न्द्र भामिनो व्वधीर्हविष्मन्त: सदमित्त्वा हवामहे॥

ग्रन्थीबन्धन (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे) :-

ऊँ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवा: पुत्रैब्र्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यै:।

नाकङ्गृब्भ्णाना: सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिव:।।

भूमिपूजन :- मंत्र बोलते हुए गन्धाक्षत पुष्प से भूमि का पूजन करें

ऊँ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनि । यच्छा न: शर्म्म सप्प्रथा:।। ऊँ कर्मभूम्यै नम:।। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

आसनपूजन (आसन की पूजा करे) :-

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ॥ ऊँ कूर्मासनाय नम:। ऊँ अनन्तासनाय नम:। ऊँ विमलासनाय नम:। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्न मन्त्र पढ़े) -

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्योममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबन्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥

ऊँ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिता : ।

ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा: सर्वतो दिशम् ।

सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे ।।

निम्न मन्त्रों से सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे :-

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोर्ध्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा ॥

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वज:।

दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैऋर्ते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद् वायव्यां मधुसूदन:।

उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् ऐशान्ये तु गदाधर:।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद् अधस्ताद् त्रिविक्रम:।

एवं दश दिशो रक्षेद् वासुदेवो जनार्दन:।।

भैरवनमस्कार (भैरव को नमस्कार करके पूजन की आज्ञा लेवे) :-

ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम

भैरवाय नमस्तुभ्यम् अनुज्ञां दातुमर्हसि।

कर्मपात्र पूजन (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे) :-

ॐ तत्वामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्ब्भि:।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश œ समानऽ आयु: प्प्रमोषी:।। ॐ वरुणाय नम:। पूर्वे ऋग्वेदाय नम:। दक्षिणे यजुर्वेदाय नम:।पश्चिमे सामवेदाय नम: । उत्तरे अथर्ववेदाय नम: । मध्ये साङ्गवरुणाय नम:। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :-

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति ।

नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्र: समाश्रित: ।

मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणा: स्मृता: ॥

कुक्षौ तु सागरा: सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेद: सामवेदो ह्यथर्वण: ॥

अंगैश्चश्च सहिता: सर्वे कलशाम्बु समाश्रिता:।

गायत्री चात्र सावित्री शान्ति: पुष्टिकरा तथा।

आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारका:।।

गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती ।

नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन्सन्निध कुरु ।।

ब्रह्माण्डोदर तीर्थानि करै: स्पृष्टानि ते रवे ।

तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ।।

ऊँ जलबिम्बाय विद्महे नीलपुरुषाय धीमहि। तन्नो अम्बु प्रचोदयात्। "वं मूलेन अष्टवारमभिमन्त्र्य, धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, मत्स्यमुद्रया आच्छाद्य । उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :-

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे ।।

यो व: शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हन:। उशतीरिवमातर: ।।

तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचन: ।।

दीपपूजन (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जाकर पूजन करना चाहिए) :-

1. अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्रा देवतादित्यादेवता मरुतो देवता विश्श्वे देवादेवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता ॥

2. ॐ अग्निर्ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिरग्नि: स्वाहा सूर्य्यो ज्ज्योतिर्ज्ज्योति: सूर्य्य: स्वाहा । अग्निर्व्वर्च्चोज्योतिर्वर्च्च: स्वाहा सूर्य्योव्वर्चोज्ज्योतिव्वर्च: स्वाहा । ज्योति: सूर्य्य: सूर्य्योज्योति: स्वाहा । ॐदीपनाथायनम:।सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि ।

सूर्य नमस्कार (दिन में पूजन कर रहे हों तो सूर्य को नमस्कार करे) :-

ॐ तच्चक्क्षुर्द्देवहितम्पुरस्त्ताच्छुक्क्रमुच्चरत् । पश्श्येम शरद: शतञ्जीवेम शरद : शतं श्रृणुयाम शरद:शतम्प्रब्ब्रवाम शरद: शतमदीना स्याम शरद: शतम्भूयश्च्च शरद्द शतात् ॥

चन्द्र नमस्कार (रात्रि में पूजन कर रहे हों तो चन्द्रमा को नमस्कार करे) :-

ॐ इमन्देवा ऽ असपत्नœ सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ।इममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना œ राजा ॥

प्रार्थना :- हाथ में पुष्प लेकर मंत्र बोलते हुए प्रार्थना करें -

ॐ भो दीप देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्।

यावत्कर्मसमाप्ति: स्यात्तावदत्र स्थिरो भव ॥

शंख पूजन - शंख का पूजन करें-

1. ॐ अग्निऋर्षि पवमान पाञ्चजन्य पुरोहित । तमीमहेमहागयम् ।

ॐ पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि । तन्नोशंख: प्रचोदयात्॥

ॐ भूर्भुव: स्व: शंखस्थ देवतायै नम:। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि।

घण्टा पूजन - हाथ में पुष्प लेकर मंत्र बोलते हुए **घण्टा पूजन** करें-

आगमनार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम्।

घण्टानादं प्रकुर्वीत् तस्मात् घण्टां प्रपूजयेत॥

1. ॐ आशु शिशानो व्वृषभो न भीमो घनाघन क्क्षोभणश्च्चर्षणीनाम् । सङ्क्रन्दनोनिमिषऽएक्कवीर शत सेनाऽअजयत्सा कमिन्द्र: ॥ 1॥ ॐ भूर्भुव: स्व: सर्ववाद्यमयी वृषघण्टायै नम:।

2. ॐ सुपर्ण्णोसि गरुत्क्माँस्त्रिवृत्ते शिरोगायत्त्रञ्चक्क्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ । स्तोमऽआत्माच्छन्दाœ स्यङ्गानि जूœ षिनाम । साम ते तनूर्व्वामदेव्यँज्ञा यज्ञियं पुच्छन्धिष्ण्याशफा । सुपर्ण्णोसि गरुत्क्मान्दिवङ्गच्छस्व्व पत ॥ 2॥ ॐ भूर्भुव: स्व: घण्टस्थ गरुड़ाय नम:। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि ।

'रमिति जलधारया वङ्घिप्राकारं विचिन्त्य उत्तानौ करौ कृत्वा 'सोऽहमितिङ्क जीवात्मानं हृदयस्थप्रदीपकलिकाकारं मूलाधारस्थित कुलकुण्डलिन्या सह सुषुम्नावत्र्मना मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपूरकानाहत विशुद्धाज्ञारव्य षट्चक्राणि भित्वा शिरोऽवस्थिताधोमुख सहस्रदलकमलकणिकान्तर्गतपरमात्मनि संयोज्य पृथिव्यप्तेजोवायव्याकाशगन्धरसरूपस्पर्शशब्द नासिकाजिह्वा चक्षुस्त्वक्श्रोत्र वाक्पाणिपादपायूपस्थ प्रकृतिमनोबुद्ध्यह ररूप-चतुर्विंशतितत्वानि विलीनानि विभाव्य 'यमिङ्क ति वायुबीजं धूम्रवर्णं वामनासापुटे विचिन्त्य तस्य षोडशवारजपेन वायुना देहमापूर्य (अगुष्ठानामिका कनिष्ठिकाभि:) नासापुटौ धृत्वा तस्य चतु:षष्टिवारजपेन कुम्भकं कृत्वा वामकुक्षिस्थित रक्तवर्णपापपुरुषेण सह देहं संशोध्य तस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन दक्षिणनासया वायुं रेचयेत्। ततो दक्षिणनासापुटे 'रमिङ्कतिवङ्बीजं रक्तवर्णं ध्यात्वा तस्य षोडशवारजपेन वायुना देहमापूर्य नासापुटौ धृत्वा तस्य चतु:षष्टिवारजपेन कुम्भकं कृत्वा पापपुरुषेण सह देहं मूलाधारस्थित वङ्घ्रिना दग्ध्वा तस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन वामनासया भस्मना सह वायुं रेचयेत् । तत: 'ठमिङ्कति चन्द्रबीजं शुक्लवर्णं वामनासिकायां ध्यात्वा तस्य षोडशवारजपेन ललाटे चन्द्रं नीत्वा नासापुटौ धृत्वा 'वमिङ्क ति वरुणबीजस्य चतु: षष्टिवारजपेन तस्माल्ललाटस्थचन्द्राद् गलितसुधया मातृकावर्णात्मिकया समस्तं देहं विरच्य 'लमिङ्कति पृथ्वीबीजस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन देहं सुदृढं विचिन्त्य दक्षिणेन वायुं रेचयेत्। ॥ इति ।

अशक्तश्चेत् संक्षेपेण भूतशुद्धि: प्राणप्रतिष्ठा च कार्या-

ॐ भूतश्रृडत्रगाच्छिर: सुषुम्नापथेन जीवशिवं परमशिवपदे योजयामि स्वाहा।

ॐ यं लिग्ड़शरीरं शोषय शोषय स्वाहा। ॐ रं सकड़ोचशरीरं दह दह स्वाहा।

ॐ परमशिवसुषुम्नापथेन मूलश्रृल्लसोल्लसज्वलज्वल प्रज्वल प्रज्वल सोहं हंस: स्वाहा ।

अथवा

सप्रणवमायाबीजं अष्टोत्तरशतं जपेत्। आं सोहं मम प्राणा इह प्राणा इह स्थिता:।आं सोहं मम जीव इह जीव इह स्थित:। आं सोहं मम सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मन: चक्षुश्रोत्रघ्राणानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। एवं स्वहृदिप्राणान्स्थाप्यदेवतारूपमात्मानं भावयेत् ।। **इति भूतशुद्धि:।।**

अथ आत्मप्राणप्रतिष्ठा (इष्टदेव की स्वशरीर में प्राणप्रतिष्ठा करे)-

ॐ अस्य प्राणप्रतिष्ठा ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषय: ऋग्यजु: सामानि छन्दांसि प्राणषक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्ति: क्रों कीलकं स्वशरीरे प्राणप्रतिष्ठा विनियोग (जल गिराये)

अथ ऋष्यदिन्यास

ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नम: शिरसि। ॐ ऋग्यजु: सामछन्दोभ्यो नम: मुखे। ॐ प्राणशक्त्यै नमो हृदि । ॐ आं बीजाय नमो गुह्ये। ॐ ह्रीं शक्तये नम: पादयो:। ॐ क्रों कीलकाय नम: सर्वा।

अथ करन्यास: -

ॐ ङं कं खं घंगं नाभौ वाय्वग्निर्वाभूम्यात्मने अगुष्ठाभ्यान्नम:। (हृदयाय नम:)

ॐ ञं चं छं झं जं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने तर्जनीभ्यान्नम:। (शिरसे स्वाहा)

ॐ णं टं ठं ढं डं श्रोत्रत्वङ्नयनजिह्वाघ्राणात्मने मध्यमाभ्यान्नम:। (शिखायै वषट्)

ॐ नं तं थं धं दं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने अनामिकाभ्यान्नम:।(कवचायहुम्)

ॐ मं पं फं भं बं वक्तव्यादानगमनविसर्गानन्दात्मने कनिष्ठिकाभ्यान्नम:। (नेत्रत्रयाय वौषट्)

ॐ शं यं रं वं लं हं षं क्षं सं लं बुद्धिमनोहंकारचित्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यान्नम:। (अस्त्राय फट्)

एवं हृदयादि करषङ्न्यासान् कृत्वा नाभेरारभ्य पादान्तम् (आँ) इति पाशबीजं स्मरेत्। हृदयारभ्य नाभ्यन्तम् (ह्रीं) इति शक्तिबीजं न्यसेत्। मस्तकादारभ्य हृदयान्तम् (क्रों) इति सृणिबीजं स्मरेत्।

ॐ यं त्वगात्मने हृदयाय नम:। ॐ रं असृगात्मने दोर्मूलाभ्यां नम:।

ॐ लं मांसात्मने ग्रीवायै नम:। ॐ वं मेदात्मने कुक्षिभ्यां नम।

ॐ शं अस्थ्यात्मने दक्षिणकराय नम:। ॐ षं मज्जात्मने वामकराय नम:।

ॐ सं शुक्रात्मने दक्षिणपादाय नम:। ॐ हं प्राणात्मने वामपादाय नम: ।

ॐ लं शक्त्यात्मने जठराय नम:। ॐ क्षं बीजात्मने आस्याय नम:।

ॐ यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं इति मूद्र्धादिचरणावधि व्यापकं कुर्यात्।तत: मण्डूकादि परतत्वान्त पीठदेवताभ्यो नम:।

जयादिशक्तिभ्यो नम:। (इति नत्वा) ॐ आं ह्रीं क्रों पीठाय नम:।

पीठे प्राणशक्तिदेवीं ध्यायेत् :-

पाशंचापा सृक्कपाले शृणीषूञ्छूलं हस्तैर्विभ्रतीं रक्तवर्णाम्।

रक्तोदन्वत्पोतरक्तांबुजस्थां देवीं ध्याये प्राणशक्ति त्रिनेत्राम्।।

हृदये हस्तं निधाय (हाथ को हृदयादि अगों पर रखकर मंत्रपाठ करें) :-

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंस: सोहं मम प्राणा इह प्राणा:।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंस: सोहं मम जीव इह स्थित:।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंस: सोहं मम सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षु: श्रोत्र जिह्वाघ्राणपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

इति वारत्रयेण स्वशरीरे प्राणान् प्रतिष्ठाप्य ॐ इति प्रणवेन पञ्चदशावृत्त कृत्वा अनेन मम देहस्था बटुकभैरवस्य (अमुकदेवस्य) गर्भाधानादिपञ्चदशसंस्कारान्संपादयामि।। इति प्राणप्रतिष्ठा।

(अञ्जलि में अक्षतपुष्प लेकर इष्टदेव का स्मरण करते हुए भद्रसूक्त का पाठ करें) -

ॐ आनोन्न भद्रा: क्रतन्नवोयन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपन्नरीतासऽउद्भिद:।

देवानायथासदमिद्वृधेऽअसन्नप्प्रान्नयुवो रक्षितारोदिवेदिवे ॥1॥

देवानां भद्द्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानारातिरभिनानिवतर्ताम्।

देवानांसक्ख्यमुपन्नसेदिमा व्वयं देवा नऽआयु: प्प्रतिन्नरन्तु जीवसे।2॥

तान्पूर्व्वया निविदान्न हूमहे व्वयं भगन्नम्मित्रमदितिन्दक्षमस्त्रिधम्म।

अर्यमणव्वरुणंसोममश्विना सरस्वती न: सुभगामयस्क्करत्॥3॥

तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौ :।

तद्ग्रावाण: सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्यायुवम्॥4॥

तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्नमवसे हूमहे व्वयम्।

पूषा नो यथा व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्ध: स्वस्तये ॥5॥

स्वस्ति न ऽइन्द्रोन्न वृद्धश्श्रवा: स्वस्ति न: पूषाव्विश्ववेदा :।

स्वस्तिनस्ताक्ष्यो ऽअरिष्टनेमि: स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु॥6॥

पृषदश्वा मरुत पृश्निमातर: शुभंयावानो व्विदथेषु जग्मय: ।

अग्निजिह्वामनव: सूरचक्षसो व्विश्वे नो देवाऽअवसा गमन्निह ॥7॥

भद्द्रं कर्णेभि: शृणुयाम देवा भद्द्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा: ।

स्थिरैरंगै:स्तुष्टुवा गुंसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितंयदायु:॥8॥

शतमिन्नुशरदोऽअन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसन्तनूनाम् ।

पुत्रासोयत्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तो :॥9॥

अदितिद्र्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिम्र्मा ता स पिता स पुत्र:।

विश्वेन्नदेवाऽअदिति पञ्चजना ऽ अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥10॥

यतो यत: समीहसे ततोनोऽअभयं कुरु। शन्न : कुरु प्रजाब्भ्योभय: पशुब्भ्य: ॥11॥

द्यौर शान्तिरन्तरिक्ष गुं शान्ति: पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय :शान्ति :। व्वनस्पतय :शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्ति ब्रह्म शान्ति: सर्व गुं शान्ति : शान्तिरेव शान्ति: सामाशान्तिरेधि ॥12॥ सुशान्तिर्भवतु॥

गणपति स्मरण :-

अञ्जलि में अक्षतपुष्प लेकर गणपति का स्मरण करते हुए निम्न मन्त्रों का पाठ करें :-

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णक:।

लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायक:॥1॥

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजानन:।

द्वादशैतानि नामानि य: पठेच्छृणुयादपि ॥2॥

विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।

सङ्ग्रामे स‘टे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥3॥

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।

प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥4॥

अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो य: सुरासुरै:।

सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नम: ॥ 5॥

सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके।

शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते॥6॥

सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममंगलम्।

येषां हृदिस्थो भगवान्मंलायतनं हरि:।।7 ॥

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तेव।

विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेंऽघ्रियुगं स्मरामि॥8॥

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजय:।

येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दन: ।। 9 ।।

यत्र योगेश्वर: कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धर:।

तत्र श्रीर्विजयोभूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।10।।

सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वरा: ।

देवाः दिशन्तु न: सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दना: ।।11।।

विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ।

सरस्वतीं प्रणम्यादौ सर्वकार्यार्थसिद्धये।।12।।

दुर्गाध्यक्षं गणपतिं श्रीगोविन्दं शिलेश्वरि।

तारकेशं महादेवं हनुमन्तं महाबलिम् ।।

भैरवं हर्षनाथञ्च पुनीतं गालवाश्रमम्।

पूषणं सततं वन्दे सर्वकार्यार्थसिद्धये।। 13।।

ॐ श्रीमन्महागणाधिपतये नम: -

ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नम: -

ॐ उमामहेश्वराभ्यां नम: -

ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नम: -

ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नम:

ॐ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नम: -

ॐ इष्टदेवताभ्यो नम: -

ॐ कुलदेवताभ्यो नम: -

ॐ ग्रामदेवताभ्यो नम: -

ॐ वास्तुदेवताभ्यो नम: -

ॐ स्थानदेवताभ्यो नम: -

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नम:

ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नम:

ॐ एतत्कर्मप्रधानदेवताभ्यो नम: - निर्विघ्नमस्तु

संकल्प: - ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयो: पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन्‍ देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात्‍ शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्र: (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मन: श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभि वृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशे: नामराशे: वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तै: सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं

आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं अमुकदेवता अमुकामुकपूजनकर्मं करिष्ये ।

प्रत्येक कर्म में इसी प्रकार प्रारम्भि पूजन करे, तत्पश्चात् गणपत्यादि देवतओं का पूजनादि क्रम प्रारम्भ करें ।

3.5 सारांश :-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को पूजनकर्म से सम्बन्धित सभी आवश्यक कर्मों का ज्ञान हो जायेगा । पूजन के लिए उपयुक्त यज्ञकर्म हेतु भूमि का चयन, विशिष्ट नियम, आसन, पुष्प, पूजन सामग्री आदि का चयन एवं वैदिक पूजन का ज्ञान भी हो जायेगा । इसके अन्तर्गत भूमिपूजन , भूतशुद्धि , आत्मप्राण प्रतिष्ठा, भद्रसूक्त का पाठ, भूतापसारण, दीप पूजन, घण्टा व शङ्ख पूजन, वरुण (जल) पूजन, गुरु स्मरण, तिलक, गणपति स्मरण तथा सङ्कल्प आदि विधियों का ज्ञान मिलेगा। प्राय: सभी पूजन पद्धतियों में यही प्रारम्भिक पूजन प्रयोग में आता है, केवलमात्र कहीं-कहीं प्रधान पूजन के अनुसार कुछ अंशो की भिन्नता पायी जाती है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र इन सभी कार्यों को करने में स्वत: सक्षम हो जायेगा ।

3.5 शब्दावली -

1. देवार्चन = देवतओं का पूजन
2. विशिष्ट = विशेष
3. निर्माल्य = चढ़ा हुआ/अनुपयोगी
4. चरणामृत = चरणों का जल,
5. खात = खड्ढा करना/खोदना
6. सङ्कल्प = प्रतिज्ञा

3.6 अतिलघुत्तरीय प्रश्न :-

प्रश्न - 1 : पञ्चामृत के द्रव्य लिखिये ?

उत्तर : पञ्चामृत के द्रव्य - दूध , दही, घी, शहद, बूरा ।

प्रश्न - 2 : पञ्चगव्य के द्रव्य लिखिये ?

उत्तर : पञ्चगव्य के द्रव्य - गाय का गोबर, गौमूत्र , गौदुग्ध , गाय का घी, गाय का दही ।

प्रश्न - 3 : तुलसीदल किस देवता की पूजन में वर्जित तथा किस देवता को प्रिय है ?

उत्तर : तुलसीदल गणपति-पूजन में वर्जित तथा भगवान विष्णु को प्रिय है ।

प्रश्न - 4 : भगवान शिव की कितनी प्रदक्षिणा करनी चाहिए ?

उत्तर : भगवान शिव की अर्द्ध-प्रदक्षिणा करनी चाहिए ?

प्रश्न - 5 : पूजन के पूर्व कितने आचमन किये जाते हैं ?

उत्तर : पूजन के पूर्व तीन बार आचमन किया जाता हैं ।

3.7 लघुत्तरीय प्रश्न :-

प्रश्न - 1 : यज्ञादिकर्म हेतु भूमिपरीक्षण की विधि बताइये ?

प्रश्न - 2 : पूर्वादि दस दिशाओं में ढलानयुक्त भूमि का फल बताइये ?

प्रश्न - 3 : भूतापसारण की विधि बताइये ?

प्रश्न - 4 : तीर्थ-आवाहन की विधि का वर्ण कीजिये ?

प्रश्न - 5 : पूजनकर्म हेतु सङ्कल्प लिखिये ?

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ -

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर ।

2. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

3. नित्यकर्म पूजाप्रकाश सम्पादक - परमाचार्य पं. रामभवनजी मिश्र, पं. लालबिहारी मिश्र प्रकाशक - गीताप्रेस, गोरखपुर ।

4. मन्त्रमहोदधि सम्पादक - श्रीशुकदेव चतुर्वेदी सम्पादक - मुकुन्दवल्लभ ज्योतिषाचार्य

5. कर्मठगुरु प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन वाराणसी ।प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी ।

इकाई — 4

गणपति पूजन

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 विषय प्रवेश

4.4 गणपति पूजन

4.5 षड्विनायक पूजन

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 अतिलघुत्तरीय प्रश्न

4.9 लघुत्तरीय प्रश्न

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.1 प्रस्तावना

मानव आरम्भ से ही चिन्तन, मनन व अन्वेषण का अभ्यस्त रहा है, वह केवल स्थूल जगत की चमक-दमक से सन्तुष्ट नहीं हैं, सूक्ष्म जगत के अन्तस्तल तक के रहस्यों को प्रकाश में लाने के लिए कृतसंकल्प रहता आया है। अनन्तकाल से अनुसन्धान करते करते वह कई उपयोगी तथ्यों को प्राप्त कर चुका हैं, जो प्रत्यक्ष जगत में कार्यान्वित होने वाली घटनाओं के कारण रूप हैं। इन उपलब्धियों में मानव जीवन पर ग्रह-प्रभाव की अवगति

सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। दार्शनिकों ने यह सिद्ध कर दिया हैं। "यथा पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे अर्थात् ब्रह्माण्डस्थ ग्रहों की प्रतिकृतियां प्राणीमात्र के शरीर में भी विद्यमान हैं। दोनों के संचार-नियमन में एकरूपता होने के कारण मानव की विविध गतिविधियाँ भी ग्रहों के द्वारा नियन्त्रित होती हैं, किन्तु प्रश्न उठता हैं कि 'क्या ग्रह स्वेच्छानुसार मनुष्य के भविष्य का विधान निर्धारित करते हैं ? नहीं, सम्पूर्ण, स्थूल एवं सूक्ष्म जगत के अधिष्ठाता परमपिता परमात्मा के निर्देशानुसार प्राणी के प्रारब्धों से होने वाली भाग्य की व्यूह रचना का प्रतिनिधित्व ही जन्मकालिक ग्रहस्थिति करती हैं। अत: "ग्रहा: वै कर्मसूचका: ग्रह तो केवल कर्माधीन भवितव्य की सूचना देते हैं। सभी देवताओं में गणपति सर्वप्रथम है, इनका पूजन सभी माङ्गलिक कर्मो में करना चाहिए।

4.2. उद्देश्य

1. गणपति पूजन की विधि का ज्ञान।
2. गणपति के विशिष्ट मन्त्रों का ज्ञान।
3. गणपति के वैदिक मन्त्रों, वैदिक अथर्वशीर्ष आदि का ज्ञान प्राप्त करना।
4. गणेश पूजन से होने वाले लाभ।
5. ग्रहनानुसार गणेशानुष्ठान की विधि
6. गणपति स्तवन का ज्ञान

4.3. विषय प्रवेश

ऋषियों ने मंगलकामना के लिए किये जाने वाले प्रत्येक देवपूजा कर्म के आरम्भ में गणेशार्चन का अनिवार्य रूप से संयोजित करने का निर्देश दिया हैं। गणेश पूजन का विधान पुरातन हैं। शुक्ल य जुर्वेद संहिता के "गणानान्त्वा गणपति ठ हवामहेमैत्रायणीय संहिता के 'तत्कराटाय विद्महे हस्तीमुखाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्॥ एवं तैत्तरीय आरण्यक अन्तर्गत नारायणोपनिषद के 'तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात॥ आदि मन्त्र इस परम्परा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं अतैव यह निर्विवाद सिद्ध हैं कि नित्य नैमित्तिक एवं काम्य गणेश उपासना के आचरण में ही मानवमात्र का हित निहित हैं। किसी देवता की उपासना को साङ्गोपाङ्ग, यथासमय एवं ग्रहानुकूलतापूर्वक सम्पादित करना ही उसकी सार्थकता का साधक हैं, एतद्विषयक विषद ज्ञाननिधि एकमात्र ज्योतिर्विज्ञान में ही संचित हैं तथा वेदों के छ: अंगों में इसे मूर्धन्य (नेत्ररूप) माना गया हैं। अत: गणेशोपासना विषयक कुछ उपयोगी तथ्यों को त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिर्ग्रन्थों से एकत्रित करके यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा हैं। ज्योतिष शास्त्र के संहिता ग्रन्थों में वर्णित गणपति प्रतिष्ठोपयुक्त काल इस प्रकार हैं।

मास :- वैशाख, ज्येष्ठ तथा फाल्गुनादि उत्तरायण गत सूर्य के मास। भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष की गणेश चतुर्थी भी ग्राह्य हैं।

तिथि :- उपर्युक्त मासों की शुक्लपक्षीय 2-3-4-5-6-7-8-10-11-12

वार :- रवि, मंगल, शुक्र व शनि। मतान्तरेण बुधवार भी स्वीकृत हैं।

नक्षत्र :- सामान्य रूप से सर्वदेव प्रतिष्ठा में ग्रहण किये हुए नक्षत्रों के साथ ही गणेश प्रतिष्ठा आर्द्रा, हस्त, अनुराधा, श्रवण, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी तथा रेवती में विशेष रूप से कही गयी हैं।

लग्न :- मिथुन, सिंह तथा कुम्भ राशि लग्न स्वाधिपति एवं शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट होने पर। पुनश्च केन्द्र, त्रिकोण में शुभग्रह षष्ठ में पापग्रह, 3-11 में कोई ग्रह तथा अष्टम एवं द्वादश में ग्रहों का अभाव अपेक्षित हैं।

विशेष :- प्रतिष्ठापक के चन्द्रबल के साथ अन्यशुभ योग प्रतिष्ठा की सार्थकता के द्योतक हैं ,किन्तु देवशयन, मलमास, गुरु-शुक्रास्त, भ्रदा, पात, तारा का निर्बलत्व, तिथिक्षय, तिथिवृद्धि, प्राकृतिक प्रकोप, मासान्त एवं जन्म-मरण अशौच की विद्यमानता प्रतिष्ठा को निष्फल करते हैं।

गणेशोपसना का मुहूर्त :- संकट, निवारण, अर्थोपार्जन, आरोग्यता-प्राप्ति, वंशवृद्धि और स्वार्थ सिद्धि आदि किसी भी उद्देश्य की पूर्ति हेतु करिष्यमान गणेश की अराधना का शुभारम्भ निम्नलिखित कालशुद्धि मे वांछित एवं फलद है।

मास :- चैत्र (मेषार्क एवं शुक्ल पक्ष से संयुक्त) वैशाख, श्रावण, आश्विन (शुक्ल) माघ तथा फाल्गुन गुरु शुक्र का उदित होना आवश्यक है।

तिथि :- भद्रा आदि कुयोग वर्जित शुक्ल पक्ष की 2, 3, 5, 7, 10, 11, 13

वार :- रवि, चन्द्र, बुध, गुरू, शुक्र ।

नक्षत्र :- अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुर्नवसु, पुष्य, उत्तराफालगुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, स्वाती, अनुराधा श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा एवं रेवती तथा ग्रहणयुक्त नक्षत्र त्याज्य है।

लग्न :- वृष, मिथुन, सिंह, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ, मीन आदि किसी राशि के उदित होने पर जब केन्द्र त्रिकोण मे सौम्य ग्रह 3,6,11 व पाप ग्रह तथा 8,12 ग्रह ग्रह-विहीन हो। पुनश्च, नवमभाव शुभ ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तथा भाग्येश निष्कलंक एवं मित्र क्षेत्रीय हो।

विशेष :- 'गणेश चतुर्थी विशिष्ट ग्राह्य हैं तथा उपासना का बल हीन चन्द्र सर्वथा त्याज्य है। पूर्व निश्चित मुहुर्त के दिन यदि कोई बाधा रोग, उत्पात अथवा कोई अप्रिय घटना उपस्थित हो जाए तो उपासना स्थगित कर दे। भद्रा में गणपति पूजन का विशेष महत्त्व है।

श्रीगणेश के विविध मन्त्र -श्री महागणपतिस्वरूप प्रणव मन्त्र -ऊँ श्री महागणपति का प्रणव सम्पुटित बीज मन्त्र - ऊँ गं ऊँ सबीज गणपति मन्त्र - गं गणपतये नम:प्रणवादि सबीज गणपति मन्त्र - ऊँ गं गणपतये नम:

नाम मन्त्र -ऊँ नमो भगवते गजाननाय :- 12 अक्षरों का मन्त्र, श्रीगणेशाय नम: :- 07 अक्षरों का मन्त्र,ऊँ श्रीगणेशाय नम: :- 08 अक्षरों का मन्त्र। उच्छिष्टगणपति नर्वाण मन्त्र -ऊँ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशनवार्णमन्त्रस्य कङ्कोल ऋषि:, विराट छन्द:, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, अखिलावाप्तये जपे विनियोग:। (हाथ में जल लेकर गिरायें)

द्वादशाक्षर उच्छिष्टगणपति मन्त्र - ऊँ ह्रीं गं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीरद्वादशाक्षरोच्छिष्टगणपति मन्त्रस्य मनु: ऋषि:, विराट छन्द:, उच्छिष्ट गणपतिर्देवता, गं बीजम्, स्वाहा शक्ति:, ह्रीं कीलकम् अखिलावाप्तये जपे विनियोग:। (हाथ में जल लेकर गिराये)

एकोनविंशत्यक्षरोच्छिष्टगणपतिमन्त्र - ऊँ नम उच्छिष्टगणेशाय हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशमन्त्रस्य कङ्कोल ऋषि:, विराट छन्द:, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, अखिलावाप्तये जपे विनियोग:। (हाथ में जल लेकर गिराये)

37 अक्षरों का उष्छिष्टगणपति मन्त्र - ऊँ नमो भगवते एकदंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय उच्छिष्टमहात्मने आं क्रीं ह्रीं गं थे थे स्वाहा।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीउच्छिष्टगणेशमन्त्रस्य गणक ऋषिः, गायत्रीच्छन्दः, उच्छिष्टगणपतिर्देवता, गं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, आं क्रों कीलकम् ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः।। (हाथ में जल लेकर गिराये)

32 अक्षरों का हरिद्रागणेश मन्त्र -ऊँ हुं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वर वरद सर्वजन हृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा।

विनियोग - अस्य श्रीहरिद्रागणनायकमन्त्रस्य मदन ऋषि, अनुष्टुप छन्दः, हरिद्रागणनायको देवता, ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)।

06 अक्षरों का वक्रतुण्ड मन्त्र - ऊँ वक्रतुण्डाय हुम्।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीगणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः, निचृत अनुष्टुप छन्दः, विघ्नेशो देवता , वं बीजम्, यं शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

31 अक्षरों का वक्रतुण्ड मन्त्र - रायस्पोषस्य दाता निधिदातान्नदो मतः। रक्षोहणो वो बलगहनो वक्रतुण्डाय हुम् ।।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीवक्रतुण्डगणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः, अनुष्टुप छन्दः, विघ्नेशो देवता, वं बीजम्, यं शक्तिः, ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)।

शक्तिविनायक 04 अक्षरों का मन्त्र - ऊँ ह्रीं ग्रीं ह्रीं

विनियोग - अस्य शक्ति विनायक मन्त्रस्य (शक्तिगणाधिपमन्त्रस्य वा) भार्गव ऋषिः विराट छन्दः शक्तिगणाधिपो देवता (शक्तिविनायको देवता वा) ग्रीं बीजम ह्रीं शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

28 अक्षरों का लक्ष्मीविनायक मन्त्र - ऊँ श्रीं गं सौम्याय गणपतये वर वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीलक्ष्मीविनायकमन्त्रस्य अन्तर्यामी ऋषिः, गायत्री छन्दः, लक्ष्मीविनायको देवता श्रीं बीजम स्वाहा शक्तिः ममाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः। (हाथ में जल लेकर गिराये)

33 अक्षरों का त्रैलोक्यमोहनकर गणेश मन्त्र - वक्रतुण्डैकंदष्ट्राय क्लीं ह्रीं श्रीं गं गणपते वर वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

विनियोग - ऊँ अस्य श्रीत्रैलोक्यमोहन कर गणेशमन्त्रस्य गणक ऋषि: गायत्रीच्छन्द: त्रैलोक्यमोहन करो गणेशो देवता ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोग:। (हाथ में जल लेकर गिराये)।

सिद्धिविनायक मन्त्र - ऊँ नमो सिद्धिविनायकाय सर्वकार्यकर्त्रे सर्वविघ्नप्रशमनाय सर्वराज्य वशकरणाय र्वजनसर्वस्त्रीपुरूषाकर्षणाय श्री ऊँ स्वाहा।

ऋणहर्तृगणेशमन्त्र -

ऊँ गणेश ऋणं छिन्धि वरेण्य हुं नम: फट्।

ऊँ हीं श्रीं क्लीं गौं ग: श्रीमन्महागणाधिपये नम:।

ऊँ हीं श्रीं क्लीं गौं वरदमूर्तये नम:।

ऊँ हीं श्रीं क्लीं नमो भगवते गजाननाय।

ऊँ श्रीं हीं क्लीं गणेशाय नम: ब्रह्मरूपाय चारवे।

सर्वसिद्धप्रदेशाय विघ्नेशाय नमो नम:।।

बीजाय भालचन्द्राय गणेश परमात्मने। प्रणतक्लेशनाशाय हेरम्बाय नमो नम:।।

आपदामपहर्तारं दातारं सुखसम्पदाम्। क्षिप्रप्रसादनं देवं भूयो भूयो नमाम्यहम्।।

नमो गणपते तुभ्यं हेरम्बायैकदन्तिने। स्वानन्दवासिने तुभ्यं ब्रह्मणस्पतये नम:।।

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं शशिसूर्यनिभाननम्।

प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।।

नमस्तस्मै गणेशाय ब्रह्मविद्याप्रदायिने यस्यागस्त्यायते नाम विघ्नसागरशोषणे।।

यद् भ्रूणप्रणिहितां लक्ष्मीं लभन्ते भक्तकोटय:। स्वतन्त्रमेकं नेतारं विघ्नराजं नमाम्यहम्।।

श्री गजानन जय गजानन ।श्री गजानन जय गजानन जय जय गजानन ह्रीं गं ह्रीं गणपतये नमः ॐ वक्रतुण्डाय नमः।

श्री गणेश गायत्री - महाकर्णाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात।

4.4. गणपति पूजन -

पीठ-देवता- मं मण्डूकाय नमः। आं आधारशक्त्यै नमः। मूं मूलप्रकृत्यै नमः। कं कालाग्रिरुद्राय नमः। आं आदिकूर्माय नमः। अं अनन्ताय नमः। आं आदिवराहाय नमः। पं पृथिव्यै नमः। इक्षु अर्णवाय नमः। रं रत्नद्वीपाय नमः। हं हेमगिरये नमः। नं नन्दनोद्यानाय नमः। कं कल्पवृक्षाय नमः। मं मणिभूतलाय नमः। दं दिव्यमण्डपाय नमः। सं स्वर्णवेदिकायै नमः। रं रत्नसिंहासनाय नमः। धं धर्माय नमः। ज्ञां ज्ञानाय नमः। वैं वैराग्याय नमः। ऐं ऐश्वर्याय नमः। सं सत्त्वाय नमः। प्रं प्रबोधात्मने नमः। रं रजसे नमः। प्रं प्रकृत्यात्मने नमः। तं तमसे नमः। मं मोहात्मने नमः। सों सोममण्डलाय नमः। सं सूर्यमण्डलाय नमः। वं वह्निमण्डलाय नमः। मां मायातत्त्वाय नमः। विं विद्यातत्त्वाय नमः। शं शिवतत्त्वाय नमः। ब्रं ब्रह्मणे नमः। मं महेश्वराय नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। जं जीवात्मने नमः। ज्ञं ज्ञानात्मने नमः। कं कन्दाय नमः। नं नीलाय नमः। पं पद्माय नमः। मं महापद्माय नमः। रं रत्नेभ्यः नमः। कें केसरेभ्यः नमः। कं कर्णिकायैनमः।

ॐ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। (हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुए छोड़े)

नवशक्ति पूजनम् :- ॐ तीव्रायै नमः। ॐ ज्वालिन्यै नमः। ॐ नन्दायै नमः। ॐ मोदायै नमः। ॐ कामरूपिण्यै नमः। ॐ उग्रायै नमः। ॐ तेजोवत्यै नमः। ॐ सत्यायै नमः। ॐ विघ्ननाशिन्यै नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। (हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुए छोड़े)।

ततः कलशस्थापनम् :

ॐ तत्वामि ब्ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्भिः। अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश œ समानऽ आयुः प्प्रमोषीः।।

ततः ॐ भूर्भुवःस्वः वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः अस्मिन् कलशे सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु । गन्धाक्षत ष्पधूपदीपनैवेद्यैः सम्पूज्य ।

अग्न्युत्तारणम् :-

देशकालौ संकीत्र्य अस्य गणपतिदेवता नूतन स्वर्ण-पाषाण-मृदादि यन्त्र-मूर्ति अग्नितपनताडन अवघातादि दोषपरिहारार्थमग्न्युत्तारणं करिष्ये। इति संकल्प्य।

स्वर्णादि निर्मितं मूर्तिं ताम्रपात्रे निधाय घृतेनाभ्यज्य उपरि दुग्धमिश्रित जलधारां कुर्यात्।

ॐ समुद्रस्य त्वार्वेकयाग्ने पर्रिव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्येषशिवो भव ॥ ॐ हिमस्र्ये त्वा जरायुणाग्ने पर्रिव्ययामसि। पावकोऽअस्मब्भ्र्येषशिवो भव ॥ उपज्मन्नुर्पेवेतसेर्वेतर नदीष्वा। इत्यादि मन्त्रों के द्वारा।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणपतये नम:, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि। ततःस्वर्णादिप्रतिमां करेण संस्पृश्य **प्राणस्थापनमाचरेत् :-**

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः सोऽहं अस्यां मूर्तौ प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणि पादपायूपस्थानि, इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तुस्वाहा।

अस्यै प्राणा प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणा: क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ॥

ॐ गं गणपतये नमः (दशधा/पञ्चदश मूलमन्त्रं जपेत्)।

गणपति ध्यानम् (हाथ में पुष्प लेकर श्लोक बोलते हुए गणेश जी का ध्यान करें)

द्वे भार्ये सिद्धिबुद्धि तदनुसहचरौ वृद्धिसिद्धिप्रियौ च,

द्वौ पुत्रौ लक्षलाभौ वसुदलरचिते मण्डले कल्पवृक्ष: ।

गेहे यस्य प्रभूता मृगमदतिलका: सिद्धय: प्रोल्लसन्ति,

भूयात् भूत्यै गणेश: कलिवनदहनो विघ्नविच्छेदको न: ॥

1. गणपति :- (हाथ में पुष्प लेकर श्लोक बोलते हुए गणेश जी का आवाहन करें)

ऊँ गणानान्त्वा गणपति∞हवामहेप्प्रियाणान्त्वाप्प्रियपति∞हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति∞ हवामहे व्वसोमम। आहम जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्॥ ऊँ भूर्भुव: स्व: गणपतये नम:, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

2. अम्बिका :- (हाथ में पुष्प लेकर श्लोक बोलते हुए अम्बिका आवाहन करें)

ऊँ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वक: सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्॥ ऊँ भूर्भुव: स्व: अम्बिकायै नम:, अम्बिकां आवाहयामि स्थापयामि। आवाहनादि यथोपचारै: सम्पूज्य।

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम्।

लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥

ऊँ आयङ्गौ: पृश्निरक्क्रमीददन्मातरम्पुर:। पितरञ्चप्प्रयन्त्स्व:॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गौर्य्यै नम: गौरी आवाहयामि स्थापयामि ।

3. कूर्म :-धरां धत्ते पृष्ठे सकल चलन स्थावर युतां,महाबाहुर्योऽयं सुरदनुज-मर्त्यैरभिनुत:।

ह्वयामस्तं कूर्मीकृतवपुषमीशं मखममुं,कृतार्थं कर्तुं भो वरद! समुपेह्येहि भगवन्! ॥

ऊँ स्य कूर्मो गृहे हविस्तमघ्ने वर्द्धयात्वम्म।तस्मै देवाऽधिब्रुवन्नयञ्च ब्रह्मणस्पते॥ऊँ भूर्भुव: स्व: कूर्मायै नम: कूर्म आवाहयामि स्थापयामि।

4. अनन्त :- धराधारो वाताशन-कुलपति-र्देवमहित:,सुखं धत्ते विष्णुंसुमृदुलनिजाभोगशयने।

फणावृन्दैर्युक्तं तमिह मनसाऽनन्तममरं,ह्वयाम: पूजार्थं मखमिममुपेह्येहि भगवन ॥

ॐ नमोस्तु सर्प्पेब्भ्यो ये के च पृथिवीमनु। येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेब्भ्य़ सर्पेब्भ्यो नम़ ।।ॐ भूर्भुव: स्व: अनन्ताय नम: अनन्तं आवाहयामि स्थापयामि।

5. पृथ्वी :- सदा सर्वान् लोकान् निजवपुषि मातेव ससुखं, बिभर्षि त्वं कृत्वा समुपहतशोकान् निजरसै:।

ह्वयामस्त्वां भक्त्या जननि निजरूपं गुणमयं, गृहीत्वा यज्ञेऽस्मिन् धरणि समुपेह्येहि कृपया ।।

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनि। च्छा न: शर्म्म सप्प्रथा:।। ॐ भूर्भुव: स्व: पृथिव्यै नम: पृथ्वीं आवाहयामि स्थापयामि ।

प्रतिष्ठापनम् :- (हाथ की अञ्जलि में अक्षत पुष्प लेवे)

ॐ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पर्तिज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ œ समिमन्दधातु ।विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामो 3 म्प्रतिष्ठ ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:।

आसनम् -

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम्। आसनं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वरः ।।ॐ पुरुष ऽ एवेदं œ सर्व्वंद्धू तँयच्च भाव्व्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।। ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्च देवताभ्यो नम:। आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि ।

पाद्यम् –गौरीसुत नमस्तेस्तु श‘रप्रियसूनवे।पाद्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतै: फलै:।।

ॐ एतावानस्य महिमातोज्ज्याँश्चपूरुष:। पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। पादप्रक्षालनार्थं पाद्यं समर्पयामि ।

अर्घ्यम् - ताम्रपात्रस्थितं तोयं गन्धपुष्पफलान्वितम्।

सहिरण्यं ददाम्यर्घं गृहाण परमेश्वर:।। ऊँ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्त: समुद्द्रेहृद्यन्त रायुषि ।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम् ।। ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। हस्तयो: अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् -

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।

आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक ।।

ऊँ इमम्मेव्वरुण शुधीहवमद्द्या च मृडय। त्वामवस्युराचके ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् - **कावेरी नर्मदा वेणी तु'भद्रा सरस्वती ।**

गंगा च यमुनातोयं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद ।। ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। स्नानार्थे जलं समर्पयामि ।।

पञ्चामृत स्नानम् - **पयो दधिघृतं चैव मधुं च शर्करायुतम्।**

पंचामृतं मयादत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।

ऊँ पञ्चनद्य: सरस्वतीमपियन्तसस्रोतस:। सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित् ।ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् – (मंत्र बोलते हुए शुद्ध जल चढ़ावे**)**

स्नानार्थे तव देवेश पवित्रं तोयमुत्तमम्।

तीर्थेभ्यश्च समानीतं गृहाण गणनायक ।। ॐ शुद्धवाल: सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विना: श्येत:श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्णामा अवलिप्तायामा रौद्रानभोरूपा: पार्ज्जन्या:।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेक: (गन्धादिभि: सम्पूज्य) – (हाथ में अक्षत,पुष्प, गन्ध् मंत्र बोलते हुए गणेशजी के उपर छोड़े**)**

अथगणपत्यथर्वशीर्षम्

ॐ नमस्ते गणपतये ॥ त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि ॥ त्वमेव केवलं कर्त्तासि ॥ त्वमेव केवलं धर्त्तासि।। त्वमेव केवलं हर्त्तासि।। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि।। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम्।।1॥

ऋतं वच्मि।। सत्यं वच्मि।।2।। अव त्वं माम् ॥ अव वक्तारम् ॥ अव श्रोतारम् ॥ अव दातारम् ॥ अव धातारम् ॥ अव अनूचानम्। अव शिष्यम्।। अव पश्चात्तात्।। अव पुरस्तात्।। अवोत्तरात्तात्।। अव दक्षिणात्तात्।। अव चोर्ध्वात्तात्।। अवाधरात्तात्।। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्।।3 ॥

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मय:।। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममय:।। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि।। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि ॥ त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि।।4।।

सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते।। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति।। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति।। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति।। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभ:।। त्वं चत्वारि वाक्पदानि।। 5।।

त्वं गुणत्रयातीत:।। त्वं कालत्रयातीत:।। त्वं देहत्रयातीत:।। त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम्।। त्वं शक्तित्रयात्मक:।। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्।। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वम् इन्द्रस्त्वम् अग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वम ्।। ब्रह्मभूर्भुव: स्वरोम्।। 6।।

गणादिं पूर्वमुच्चार्य वर्णादिं तदनन्तरम्।। अनुस्वार: परतर:।। अर्धेन्दुलसितम्।। तारेण रुद्धम्।। एतत्तव मनुस्वरूपम्।। गकार: पूर्वरूपम्।। अकारो मध्यमरूपम्।। अनुस्वारश्चान्त्यरूपम्।। बिन्दुरुत्तररूपम्।। नाद: सन्धानम्।। संहिता

सन्धि:॥ सैषा गणेशविद्या॥ गणकऋषि: निचृद्गायत्रीच्छन्द:॥ गणपतिर्देवता॥ ॐ गं गणपतये नम:॥7॥ एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमंकुशधारिणम्॥ रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्॥

रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्॥ रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पै: सुपूजितम् ॥ भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्॥ आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृते: पुरुषात्परम्॥

एवं ध्यायति यो नित्यं। स योगी योगिनां वर:॥9॥ नमो व्रातपतये नमो गणपतये नम: प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नम: ॥10॥**ॐ अमृताभिषेकोऽस्तु॥**ॐ भूर्भुव: स्व: सिद्धि0 महा0 अभिषेकस्नानं सम0। शुद्धोदकस्नानम् ।

वस्त्रोपवस्त्रम् – (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर रक्षा सूत्र चढ़ावे)

रक्तवस्त्रमिदं देव देवाङ्सदृश प्रभो।

सर्वप्रदं गृहाण त्वं लम्बोदर हरात्मज॥

ॐ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्व:।

व्वासो ऽ अग्ने विश्वरूप œ सँव्ययस्वव्विभावसो॥ ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् – (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर जेनउ चढ़ावे**)**

रक्तवस्त्रमिदं देव प्रवाड़गसदृश प्रभो॥ सर्वप्रदं गृहाण त्वं लम्बोदर हरात्मज॥

ॐ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत: सुरुचोव्वेनऽआव:।

सबुद्ध्न्याऽउपमा अस्यव्विष्ठा: सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विव: । ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् – (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर चन्दन चढ़ावे)

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

ऊँ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत। ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षता: - (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **अक्षत** चढ़ावे)

रक्ताक्षतांश्च देवेश गृहाण द्विरदानन।

ललाटपटले चन्द्रस्तस्योपर्यवधार्यताम्।।

ऊँ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽअधूषत।अस्तोषत स्वभानवो व्विप्रा नविष्ठ्यामती योजान्विन्द्रते हरी ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्पाणि (पुष्पमालां)- (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **पुष्प** चढ़ावे)

सुगन्धीनि च पुष्पाणि धत्तूरादीनि च प्रभो। विनायक नमस्तुभ्यं गृहाण परमेश्वर।। ऊँ ओषधि: प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्ण्णव:।। ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। पुष्पाणि समर्पयामि।

अथ गणेशाङ्गपूजनम् – (हाथ में अक्षत,पुष्प, गन्ध् मंत्र बोलते हुए गणेशजी के उपर छोड़े)

ह्रीं गणेश्वराय नम: पादौ पूजयामि। ह्रीं विघ्नराजाय नम: जानुनीं पूजयामि। ह्रीं आखुवाहनाय नम: ऊरुं पूजयामि। ह्रीं हेरम्बाय नम: कटीं पूजयामि। ह्रीं कामारिसूनवे नम: नाभिं पूजयामि। ह्रीं लम्बोदराय नम: उदरं पूजयामि। ह्रीं गौरीसुताय नम: स्तनौ पूजयामि। ह्रीं गणनायकाय नम: हृदयं पूजयामि। ह्रीं स्थूलकण्ठाय नम: कण्ठं पूजयामि। ह्रीं स्कन्दाग्रजाय नम: स्कन्धौ पूजयामि। ह्रीं पाशहस्ताय नम: हस्तौ पूजयामि। ह्रीं गजवक्त्राय नम: वक्त्रं

पूजयामि । ह्रीं विघ्नहर्त्रे नम: ललाटं पूजयामि। ह्रीं सर्वेश्वराय नम: शिर: पूजयामि । ह्रीं गणाधिपाय नम: सर्वाङ्गं पूजयामि।

दुर्वाङ्कुरम्- (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **दुर्वा** चढ़ावे**)**

दूर्वांकुरान् सुहरितानमृतान्मत: प्रदान् ।

आनीताँस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ।।ऊँ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुष: परुषस्परि । एवा नो दूर्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च ।। ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि ।

बिल्वपत्रम् – **(**मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **बिल्वपत्र** चढ़ावे**)**

त्रिशाखैर्बिल्वपत्रैश्च अछिद्रै: कोमलै: शुभै:।

तव पूजां करिष्यामि गृहाण परमेश्वर ।।

ऊँ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च व्वरूथिने च नम:

श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। बिल्वपत्राणि समर्पयामि ।

शमीपत्रम् - – **(**मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **शमी** चढ़ावे**)**

ऊँ अग्नेस्तनूरसि व्वाचो व्विसर्ज्जनन्देववीतये त्वा गृामि बृहद्ग्रावासिव्वानस्पत्य: सऽइदन्देवेभ्यो हवि: शमीष्व सुशमि शमीष्व हविष्कृदेहि हविष्कृदेहि ।।ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। शमीपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् - (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर इंत्र चढ़ावे**)**

स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकेश्वर दयानिधे ।

भक्त्या दत्तं मयादेव स्नेहं ते प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात् ।। ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम्- (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **सिन्दूर** चढ़ावे**)**

उद्यद्भास्करसंकाशं सन्ध्यावदरुण प्रभो।

वीराल‘णं दिव्यं सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ।।

ॐ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमिय: पतयन्ति य ह्वा:।

घृतस्य धाराऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभि: पिन्वमान:।। ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि – **(**मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर अवीर चढ़ावे**)**

अबीरं च गुलालं च चोवा चन्दनमेव च।

अबीरेणार्चितो देव अत: शान्तिं प्रयच्छ मे।। ॐ अहिरिव भोगै: पेंति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमान:।हस्तग्घ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वत: ।। ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम्- (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **धूप** चढ़ावे**)**

दशांं गुग्गुलं धूपमुत्तमं गणनायक।

गृहाण सर्वं देवेश उमापुत्र नमोस्तु ते।।

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तंस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वाम:।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्निन्तमं पप्प्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्। ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। धूपम् आघ्रापयामि ।

दीपम् -

सर्वज्ञ सर्वलोकेश सर्वेषान्तिमिरापह।

गृहाण म‘लं दीपं रुद्रप्रिय नमोस्तु ते।।

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्नि: स्वाहा सूर्ोज्योतिर्ज्ज्योति: सू्: स्वाहा।

अग्रिर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्च: स्वाहासूर्ोव्वर्च्चोज्योतिर्वर्च्च: स्वाहा।

ज्योति: सू्: सूर्ोज्योति: स्वाहा ।ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। दीपकं दर्शयामि। हस्तौ प्रक्षाल्य।

नैवेद्यम् – **(**मंत्र बोलते हुए गणेश जी को मिष्ठान आदि का भोग लगावें**)**

नमो मोदकहस्ताय भालचन्द्राय ते नम: ।

नैवेद्यं गृह्यतां देव स'टं मे निवारय।।

नैवेद्यपात्रं पुरतो निधाय चन्दनपुष्पाभ्यां समभ्यर्च्च्य। धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य देवस्य अग्रे दक्षिण भागे वा निधाय ग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत् - ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा।

ॐ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो द्यौ: समवर्त्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिश: श्रोत्रात्तथा लोकाँ 2ऽ अकल्पयन् ।। ॐ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि।

ऋतुफलम् – (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **ऋतुफल** चढ़ावे)

नारिकेलञ्च नारं कदम्बं मातुलिकम्।

द्राक्षाखर्जूरदाडिम्बं गृहाण गणनायक ।।

ऊँ या: फलीर्नीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्च पुष्पिणी:।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हस:।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। फलं निवेदयामि। पुन: आचमनीयं निवेदयामि ।

ताम्बूलम् - (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **ताम्बूल** चढ़ावे)

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।।

एलादिचूर्ण संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।।

ऊँ उतस्म्मास्यद्द्रवतस्तुरण्यत: पर्ण्णन्नवेरनुवाति प्प्रगर्द्धिन:।

श्येनस्ये वद्ध्रजतो ऽ अङ्क सम्परिदधिक्राब्ण्ण: सर्हो तरित्रत: स्वाहा ।ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। ताम्बूलं समर्पयामि।

दक्षिणा - (मंत्र बोलते हुए गणेश जी के उपर **दक्षिणा** चढ़ावे)

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो:।

तेन प्रीतो गणाध्यक्ष भव सर्वफलप्रद ।

ऊँ द्द्त्तँयत्परादानँ त्स्पूर्त्तयाश्चदक्षिणा:।

तदग्नेर्व्वैश्वकर्म्मण: स्वर्द्देवेषु नो दधत्।ऊँ भूर्भुव: स्व: गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नम:। दक्षिणां समर्पयामि।

पुष्पाञ्जली - ((हाथ में पुष्प लेकर मंत्र बोलते हुए गणेश जी ध्यान करें))

त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।

विद्या प्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव।।1।।

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणै: पूजितं श्वेतगन्धै;क्षीराब्धौ रत्नदीपै: सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्।

दोर्भि: पाशाङ्कुशाब्जाभयवरदधतं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रंध्याये शान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्।2।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नम: पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (हाथ में लिए हुए पुष्प लेकर छोड़ दे)

नमस्कार -विनायको योऽखिललोकनायक:, यो विघ्नराजोऽपिहि विघ्ननाशक:।

अनेक दन्तार्चित पादयुग्मकं, तमेकदन्तं प्रणमामि सन्ततम्।।

विशेषार्घम् – (एक दीपक में जल, अक्षत , पुष्प, द्रव्य दुर्वा रखकर श्लोक बोलते हुए तथा दीपक सहित सा को हाथ में लेकर सर से स्पर्श कराकर गणेश जी के उपर गिरा दे**) ।**

रक्ष रक्ष गणाध्यक्षो रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।

भक्तानामभयं कर्त्ता त्राता भव भवार्णवात्।।

द्वैमातुरकृपासिन्धो षाण्मातुरग्रज प्रभो।

वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद।।

गृहाणार्घ्यमिमं देव सर्वदेव नमस्कृत:।

अनेन सफलार्घ्येन फलदोऽस्तु सदा मम।।अनेन कृताऽर्चनेन श्रीगणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम

4.5. षड्विनायक पूजन

गोधूमादिधान्यपूरिते हरिद्रादिरञ्जितेमृण्मये विघ्नाख्य-कलशे मोदादिषड्विनायकानां प्रतिमा: कुंकुमादिना लिखित्वा आवाहयेत्-

1. ऊँ भूर्भुव: स्व: मोदायनम:, मोदमावाहयामि स्थापयामि।

2. ऊँ भूर्भुव: स्व: प्रमोदाय नम:, प्रमोदमावाहयामि स्थापयामि।

3. ऊँ भूर्भुव: स्व: सुमुखाय नम:, सुमुखमावाहयामि स्थापयामि।

4. ऊँ भूर्भुव: स्व: दुर्मुखाय नम: , दुर्मुखमावाहयामि स्थापयामि।

5. ऊँ भूर्भुव: स्व: अविघ्नाय नम:, अविघ्नमावाहयामि स्थापयामि।

6. ऊँ भूर्भुव: स्व: विघ्नकर्त्रे नम:, विघ्नकर्तारमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठापनम् :- (हाथ की अञ्जलि में अक्षत पुष्प लेवें)

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं यज्ञ œ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा सऽ इह मादयन्तामों 3 म्प्रतिष्ठ ।।ऊँ भूर्भुव: स्व: मोदादिषड्विनायका: सु प्रतिष्ठिता वरदा भवत:।

ऊँ मोदादिषड्विनायकेभ्यो नम: इति पंचोपचारै: षोडशोपचारै: वा संपूज्य । अनया पूजया मोदादिषड्विनायका: प्रीयन्ताम् ।

4.6. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को गणपति पूजन की विधि का ज्ञान मिलेगा । इसके अन्तर्गत गणपति पूजन का मुहूर्त्त, विविध मन्त्रों का ज्ञान, नूतन गणपति मूर्ति का स्थापन-विधि, प्राण-प्रतिष्ठा, अङ्गपूजन, अथर्वशीर्ष का पाठाभ्यास, षड्विनायक पूजन सहित गणपति की सम्पूर्ण पूजन विधि का ज्ञान छात्रों को मिलेगा। गणपति को प्रथमपूज्य का आशीर्वाद सभी देवताओं से प्राप्त है अतएव कोई भी माङ्गलिक कार्य इनके पूजन के बिना पूर्णता को प्राप्त नहीं होता है ।

4.7. शब्दावली

1. ऋणहर्तृ = ऋणों का नाश करने वाले

2. गजानन = हाथी के समान मुख

3. वक्रतुण्ड़ = टेढ़ी सूण्ड़

4. हरिद्रा = हल्दी

5. प्रतिमा = मूर्ति

6. कूर्म = कछुआ

7. अनन्त = सर्पविशेष

8. आखु = चूहा

9. स्थूल = मोटा

10. विघ्नराज = विघ्नों के स्वामी

11. नैवेद्य = भोजन

12. धेनुमुद्रा = गाय के थन के समान

4.8. अतिलघुत्तरी प्रश्न

प्रश्न - 1 : गणेश चतुर्थी कब मनायी जाती है?

उत्तर : भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष की चतुर्थी को गणेश चतुर्थी मनायी जाती है।

प्रश्न - 2 : गणपति की कितनी शक्तियों का पूजन प्रारम्भ में किया जाता है ?

उत्तर : गणपति की नवशक्तियों का पूजन प्रारम्भ में किया जाता है ।

प्रश्न - 3 : गणपति पूजन में किस अथर्वशीर्ष का पाठ किया जाता है ?

उत्तर : गणपति पूजन में गणपति-अथर्वशीर्ष का पाठ किया जाता है।

प्रश्न - 4 : गणपति के साथ किन देवताओं का पूजन किया जाता है ?

उत्तर : गणपति के साथ में गौरी, कूर्म, अनन्त व पृथ्वी का का पूजन किया जाता है ।

प्रश्न - 5 : भद्रा में किस देवता के पूजन का विशेष महत्त्व है?

उत्तर : भद्रा में गणपति-पूजन का विशेष महत्त्व है ।

4.9. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न - 1 : गणपति-पूजन में किन नवशक्तियों का पूजन किया जाता है? सभी के नाम बताईये ?

प्रश्न - 2 : गणपति अथर्वशीर्ष का उल्लेख करिये ?

प्रश्न - 3 : गणपति के अङ्गपूजन का उल्लेख करिये ?

प्रश्न - 4 : गणपति के ध्यान सहित विशेषार्घ्य का मन्त्र लिखिये ?

प्रश्न - 5 : षड्विनायक पूजन बताइये

4.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

2. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर ।

3. कर्मठगुरु:लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी ।

4. मन्त्र महोदधि

सम्पादक - श्री शुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी।

4. गणपतिस्तुति कल्पद्रुमसम्पादक - डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा प्रकाशक - जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर।

इकाई — 5

षोड़श मातृका पूजन विधान

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2. उद्देश्य

5.3. अथ मातृकास्तुति

5.4. सगणेशषोडशमातृका पूजन

5.5. श्रियादि सप्तमातृका पूजन

5.6. अथ श्रीसूक्त

5.7. सारांश

5.8. शब्दावली

5.9. अतिलघुत्तरी प्रश्न

5.10. लघुत्तरीय प्रश्न

5.11. सन्दर्भ ग्रन्थ

5.1. प्रस्तावना

पूजन क्रम में षोड़शमातृकाओं का पूजन अनिवार्य क्रम है, इसके अन्तर्गत गणपति, षोड़श देवियों तथा सप्त वसोर्द्धारा देवियों का पूजन किया जाता है। वेदों में इन्द्र, वरुण, यम, सूर्य, विष्णु, अग्नि एवं रुद्र आदि देवों से सम्बद्ध सूक्तों के साथ इन्द्राणी, वरुणानी, यमी, उषस्, श्री एवं रुद्राणी की भी उपासना की गयी है, साथ ही स्वाहा

को अग्नि की पत्नी के रूप में स्वीकार किया गया है। देव हो या देवियाँ - सभी की स्तुति में शक्ति की आराधना ही उसका मूल आधार है क्योंकि शक्ति एवं शक्तिमान का परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्ध है। ब्रह्मा की सर्जकता (सृजन करने शक्ति), विष्णु की प्रजापालकता, शिव की संहारकता मात्र शक्ति के ही कारण है। शक्ति के बिना कुछ भी सम्भव नहीं है। शक्ति शब्द शक् धातु से क्तिन् प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है, जिसका तात्पर्य उस साधन से है जिससे कोई भी व्यक्ति कुछ भी करने में समर्थ हो पाता है इसीलिए पृथक्-पृथक् पात्रों में यह शक्ति पृथक्-पृथक् अस्तित्व का बोध भी कराती है। शक्ति की उपासना के वर्तमान स्वरूपों में महाकाली, महालक्ष्मी व महासरस्वती प्रमुख है।

पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत शक्ति कहीं देवपत्नी, कहीं काली, दुर्गा, माया, सीता, सावित्री तथा तन्त्रादि साहित्य में लक्ष्मी, अन्नपूर्णा, सरस्वती, लक्ष्मी, पृथ्वी, रात्रि, पीताम्बरा, बगलामुखी, त्रिपुर सुन्दरी, भुवनेश्वरी आदि दशमहाविद्याओं के रूप में पूजित है। इसकी व्यापकता इसी से सिद्ध है कि यह केवल किसी स्थानविशेष में ही नहीं अपितु गाँव-गाँव, घर-घर में कुलदेवी आदि के रूप में पूजित है।भगवती के उपासकों ने दस महाविद्याओं को कालीकुल एवं श्रीकुल दो भागों में विभाजित किया है। दसों देवियाँ अपने-अपने स्वभाव, वर्ण, रुचि एवं कार्यों के आधार पर भक्तों के द्वारा पृथक्-पृथक् रूप में पूजित है, जिनमें गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया आदि देवियों सहित मुख्यरूप से कुलदेवी का पूजन किया जाता है।

5.2. उद्देश्य

1. षोड़शमातृकाओं व वर्साद्धारा देवियों की पूजन विधि का ज्ञान प्राप्त करना।

2. देवियों के आवाहन का ज्ञान प्राप्त करना।

3. देवी से सम्बन्धित सूक्तों का पाठाभ्यास।

5.3. अथ मातृकास्तुति

जय जय देवि परापररूपिणि, जय जय जगतां जनयित्रि, जय जय लीलाभासितसकले जज सर्वाश्रयरूपे।

जय जय सर्वप्रलयविभाविनि, जय जय सर्वान्तररूपे, जय जय विद्याविलसितदेहे, जय जय शकरि नः पाहि ।।1।।

परापर ब्रह्मस्वरूपिणी अथवा परापरा विद्यारूपिणी, लोकों को उत्पन्न करनेवाली, से चराचर रूप संसार को प्रकाशित करने वाली, सम्पूर्ण पदार्था की आश्रयभूता (प्रकृतिरूपा) सम्पूर्ण भूतों के प्र bय को प्रकट करनेवाली, सबकी अन्तर्यामिनी, विद्याओं से देदीप्यमान शरीरवाली , देवी तुम्हारी जय हो । हे कल्याणकारिणी शिवशक्तिरूपे देवी ! तुम हमारी रक्षा करो ।।1।।

तदनुज्ञानमयात्मविभक्तान्, मध्यमभावान् कथ्यन्ती,

मध्यमरूपानाहतवासिनि, मिश्रितरूपे बुद्धिमयि ।

वसुविधशक्तिबहिष्कृतभावे पीठविभेदविचित्रकृते,

जय जय विद्याविसितदेहे, जय जय शंकरि नः पाहि ।।।

परापश्यन्तीरूप से मातृका विभाग के अनन्तर ज्ञानस्वरूप से विभागवाली बौद्ध पदार्था को स्वीकृत करती हुई मूलाधार और ब्रह्मरन्ध्र इन दोनों के मध्यदेशरूप अनाहत नाम के स्थान में रहनेवा वाली या मध्यमा वाणीरूप और अनाहतस्थान में रहने वाली पश्यन्ती और वैखरीधर्म से युक्त अध्यवसायरूपिणी आठ प्रकार की शक्तियों से पदार्था को स्वीकार करनेवाली , स्थानभेद से विलक्षण व्यापारवाली, विद्याओं से भासुर शरीरवाली, हे देवी ! तुम्हारी जय हो। हे कल्याणकारिणी शिवशक्तिरूपिणी ! हमारी रक्षा करो ।।3।।

अद्वयसंविन्मात्रशरीरं, सद्वयभावे कथ्यन्ती,

जातानुत्तरमुखशरकिरणैर्मिथुनविभेदादपि दशधा।

आद्या तत्परपरसंयोगाद्, भूयश्चापि चतुर्विधता,

जय जय विद्याविकसितदेहे, जय जय शंकरि नः पाहि ।।

उपाधिरहित ज्ञानरूप शरीर को द्वैतरूप प्रपत्ति में परिणत करती हुई, अकारादि पाँच स्वरों के प्रकार से अपने-अपने स्वरूप के सम्बन्ध में दस प्रकार को प्राप्त हुई अकाररूप आदिमात्रा । इकार और एकार तथा उकार और ओकार के संयोग से चार प्रकार को प्राप्त हुई विद्याभूषितशरीरवाली देवी, तुम्हारी जय हो। हे कल्याणकारिणी ! हमारी रक्षा करो ।।

अन्ते भेदाभेदविभेदादपि नृपसंख्यस्वररूपा,

पंचविधं तत्पंचकमाद्यं व्यत्यययोगाद्वेदविधा।

तदनु चतुर्धा मध्यमहीना मिथुनद्वितयं कश्यन्ती,

जय जय विद्याविकसितदेहे, जय जय शंकरि नः पाहि ।।5।।

सन्ध्यक्षरों के अन्त में भेद (बिन्दु विसर्ग रूप से) और प्रभेद (अकार रूप से) विभाग से सोbह स्वरूपवाली, आद्य पंचकवर्ग (पाँच प्रकार का) अन्तस्थ वर्णा के योग से चार प्रकारवाली (उसके अनन्तर ऊष्म वर्णा से चार प्रकार की है)– मध्यम वर्ण से रहित वर्णद्वय के संयोग को करती हुई हे विद्याशोभितशरीरे देवी ! तेरी जय हो। हे कल्याणकारिणी ! हमारी रक्षा करो ।।

एवं भूशरमितभेदाढ्य विद्याराज्ञी माता त्वं,

तत्संभेदादखिं भिन्नं भावयसि त्वं शब्दमयी।

त्वत्कया यदि नोसम्भिन्नं, गगनमयं स्यादखिमिदं,

जय जय विद्याविवसितदेहे, जय जय शंकरि नः पाहि ।।6।।

इस तरह 51 भेदयुक्त तू माता विद्याओं की रानी है, शब्दरूप तू ही उन वर्णा के संभेद से सम्पूर्ण जगत् को मिश्र रूप से प्रकट करती है। नाम रूपात्मक यह संसार अगर तेरी मात्रा से युक्त न हो तो आकाश के समान शून्य ही हो जावे। विद्याओं से देदीप्यमान शरीर को धारण करनेवाली हे देवी ! तुम्हारी जय हो। हे कल्याणकारिणी ! तुम हमारी रक्षा करो ।।

स्थानत्रयमपिकया हीनं, तव यदि मातर्नो किंचित्,

परमं चापि पदं विकचेच्छपथोपेतं नेतरथा।

तीवं प्रत्यातकया तद्रूपं व्याप्य सदा स्फुरसि,

जय जय विद्याविसितदेहे, जय जय शंकरि नः पाहि ।।7 ।।

मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध यही तीनों स्थान अगर तेरी करूणा से रहित हों तो संसार का व्यवहार ही बन्द हो जाये और तो क्या वह परमपद (अर्थात् मोक्ष) भी न हो; यह मैं शपथ के साथ कहता हूँ, अन्यथा नहीं। इस प्रकार ब्रह्माण्ड का नाश हो जायगा। इसीलिए तू अकारादि हकारान्त वर्णों को बतानेवाली, उपाधि रहित पद को व्याप्त करके हमेशा प्रकाशित हो रही है। हे विद्याविकसित शरीरवाली देवी, तुम्हारी जय हो, हे कल्याणकारिणी ! हमारी रक्षा करो ।।7।।

वयमिह लोके सर्जनमुख्ये, कृत्ये युक्तास्त्वीत्या,

त्वत्पदपप्रभवाः काये, सीदन्तस्त्वामविदन्तः।

का काले पादप्रणतान्, भीतान्मूढानतिदीनान्,

जय जय विद्याविकसितदेहे, जय जय शंकरि नः पाहि ।।8।।

इस लोक में तेरे भय से हम लोग उत्पत्ति, स्थिति, संहाररूप कार्य में लगे हुए हैं। तेरे पद-कम से उत्पन्न हुए समय पर तुझ को नहीं जानते हुए अर्थात् अहंकार से अज्ञान को प्राप्त हुए दुःखी हो रहे हैं। समय-समय पर अर्थात् विपत्ति आने पर तेरे चरणों में प्रणाम करनेवाले भययुक्त मूढ दीन हम लोगों की तू रक्षा कर। हे विद्याओं से देदीप्यमान शरीरवाली कल्याणकारिणी शिवशक्ति रूपा देवी ! तुम्हारी जय हो। ।।8।।

मेधा वाणी भारती त्वं, विद्या माता सरस्वती

ब्राह्मी भाषा वर्णमयी, पराद्याकृतिरव्यया ।।9।।

बुद्धिरूपा, वाणीरूपा, भारतीरूपा, मन्त्रादि विद्यारूपा, परिच्छेत्रीरूपा, सरस्वती ब्राह्मी भाषा वर्णरूपा आत्मप्रकाशरूपा तू ही है। संसार की आदिमूहै, कृतिरूपा है, अविनाशिनी है।।9।।

विकल्पा निर्विकल्पाजा, कामा नादमयी क्रिया।

कालशक्तिः, सर्वरूपा, शिवा श्रुतिरनुत्तरा ।। 10।।

तू ही विकल्प है, तू ही निर्विकल्प है, तू ही अजा है, तू ही काम है, तू ही नादरूपा है, तू ही क्रिया है, तू ही काम की सामर्थ्यरूपा है, तू ही सर्व प्राणीरूपा है, तू ही कल्याणरूपिणी है, तू ही श्रुति है, तू ही सर्वोत्तमा है।।10।।

रक्षास्मांस्त्वं महादेवि, सर्वलोकमहेश्वरि।

पतितांस्त्वरणयोः, रक्ष देवि नमोस्तु ते।।11।।

सर्वलोकों की ईश्वरी महादेवी ! तू हमारी रक्षा कर। हे देवी ! तेरे चरणों में गिरे हुए हमारी रक्षा कर, हम आपको नमस्कार करते हैं।।11।।

इति स्तुता सा परमा, मातृका विश्वरूपिणी ।

प्राह देवान्विधिमुखान्, प्रसन्ना तत्कृतार्चना ।।12।।

इस प्रकार से स्तुति की गई संसाररूपिणी वह मातृका (ब्रह्मादि देवताओं की) पूजा से प्रसन्न होकर उन (ब्रह्मादि देवों) से कहने लेगी ।।12।।

शृणुध्वं विधिमुख्या मे, वचोभिलषितास्पदम् ।

स्तवेनानेन तुष्टास्मि, श्रेष्ठेयं मत्स्तुतिः कृता ।।13।।

हे ब्रह्मादि देवों ! तुम मेरे अभीष्ट वचन को सुनो। मैं आप लोगों की इस स्तुति से प्रसन्न हूँ। आप लोगों ने यह मेरी श्रेष्ठ स्तुति की है।।13।।

गूढार्थगर्भिता चेयं, मातृकावणर्सम्भवा। मातृकास्तुतिरित्येषा, विख्याता तु समन्ततः ।।14।।

गोपनीय अर्थ से युक्त मातृकावर्णा से उत्पन्न हुई यह स्तुति मातृकास्तुति के नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध होगी।।14।।

त्रिसन्ध्यं यः पठेदेनां, तस्याहं वाग्मयी यदि ।

प्रादुर्भवामि काव्यादिमयी विद्यास्वरूपिणी ।।15।।

जो मनुष्य तीनों काल में इसे पढ़ेगा, उसके öदय में शब्दस्वरूपिणी मैं काव्यादिमयी विद्यारूपा प्रकट होती रहूँगी॥15॥

एतां स्तुतिं प्रपठतो नहि विद्या विहीयते।

समो वाक्पतिना भूयाद्वादेषु विजयी तथा ॥16॥

इस स्तुति को पढ़नेवाले की विद्या नष्ट नहीं होगी और वह बृहस्पति के समान होगा तथा वाद-विवाद (शास्त्रार्थ) में भी विजय को प्राप्त होता रहेगा ॥16॥

चतुर्विंशति नामानि, भवद्भिः पठितानि तु ।

प्रत्यहं त्रिषु कालेषु पठेत् वेदाक्षिवारकम् ॥17॥

आप लोगों से पढ़े हुए चौबीस नामों को प्रतिदिन तीनों काb चौबीस बार पढ़ना चाहिए॥17॥

ततो धारयति श्लोकान्, सहानपि प्रत्यहम्।

बुद्धिः कुशाग्रसदृशी, सूक्ष्मार्थप्रविभेदिनी।

जायते नात्र संदेहः, सत्यमेतन्मयेरितम् ॥18॥

ऐसा करने से प्रतिदिन हजार लोकों को याद कर सकता है। उसकी बुद्धि सूक्ष्मार्थ को ग्रहण करनेवाली तथा कुशाग्र सदृश हो जाती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है, यह मैंने सच कहा है ॥18॥

5.4. सगणेशषोडशमातृका पूजन

एक लकड़ी की चौकी अथवा समतल भूमि पर वेदी का निर्माण करते हुए उस पर लालवस्त्र बिछाकर षोड़शमातृका व सप्तमातृका की गणपति सहित पूर्व व अग्निकोण के मध्य में स्थापित (16 पुञ्ज गेहूँ अथवा सुपारी से भी बना सकते है) करे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर उत्तराभिमुख अथवा पूर्वाभिमुख बैठे । कुंकुम (रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन

आरम्भ करे। 16वी मातृका कुलदेवी होती है, इस क्रम में यजमान अपने ग्राम/नगर/कुल की आराध्य देवी का पूजन करे। यदि अपनी कुलदेवी के विषय में ज्ञान नहीं हो तो दुर्गा देवी का पूजन करे ।

ॐ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्रीविजया जया।

देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातर: ।।

धृति:पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनकुलदेवता।

गणशेनाधिका वृद्धौ पूज्यास्तु षोडश ।।

गणपति :- (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर गणपति का आवाहन पूजन करें।)

प्रतुर्वन्नेहि त्वं जलजजपमालांकुशगदा,

वहन् हस्ताम्भोजैरिभमुख! मुखे मोदकवरम्।

त्रिनेत्रं त्वां लम्बोदरममरपूज्यैकरवदनं

ह्वयाम: पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि भगवन्।।

अर्थात् हे गणेश! चतुर्भुजस्वरूप चारों भुजाओं में क्रमश: जप-माला-अंकुश व गदा को धारण करने वाले, सूण्ड में कमल को धारण करने वाले, हाथी के समान मुखवाले, मुख में श्रेष्ठ मोदक धारण करने वाले, तीन नेत्रों से युक्त, लम्बोदर, देवताओं के पूज्य, एकदन्त, श्रीगणेशजी मैं आपको आवाहन करता हूँ, पूजन के लिए इस यज्ञभूमि में पधारें।

आगच्छ भगवन्दविस्वस्थानात् रिमश्विर।

अहं त्वां पूजयेत्सामे सदा त्वं सम्मुखोभव ।।

ॐ गणानान्त्वा गणपति œ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति œ हवामहे

निधीनान्त्वा निधिपति œ हवामहे व्वसोमम। आहमजानिगर्भधमात्वमजासिगर्भधम्।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणपतये नम:, नैऋत्यकोष्ठे अर्द्धभागे गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

1. गौरी :- (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर गौरी का आवाहन पूजन करें ।)

इमां गौरी देवीं हिमगिरिसुतां शम्भुललनां

सुरैरर्च्यां लोके प्रणतजनसंरक्षणपराम ्।

उमामाद्यां शक्तिं जलजनयनां चन्द्रवदनां

ह्वयाम: पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि शिवदे।।

अर्थात् हिमाचल की पुत्री, भगवान शिवशम्भु की प्रिया, देवताओं द्वारा अर्चनीय, इस संसार में प्रणाम करने वाले जनों की रक्षा में तत्पर रहने वाली, आदिशक्ति, कमल के समान नेत्रवाली, चन्द्र के समान मुखवाली, उमा व गौरी नामों से विख्यात, हे देवि! हम आपका आवाहन करते है, आप इस यज्ञभूमि में पूजन के लिए आवे और कल्याण करे

हिमाद्रितनयां दविीं वरदां भैरवप्रियाम् ।

ब्रह्मादिरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम् ।। ॐ आयङ्गौ: पृश्रिरक्क्रमीदसदन्मातरम्पुर:। पितरञ्चप्प्रयन्त्स्व:।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गौर्यै नम:, गणेशात्पूर्वे गौरीमावाहयामि स्थापयामि ।

2. **पद्मा** :- (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर पद्मा का आवाहन पूजन करें।)

हिरण्याभां पद्मां सरसिजकरां त्वामघहरां

परां देवीं विष्णोरुरसि विलसन्तीं स्मितमुखीम्।

ह्वयाम: पूजार्थं त्रिभुवननुतां क्षीरधिसुतां

सपर्यां स्वीकर्तुं मखभुवमुपेह्येहि सुभगे।।

अर्थात् स्वर्ण के समान आभायुक्त, हाथ में कमल धारण करने वाली, पापों को हरने वाली, विष्णु के हृदय पर विलास करने वाली, प्रसन्नमुख परादेवी, तीनों भुवनों की वन्दनीय, समुद्र की पुत्री, पूजा स्वाकार करने के लिए हे पद्मा देवि! यज्ञभूमि में पधारे और सुन्दर सौभाग्य को प्रदान करे।

ॐ हिरण्यरूपा ऽ उषसोव्विरोकऽउभाविन्द्राऽउदिथ: सूॅंश्च ।

आरोहतं व्वरुणमित्र गर्त्ततत्तश्चक्षाथामदितिन्दितिञ्चमित्रोसिव्वरुणोसि ।ॐ भूर्भुव: स्व: पद्मायै नम:, गौर्यात्पूर्वे पद्मामावाहयामि स्थापयामि ।

3. शची :- (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर शची का आवाहन पूजन करें।)

कदाचिद् या देवी त्रिदशरिपुनाशं प्रकुरुते, कदाचित्सुत्राम्णा विलसति च या नन्दनवने।

ह्वयामस्तामैरावतसमधिरूढां त्रिनयनां,सपर्यां स्वीकर्तुं शचि! मखमुपेह्येहि कृपया ।।

अर्थात् जो देवी कभी इन्द्र के शत्रुओं का नाश करती है और कभी नन्दनवन में विलास करती है, ऐरावत गज के ऊपर आरूढ़ तीन नेत्रों से युक्त हे देवि शची! पूजा स्वीकार करने के लिए कृपापूर्वक यज्ञभूमि में पधारे ।

दिव्यरूपां दिव्यवस्त्रां दिव्यालंकारसंयुताम्।

शतक्रतो महोरस्थां शचीमावाहयाम्यहम्।।

ॐ कदाचनस्तरीरसिनेन्द्रसश्चसिदाशुषे।

उपापेन्नुमघवन्भूयऽइन्नुते दानन्देवस्यपृच्च्यते।। ॐ भूर्भुव: स्व: शच्यै नम:, पद्माया: पूर्वे शचीं आवाहयामि स्थापयामि।

4. मेधा :- (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर मेधा का आवाहन पूजन करें।)

सुमेधां मे देहि प्रहर जडतां हंसगमने

वराक्षस्रकपुस्ता-भयलसितहस्ते! सुरनुते!।

ह्वयामस्त्वां मेधे! मखभुवि समागत्य वरदे!,

गृहाणार्चां मातर्भगवति! शुभं यच्छ सततम्।।

अर्थात् हंस पर विराजमान, हंस के समान चालवाली जडबुद्धि को समाप्त करने वाली, देवताओं के द्वारा नमस्कृत, अभयमुद्रा से युक्त हस्तवाली, श्रेष्ठ रूद्राक्षमाला व पुस्तक को धारण करनेवाली हे मेधा देवि! मुझे सुन्दर मेधा प्रदान करे, मैं आपका आवाहन करता हूँ, यज्ञभूमि में पधारकर वर दे और हे माता भगवति! इस पूजा को स्वीकार करें और निरन्तर हमको शुभफल प्रदान करे ।

आवाहयाम्यहं मेधां मेधाशक्तिप्रवद्र्धिनीम्।

वरप्रदां सौम्यरूपां जरां निर्जरसेविताम्।।

ॐ मेधाम्मे व्वरुणो ददातु मेधामग्नि: प्प्रजापति:।

मेधामिन्द्रश्च व्वायुश्च मेधान्धाता ददातु मे स्वाहा। ॐ भूर्भुव: स्व: मेधायै नम:, शच्या: पूर्वे मेधां आवाहयामि स्थापयामि।

5. सावित्री :- (हाथ में अक्षत पुष्प लेकर सावित्री का आवाहन पूजन करें।)

उपायाम: सेव्यां जगदुदयहेतुं सुरनुतां

सावित्रीं लोकानां स्रुव-वर-करां ब्रह्मललनाम ्।

ह्वयाम: सावित्रीं श्रुतिनिकरगर्भां मखमयीं,

सपर्यां स्वीकर्तुं भगवति समायाहि वरदे ।।

अर्थात् सारे संसार की उत्पत्ति के लिए सेवनीय देवताओं द्वारा नमस्कृत स्रव और वरमुद्रा हाथ में धारण करने वाली, ब्रह्मा की पुत्री, अपने गर्भ में वेदों को धारण करने वाली यज्ञस्वरूप, हे सावित्री! आप हमारी सपर्या (विशेष पूजा) स्वीकार करने के लिए पधारे, हम आपका आवाहन करते है, पधारकर हमें वर प्रदान करे।

जगत्सृष्टिकरीं धात्रीं देवीं प्रणवमातृकाम् ।

वेदगर्भां यज्ञमयीं सावित्रीं स्थापयाम्यहम् ।।

ॐ उपयामगृहीतोसि सावित्रोसि चनोधाश्चनोधाऽअसिचनोमयिधेहि ।

जिन्वज्ञञ्जिन्वज्ञपतिं भगाय देवायत्वा सवित्रे।। ॐ भूर्भुव: स्व: सावित्र्यै नम:, गौर्यादुत्तरे सावित्रीं आवाहयामि स्थापयामि ।

6. विजया :-

अहो यस्या विज्यं धनुरपि जयं यच्छति सदा,

स्वभक्तानां रक्षाकरणविधिदक्षा जगति या।

ह्वयामस्तां देवीं सकल सुरसेव्यां भगवतीं,

सपर्यां स्वीकर्तुं मखभुवमुपेह्येहि विजये!।।

अर्थात् जिसका धनुष विजयरूपी जय को सदा प्रदान करता है, जो इस संसार में अपने भक्तों की रक्षा करने की विधि में दक्ष है। ऐसी देवी भगवती देवताओं से वन्दित विजया का आवाहन करते है, हे विजया! यज्ञभूमि में हमारी सपर्या (सेवा) को स्वीकार करने के लिए पधारे।

आवाहयाम्यहं देवीं विजयां देवसंस्तुताम्।

सर्वास्त्रधारिणी वन्द्यां सर्वाभरणभूषिताम्।।

ॐ व्विज्ज्यन्धनु: कपर्द्दिनोव्विशल्यो बाणवाँ 2ऽ उत।

अनेशन्नस्य याऽइषवऽ आभुरस्य निषङ्गधि:।। ॐ भूर्भुव: स्व: विजयायै नम:, सावित्र्यात्पूर्वे विजयां आवहयामि स्थापयामि।

7. जया :-

जयार्थं देवानामसुरकुलनाशाय च यया,

धृतो दिव्यो देहस्त्रिभुवननुतस्तामिह जयाम्।

दधानां हस्ताब्जैरभयवरशूलासिनिकरं,

ह्वयामोऽर्चार्थं भो मखभुवमुपेह्येहि वरदे।।

अर्थात् देवताओं की जय के लिए, असुरकुल के नाश के लिए जिस देवी ने दिव्यदेह (स्वरूप) धारण की है, ऐसी त्रिभुवन (तीनों भुवनों के द्वारा नमस्कृत) हाथ में कमल, अभयमुद्रा, वरमुद्रा, शूल, खड्ग धारण करने वाली हे देवि जया! अर्चन करने के लिए हम आपका आवाहन करते है, हे वर देने वाली भगवती! आप यज्ञभूमि में पधारकर हमें वर दे।

सुरारिमथिनीं देवीं देवानामभयप्रदाम्।

त्रैलोक्यवन्दितां देवीं जयामावाहयाम्यहम्।।

ॐ यातेरुद्रशिवातनूरघोरा पापकाशिनी।

तयानस्तन्वाशंतमयागिरिशन्ताभि चाकशीहि।। ॐ भूर्भुव: स्व: जयायै नम:, विजयाया: पूर्वे जयां आवाहयामि स्थापयामि।

8. देवसेना :-

सुदेवानां भद्रा सुमतिरथ पुंसां कृतधियां

सुरारातीनां या प्रलयरजनी स्कन्दरमणी।

मयूरारूढां तां मनसि सुरसेनामिह नुमो

ह्वयामश्चार्चार्थं भगवति समायाहि सुखदे।।

अर्थात् श्रेष्ठ देवताओं का कल्याण करने के लिए सुमति (सुन्दर बुद्धिरूप) और किये हुए का उपकार मानने वाले पुरूषों के लिए बुद्धिरूप, देवताओं के शत्रुओं के लिए कालरात्रि और स्कन्द (स्वामी कार्तिकेय) के साथ रमण करने वाली, मोर पर सवारी करने वाली, हे देवसेना! तुमको हम मन से नमस्कार करते है और पूजा के लिए आवाहन करते है। हे भगवति! आप पधारे और हमें सुख दे।

आवाहयाम्यहं देवीं देवसेनां महाबलाम्।

तारकासुर संहार कारिणीं बर्हिवाहनाम्।।

ऊँ देवानां भद्द्रासुमतिऋर्जूयतान्देवानाæ रातिरभिनो निवर्त्तताम्।

देवाना æ सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयन्देवानऽआयु: प्प्रतिरन्तु जीवसे। ऊँ भूर्भुव: स्व: देवसेनायै नम:, जयाया: पूर्वे देवसेनाम् आवाहयामि स्थापयामि।

9. स्वधा :-

पितृभ्यो या कव्यं वितरति सदा लोकमहिता,

दयामूर्ति: पुंसामभिलषितपूर्तिर्भगवती।

स्वधां तामाराध्यामखिलमनुजै: स्वर्गनिलयां

ह्वयाम: पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि विमले।।

अर्थात् पितरों के लिए जो कव्य (श्राद्ध में प्रदत्त सामग्री) का वितरण करती है। सारा संसार जिसकी महिमा का गुणगान करता है, दया की मूर्ति है और पुरुषों को अभिलषित मनोरथों की पूर्ति करने वाली, स्वर्ग में निवास करने वाली समस्त मनुष्यों की आराध्य, हे श्रेष्ठ विमलस्वरूप स्वधा! हम आपका पूजन के लिए आवाहन करते है, आप इस यज्ञभूमि में पधारे।

अग्रजा सर्वदेवानां कव्यार्थं या प्रतिष्ठिता।

पितृणां तृप्तिदां देवी स्वधामावाहयाम्यहम् ।। ॐ पितृभ्य: स्वधायिभ्य: स्वधानम: पितामहेभ्य: स्वधायिभ्य: स्वधा नम:

प्प्रपितामहेभ्य: स्वधायिभ्य: स्वधानम: ।

अक्षन्पितरोमीमदन्त पितरोतीतृपन्त पितर: पितर: शुन्धध्वम् । ॐ भूर्भुव: स्व: स्वधायै नम:, सावित्र्या: उत्तरे स्वधां आवाहयामि स्थापयामि।

10. स्वाहा :-

हविर्भर्त्रीं देवीं दनुजकुलहर्त्रीं क्रतुभुजां

हरन्ती सन्तापं जगति विहरन्तीं भगवतीम ्।

समाराध्यां स्वाहां हुतवहसमाराधनपरां

ह्वयाम: पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि वरदे! ।।

अर्थात् देवताओं को हवि (हवनीय द्रव्य) प्रदान करने वाली दैत्यकुल का विनाश करने वाली, यज्ञभाग प्राप्त करने वालों के सन्ताप को हरने वाली तथा यज्ञ का भाग प्राप्त करने वाली, इस समस्त जगत् में विहार करने वाली, देवताओं द्वारा आराधन में तत्पर, अच्छी प्रकार आराधना करने योग्य, हे स्वाहा देवि! हम पूजन के लिए आपका आवाहन करते है, यज्ञभूमि में पधारकर हमको वर प्रदान करें ।

हविर्गृहीत्वा सततं देवेभ्यो या प्रयच्छति।

तां दिव्यरूपां वरदां स्वाहामावहयाम्यहम्।।

ॐ स्वाहा ज्ञम्मनस: स्वाहोरोरन्तरिक्षात्स्वाहाद् द्यावा

पृथिवीभ्या œ स्वाहाव्वातादारभे स्वाहा । ॐ भूर्भुव: स्व: स्वाहायै नम:, स्वधाया: पूर्वे स्वाहां आवाहयामि स्थापयामि ।

11. मातृ :-

प्रसिद्धा या लोके सुरदनुजयो: शक्तय: इमा;

जनै: सेव्या ब्राह्मी प्रभृतिनिजरूपेषु सततमा्।

समस्तास्ता मातृर्जगदुदयकर्त्रीर्मखभुवि,

ह्वयामोऽचार्थं "भो दु् रतमिह समायात सुखदा।

अर्थात् जो समस्त संसार में देवता व दानव दोनों की शक्ति के रूप में प्रसिद्ध है। अनेक जनों से सेवित है, ब्रह्मा की शक्ति है और ब्राह्मी आदि अनेक रूपों में विराजमान है, समस्त जगता् को उत्पन्न करने वाली है और सभी के लिए माता स्वरूप है, ऐसी हे मातृका देवी! आप शीघ्र यहाँ पधारे, हमें सुख दे, हम पूजन के लिए आपका आवाहन करते है।

आवाहयाम्यहं मातृ: सकला लोकपूजिता:।

सर्वकल्याणरूपिण्यो वरदा दिव्यभूषणा:।।

ऊँ आपोऽअस्मान्मातर: शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्प्व: पुनन्तु।

व्विश्व œ हिरिप्प्रम्प्रवहन्ति देवी रुदिदाभ्य: शुचिरा पूतऽएमि।

दीक्षातपसोस्तनूरसि तान्त्वा शिवा œ शग्माम्परिदधे भद्द्रम्व्वर्णम्पुष्यन्।। ऊँ भूर्भुव: स्व: मातृभ्यो नम:, स्वाहाया: पूर्वे मातृ: आवाहयामि स्थापयामि।

12. लोकमातृ :-

सदा नो भद्रार्थं वहसि बहुरूपाणि दयया,

जयन्तीत्यादीनि ह्यभिलषितपूर्तिं च कुरुषे।

सिताम्भोजाभे त्वं हरिरमणि! भो लोकजननि!,

ह्वयामोऽर्चार्थं त्वां मखभुवमुपेह्येहि वरदे!।।

अर्थात् जो सभी के कल्याण के लिए जयन्ती इत्यादि बहुत से रूपों को दयापूर्वक धारण करती है और अभिलषित मनोकामनाओं की पूर्ति करती है, श्वेत कमल के समान जिनकी आभा है, भगवान हरि के साथ रमण करने वाली, समस्त संसार की माता, आपको पूजन के लिए आवाहित करते है, यज्ञभूमि में पधारकर हमें वर प्रदान करे।

आवाहयेल्लोकमातृर्जयन्ती प्रमुखाः शुभाः।

नानाभीष्टप्रदाः शान्ताः सर्वलोकहितावहाः।।

ऊँ स्वाहाज्ञं व्वरुणः सुक्षत्रो भेषजं करत्।

अतिच्छन्दाऽइन्द्रियम्बृहद् ऋषभोग्गौर्व्वयोः दधुः।। ऊँ भूर्भुवः स्वः लोकमातृभ्यो नमः, मातृपूर्वे लोकमातृः आवाहयामि स्थापयामि।

13. धृति :-

धृतिं हृष्टेर्हेतुं भवजलधिसेतुं सुमनसां

प्रचेतुं सन्तोषं जगति विकिरन्तीं शमसुधाम।

महाकेतुं कीर्तेर्दितिज-यमकेतुं गुणवतीं

ह्वयामः पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि सुधृते!।।

अर्थात् धर्म के प्रथमलक्षण धैर्य को धारण करने वाली, इस भवसागर की सेतुस्वरूप सुन्दरमनवाले जनों को सन्तोष प्रदान करने वाली प्रसन्नता (हर्ष) का कारणरूप, जगत् में शान्तिरूप, अमृत का वितरण करने वाली, कीर्ति के लिए महान् ध्वजारूप, दैत्यों के यम की ध्वजास्वरूप, अनेक गुणों से युक्त अच्छी प्रकार से धैर्य को धारण करने वाली हे धृति देवि! हम पूजा के लिए आपका आवाहन करते है, यज्ञभूमि में पधारे।

सर्वहर्षकरीं देवीं भक्तानामभयप्रदाम्।

हर्षोत्फुल्लास्यकमलां धृतिमावाहयाम्यहम्॥

ॐ त्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्चयज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु।

स्मान्नऽऋते किञ्चनकर्म्मक्रिय ते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ॐ भूर्भुवः स्वः धृत्यै नमः, स्वहायाः उत्तरे धृतिं आवाहयामि स्थापयामि।

14. पुष्टि :-

जनानां पुष्ट्यर्थं सकलविधमन्नं क्षुधमथ्र

प्रभुत्वं पूर्णत्वं विधिहुतमखैर्या वितनुते।

शिवां पुष्टिं देवीमरुणवसनां पुत्रसुखदां

ह्वयामोऽचार्थं तां "मखभुवमुपेह्येहि जननि!॥

अर्थात् समस्त संसार की पुष्टि (शरीर को पोषण करने के लिए), सभी प्रकार के अन्न को देने वाली, भूखों को भोजन देने वाली, विधिविधानपूर्वक किये हुए यज्ञों से प्रभुता व पूर्णता प्रदान करने वाली, लालवस्त्र धारण करने वाली, पुत्रों को सुख देने वाली, समस्त संसार का कल्याण करने वाली हे पुष्टि देवि! हम आपका पूजन के लिए आवाहन करते है, आप यज्ञभूमि में हे माता! पधारे।

पोषयन्ती जगत्सर्वं स्वदेह प्रभवैर्नवैः।

शाकैः फलैर्जलैः रत्नैः पुष्टिमावाहयाम्यहम्॥

ॐ रयिश्च मे रायश्च मे पुष्टञ्च मे पुष्टिश्च मे व्विभुचमे प्रभुच मे

पूर्णञ्च मे पूर्णतरञ्चमे कुयवञ्च मे क्षितञ्च मे न्नञ्चमेक्षुच्चमे ज्ञेनकल्पन्ताम्।ॐ भूर्भुवः स्वः पुष्ट्यै नमः, धृत्याः पूर्वे पुष्टिं आवाहयामि स्थापयामि।

15. तुष्टि :-

गदां शक्तिं पद्मं वरमपि दधाना निजकरै-

रभीष्टा धीराणां श्रुतिविधिपराणां सुमनसाम्।

प्रपन्नानां पुंसामिह जगतिया कल्पलतिका,

ह्वयामस्तां तुष्टिं मखभुवमुपेह्येहि वरदे!।।

अर्थात् गदा-शक्ति-कमल और वरमुद्रा को अपने हाथों में धारण करने वाली, विधिविधान पूर्वक यज्ञ करने वाले, वेद-विधि का पालन करने वाले, सुन्दर मन से युक्त, धीर पुरुषों को अभीष्ट प्रदान करने वाली, प्रपन्न (सभी साधनों से युक्त होने पर भी दुःखी रहना) पुरुषों को कामनापूर्ति करने वाली कल्पलता के समान हे तुष्टि देवि! आप यज्ञभूमि में पधारे, हमें वर दे, हम आपका आवाहन करते है।

देवैराराधितां देवीं सदासन्तोषकारिणीम्।

प्रसादसुमुखीं देवीं तुष्टिमावाहयाम्यहम्।।

ऊँ त्वष्टातुरीपो ऽअद्भुत ऽइन्द्राग्नी पुष्टिवर्द्धना।

द्विपदाच्छन्द ऽइन्द्रियमुक्षागौर्न्नव्वयोदधुः।।ऊँ भूर्भुवः स्वः तुष्ट्यै नमः, पुष्ट्याः पूर्वे तुष्टिं आवाहयामि स्थापयामि ।

16. कुलदेवी :-

नृ-दैत्याऽऽदित्यानां विविधकुलमध्ये बहुविधं

यया दिव्यं रूपं स्वजनकुलवर्धिष्णु विधृतम्।

नुमस्तामस्माकं महितकुलदेवीमिह मुदा,

ह्वयामः पूजार्थं जननि! समुपेह्यध्वरभुवम।।

अर्थात् मनुष्य-दैत्य-देवताओं के विविध कुलों के मध्य में जिन्होंने दिव्यरूप धारण किया है, स्वजनों के कुल को बढ़ाने वाली, प्रसन्नतापूर्वक हे कुलदेवि! हम यहाँ आपको नमस्कार करते है, हे जननि! आप इस यज्ञभूमि में पधारे, हम आपका आवाहन करते है।

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम्॥

ॐ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन।

ससस्त्यश्वक: सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनी॥ ॐ भूर्भुव: स्व: कुलदैव्यै नम:, तुष्ट्या: पूर्वे कुलदेव्यां अवाहयामि स्थापयामि। मनोजूतिरिति प्रतिष्ठापनम् । ॐ भूर्भुवः स्वः सगणाधिप गौर्यादिकुलदेवतान्ताः षोडशमातरः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु।

यथोपचारैः सम्पूज्य प्रार्थयेत् :-

आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम।

निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरुध्वं सगणाधिपा:॥

मन्त्रपुष्पम् :- **तंव्वोऽअम्ब धामानिसहस्रमुतवोरुह।**

अधा शतक्क्रत्वोयमिमम्मेऽ अगदङ्कृत॥

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।

देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातर: ॥

धृति: पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मन: कुलदेवता:।

गणेशेनाऽधिका ह्येता वृद्धौ पूज्यास्तु षोड़श॥

अनया पूजया गणपत्यादि कुलदेवतान्तमातर: प्रीयन्ताम्।

अनयापूजया षोडशमातर: प्रीयन्ताम् न मम ।

5.5. श्रियादि सप्तमातृका पूजन

1. श्री: :-

हिरण्याभां देवीमरुणकमलस्थां स्मितमुखीं

वहन्तीं हस्ताब्जैरभयवरमुद्रेऽब्जयुगलम्।

विचित्रालंकारामिह जलजमालां श्रियमहो,

ह्वयाम: पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि सुखदे!।।

अर्थात् स्वर्ण के समान आभायुक्त, लालकमल के आसन पर स्थित, प्रसन्नमुख वाली, हाथ में कमलयुगल, अभय और वरमुद्रा धारण करने वाली विचित्र प्रकार के अलङ्कार (आभूषण इत्यादि) धारण किये हुए कमलपुष्पों की माला धारण करने वाली श्री देवि! हम आपका पूजन के लिए आवाहन करते है, यज्ञभूमि में पधारकर हमें सुख प्रदान करे।

सुवर्णपद्महस्तां तां विष्णोर्वक्षस्थले स्थिताम्।

त्रैलोक्यवल्लभां देवीं श्रियमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ मनस: काममाकूतिं वाच: सत्यमशीमहि ।

पशूना œ रूपमन्नस्य रसो यश: श्री: श्रयताम्मयि स्वाहा ।। ॐ भूर्भुर्व: स्व: श्रिये नम:, श्रियं आवाहयामि स्थापयामि ।

2. लक्ष्मी :-

शुचि: पद्मारूढा पृथुकटितटि पद्मनयना,

गजेन्द्रैर्या दिव्यैः कनककलशैः स्नापिततनु:।

जगद्वन्द्यां लक्ष्मीं स्तनभरनतां शुभ्रवसनां,

ह्वयामोऽर्चार्थं तां जननि! मखमेह्येहि धनदे!।।

अर्थात् पवित्र कमल पर आरूढ़, विस्तृत कटिप्रदेश से युक्त, कमल के समान नयनवाली, गजेन्द्रों द्वारा दिव्य स्वर्णकलशों के जल से स्नान करते हुए शरीर से युक्त समस्त संसार की वन्दनीय, शुभ्रवस्त्र धारण किये हुए, स्तनों के भार से नत हे लक्ष्मीमाता! हम आपको अर्चन के लिए आवाहन करते है, इस यज्ञ में पधारो और हमें धन दो।

शुभलक्षणसम्पन्नां क्षीरसागरसम्भवाम्।

चन्द्रस्य भगिनीं सौम्यां लक्ष्मीमावाहयाम्यहम्।।

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि

नौव्व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीं आवाहयामि स्थापयामि।

3. धृति :-

ऋते यत्प्रज्ञानं भुवि भवति कार्यं किमपि नो,

शिवं सङ्कल्पं या मनसि मनुजानां वितनुते।

प्रमोदोत्फुल्लास्यां कमलनयनां तां धृतिमिह,

ह्वयामः पूजार्थं मखभुवमुपेह्येहि वरदे!।।

अर्थात् जिनका ज्ञान हो जाने पर सत्य का साक्षात्कार हो जाता है और कोई भी कार्य सिद्ध हुए बिना नहीं रहता, जो समस्त मनुष्यों के कल्याण के लिए मन में सङ्कल्प लिए रहती है। प्रसन्नता के कारण जिनका मुखकमल

सदा विकसित रहता है, ऐसी कमल के समान धृति देवि का पूजन के लिए आवाहन करते है, हे देवि! यज्ञभूमि में पधारकर हमें वरदान दे।

संसारधारणपरां धैर्यलक्षणसंयुताम्।

सर्वसिद्धिकरीं देवीं धृतिमावाहयाम्यहम्।।

ऊँ सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्मज्ज्योतिरमृताऽअभूम।

दिवम्पृथिव्याऽअद्ध्यारुहामाविदामदेवान्त्स्वज्र्योतिः।ऊँ भूर्भुवः स्वः धृत्यै नमः, धृतिं आवाहयामि स्थापयामि।

4. मेधा :-

सुमेधां नो नित्यं दधतु वरुणाद्याः सुमनसः

प्रसन्ना सा भूयाद् वरजलजपुस्ताभयकरा।

मरालाध्यारूढां मखभुवि मुदा पीतवसनां

ह्वयामस्तां मेधां जननि! समुपेह्येहि मतिदे!।।

अर्थात् जिस मेधा देवि का वरुण आदि देवता अच्छे मन से नित्य ध्यान करते रहते है, जो चारों हाथों में क्रमशः वरमुद्रा, कमल, पुस्तक और अभयमुद्रा धारण करती है, जो कमल के मध्य में विराजमान है, पीले वस्त्र धारण करती है, ऐसी मेधामाता का हम यज्ञभूमि में आवाहन करते है। हे मेधा! आप यहाँ आकर हमें बुद्धि प्रदान करे।

सदसत्कार्यकरणक्षमां बुद्धिविशालिनीम्।

मम कार्ये शुभकरीं मेधामावाहयाम्यहम्।।

ऊँ याम्मेधान्देवगणाः पितरश्चोपासते।

तया मामद्यमेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।ऊँ भूर्भुव: स्व: मेधायै नम:, मेधां आवाहयामि स्थापयामि।

5. स्वाहा :-

प्रगल्भत्वं पुंभ्यो वितरति सदाऽऽदाय करयो;

सरोजं सत्पात्रं विबुधरसनाग्रे विहरति।

वलक्षक्षौमाद्या प्रणवजननी याऽतिचपला,

ह्वयामस्तां प्रज्ञां मखभुवमुपेह्येहि वरदे!।।

अर्थात् जो देवि दोनों हाथों से सभी पुरुषों को प्रगल्भता प्रदान करती है तथा देवताओं के जिह्वाग्र पर सदा विहार करती है। कमलरूपी पात्र को लिए रहती है, प्रणव (ऊँकार) की जननी है, जो शुभ्र रेशमी वस्त्र से ढकी रहती है तथा जो अत्यन्त चञ्चल है, ऐसी प्रज्ञा का हम आवाहन करते है, वो हमे यज्ञभूमि में पधारकर वर प्रदान करे।

अग्निमध्ये हविर्गृहीत्वा देवेभ्यो या प्रयच्छति ।

वङ्घिप्रियां तु सा देवीं स्वाहामावाहयाम्यहम्।।

ऊँ प्राणाय स्वाहा पानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषे स्वाहाश्रोत्राय

स्वाहा व्वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ।ऊँ भूर्भुव: स्व: स्वाहायै नम:, स्वाहां आवाहयामि स्थापयामि।

6. प्रज्ञा :-

शुभै रत्नैर्युक्तामरुणपृथुनेत्रं त्रिभुवने,

समेषां पुष्ट्यर्थं धृतविबुधदेहां शशिमुखीम्।

जगद्वन्द्यां देवीमरुणवसनां विश्वजननीं,

ह्वयामो भो पुष्टे! मखभुवमुपेह्येहि बलदे!।।

अर्थात् शुभरत्नों से युक्त, लाल बड़े-बड़े नेत्रों से युक्त, तीनों भुवनों में सभी को पुष्टि देने के लिए शरीर धारण करने वाली चन्द्रमुखी, समस्त जगत् की वन्दनीय, समस्त विश्व की जननी, लालवस्त्र धारण करने वाली हे पुष्टि देवि! यज्ञभूमि में पधारकर हमें बल प्रदान करो, हम आपका आवाहन करते हैं।

आवाहयाम्यहं देवीं प्रज्ञां वाग्विभवप्रदाम्।

विश्वाधारां जगद्वन्द्यां महाघौघविनाशिनीम्।।

ऊँ त्प्रज्ञानमुतचेतोधृतिश्चयज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु।

स्मान्न ऽ ऋते किञ्चन कर्म्मक्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।। ऊँ भूर्भुवः स्वः प्रज्ञायै नमः, प्रज्ञां आवाहयामि स्थापयामि।

7. सरस्वती :-

सुरैर्वन्द्यै! देवि! दु रहिणतनये! शुभ्रवसने!

क्षमाशीले! लीलाललितगतिहंसासनगते!।

शशाङ्कास्ये! वागीश्वरि! सुमनसां मोदजननि!

ह्वयामस्त्वां यज्ञे भगवति! समायाहि शुभदे!।।

अर्थात् समस्त देवों की वन्दनीया, हे ब्रह्मा की पुत्री, शुभ्र (श्वेत) वस्त्र धारण करने वाली, क्षमाशील, लीलामय ललितगति से चलने वाली, हंस के आसन पर विराजमान, चन्द्रमा के समान मुखवाली, वाणी की अधिष्ठात्री, सुन्दर मन वाले मनुष्यों को प्रसन्नता देने वाली हे भगवति सरस्वति! यहाँ यज्ञ में पधारो, हमे शुभफल दो, हम तुम्हारा आवाहन करते है।

प्रणवस्यैव जननीं रसनाग्रस्थितां सदा।

प्रगल्भदात्रीं चपलां वाणीमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ पावकान: सरस्वती व्वाजेभिर्व्वाजिनीवती। ज्ञं व्वष्टुधियावसु:।। ॐ भूर्भुव: स्व: सरस्वत्यै नम:, सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि।

तत्पश्चात् मनोजूति... मन्त्र से अञ्जलि करते हुए पत्र-पुष्प देवी को अर्पित करे ।

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्ज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञœ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामो 3 म्प्रतिष्ठ ।।

तत्पश्चात् पृथक्-पृथक् मन्त्रों अथवा देवीसूक्त अथवाश्रीसूक्त का पाठ करते हुए मातृकाओं की षोड़शोपचार पूजन करे।

ॐ हिरण्यवर्णामिति पञ्चदशर्चस्य सूक्तस्य आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुताः ऋषयः श्रीर्देवता आद्यास्तिस्रोऽनुष्टुभः चतुर्थी बृहती पंचमीषष्ठ्यौ त्रिष्टुभौ ततोऽअष्टावनुष्टभः अन्त्या प्रस्तारपङ्क्तिः श्रीर्देवताप्रीत्यर्थे जपे विनयोगः ।

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।

चन्द्रां हिरणमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ।।1।।

भावार्थ :- हे अग्निदेव! आप सुवर्ण समान कान्तिमय हरिद्वर्ण की कनक-रजत पुष्पों के हार को धारण करने वाली चन्द्र सदृश दीप्तिमान् और अशेषजनों को चन्द्रमा के समान मुदित करने वाली स्वर्णमयी लक्ष्मी को मेरे लिए अभीष्ट सिद्धि हेतु प्राप्त करायें।

ॐ तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।

यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्।2।।

भावार्थ :- हे अग्निदेव! आप चंचलता विरहित अर्थात् अन्यत्र गमन न करने वाली लक्ष्मी प्राप्त करायें जिनके आगमन से मैं स्वर्ण, गौ, अश्व और पुत्र-मित्रादि रूप में अनेक मनुष्यों को प्राप्त करूं ।

ॐ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्।

श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्।3।।

भावार्थ :- जिस सेना स्वरूपा लक्ष्मी जी के आगे अश्व चल रहे हं, जिसका मध्यभाग स्यन्दनों से परिपूर्ण है, हाथियों के बृहद नाद से जो प्रबोधित होती है, उस राजलक्ष्मी स्वरूपा श्री लक्ष्मी को मैं अपने लिए आवाहन करता हूँ, वह देदीप्यमान श्री लक्ष्मी मुझे प्राप्त हो ।

ॐ कां सोस्मितां हरण्यप्राकारामाद्र्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।

पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोप ह्वये श्रियम् ।4।

भावार्थ :- वाणी और मन से अनिर्वचनीय ब्रह्मस्वरूप धारिणी, मन्दहास्य से युक्त स्वर्ण आभा के समान, आद्र्र चित्त वाली, ज्योतिस्वरूपा, पूर्णकामा, भक्तों की अभिलाषा पूर्ण करने वाली कमल पर विराजमान, सूर्य के समान प्रतीत होती हुई उस श्रीलक्ष्मी को मैं अपने समीप आवाहित करता हूँ।

ॐ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।

तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्ये ऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।5।।

भावार्थ :- चन्द्र के समान आह्लादित करने वाली दिव्य आभा से युक्त संसार में उज्ज्वलकीर्ति से प्रकाशित, इन्द्रादि देवताओं से सेवित पद्म स्वरूपा, ईकार पदवाच्य, लक्ष्मी की शरण मैं ग्रहण करता हूँ। मेरी अलक्ष्मी नष्ट हो जाये, मैं लक्ष्मी का आश्रय ग्रहण करता हूँ।

ॐ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः।

तस्य फलानि तपसा नुदन्तु या अन्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मीः।।6।।

भावार्थ :- हे सूर्य के समान कान्तिमान देवी आपके नियमादि तप से वनस्पति और हाथ से बिल्व वृक्ष उत्पन्न हुआ। उस बिल्व वृक्ष के फल और आपकी कृपा या तपस्या से मेरे बाहर और भीतर की अलक्ष्मी दूर हो ।

ॐ उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।

प्रादु र्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्ध ददातु मे।।7।।

भावार्थ :- हे श्री लक्ष्मी! मुझे कीर्तिमान दक्ष प्रजापति की कन्या और कोषाध्यक्ष मणिभद्र या चिन्तामणि के साथ महादेव के मित्र कुबेर प्राप्त हो। मैं इस देश में उत्पन्न हुआ हूँ अतः वे मेरे लिए यश और समग्र ऐश्वर्य साधन ऋद्धि को प्रदान करे।

ॐ क्षु त्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्

अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्।।8।।

भावार्थ :- हे माँ लक्ष्मी! भूख और प्यास से कृशित शरीर वाली ज्येष्ठा अलक्ष्मी को मैं नाश चाहता हूँ, आप मेरे घर से सभी अभूति और असमृद्धि को दूर करें।

ॐ गन्धद्वारां दु राधर्षां नित्यपु ष्टां करीषिणीम्।

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्।।9।।

भावार्थ :- समस्त पृथ्वी रूपा किसी अन्य से घर्षित न होन वाली सर्वदा सस्यादि से समृद्ध गाय, अश्वादि रूप अनेक पशुओं से पूर्ण समस्त प्राणियों की स्वामिनी विश्वाधारित उस लक्ष्मी को मैं यहाँ अपने समीप आने के लिए आवाहन करता हूँ।

ॐ मनसः काममाकूqत वाचः सत्यमशीमहि।

पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।।10।।

भावार्थ :- हे महालक्ष्मी! आपकी कृपा से अशेष मनोरथों की प्राप्ति, सन्तोष और वाणी की सत्यता मुझे प्राप्त हो। पशुओं के रूप में दुग्ध -दधि आदि अन्नों के रूप में चतु र्विध (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चौष्य) रूप पदार्थों को मैं प्राप्त करूं। लक्ष्मी और कीर्ति मेरे में आश्रय ग्रहण करे जिससे मैं श्रीयुत और कीर्तिवान बनूं।

ॐ कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम।

श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्।।11।।

भावार्थ :- हे लक्ष्मीपुत्र महर्षि कर्दम! आप मुझ पर अनुग्रह कर मेरे यहाँ निवास करें क्योंकि माता लक्ष्मी आपसे ही पुत्रवती है। आप मेरे कुल में पद्ममाला धारण करने वाली माता लक्ष्मी को प्रतिष्ठापित करे।

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।

नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले।।12।।

भावार्थ :- जलाभिमानी देवता स्नेहयुक्त पदार्थों को उत्पन्न करे। हे श्रीपुत्र! चिक्लीत आप मेरे घर में निवास करें और दिव्य गुणों वाली माता लक्ष्मी को भी मेरे वंश में वास करायें।

आद्र्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम्।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह।।13।।

भावार्थ :- हे अग्निदेव! आद्र्रगन्धों वाली भक्तों के लिए दयाद्र्र चित्त वाली दिग्गजों के शुण्डाग्र से अभिषिक्त होती हुई पुष्टि रूपी सर्वत्र स्थित पीतवर्णा कमलहार को धारण करने वाली चन्द्र स्वरूपा अमृतवर्षण या कान्ति से आह्लादित करने वाली स्वर्णरूपा लक्ष्मी को मेरे गृह में निवास करे।

आद्र्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।

सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह।।14।।

भावार्थ :- हे अग्निदेव! आद्र्रगन्ध से युक्त, दयाद्र्र चित्त वाली, हाथों में वेत्र धारण करने वाली, दुष्टों के लिए दण्ड स्वरूपा, सुन्दर वर्ण वाली स्वर्णमाला धारण करने वाली, सूर्य स्वरूपा, स्वर्णरूपा लक्ष्मी देवी को आप मेरे घर में निवास करायें।

तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम्।15।।

भावार्थ :- हे वह्निदेव! आप मेरे घर में उस लक्ष्मी को निवास करायें जिससे मैं बहुत स्वर्ण, गौ, महिष आदि पशुधन, अनुचर, तुरगादि वाहन और पुत्र-मित्र व कलत्रादि पुरुषजनों को प्राप्त करूं।

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।

सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्।।16।।

भावार्थ :- जो भी मनुष्य लक्ष्मी की इच्छा करता है वह पवित्र और सावधान चित्त होकर श्रीसूक्त के पन्द्रह मन्त्रों से प्रतिदिन गाय के घी से हवन करे और श्रीसूक्त का निरन्तर जाप व पाठ करें।

षोड़शोपचार पूजन के पश्चात् देवी को पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।

गौर्याद्याः सुकलाः सदाशिवनुतामाङ्गल्यमूलाः शिवा;देवानामपि मातरः किमु मनुष्याणां सदा सौख्यदाः।

श्रीराद्या घृतमातरौ गणपतिं क्रौड़ेर्वहन्योभृशम्,तासां पादनवाम्बुजन्य सुचिरंपुष्पाञ्जलीं राजताम्।।1।।

मुखे ते ताम्बूलं नयनयुगले कज्जलकला,ललाटे काश्मीरं विलसति गले मौक्तिकलता।

स्फुरत्काञ्ची शाटी पृथुकटितटी हाटकमयी,भजामि त्वां गौरीं नगपति किशोरीमविरतम्।।2।।

प्रार्थना -

जनन्यो गौर्याद्या गणपतियुता श्रीप्रभृतिभि,र्घृताम्बाभिर्युक्ताः प्रणतजनसंरक्षणचणाः।

सपर्यां स्वीकर्तुं मखभुविप्रसीदन्तु कृपया,निषिदन्तु प्रीत्या जगति फलदा सन्तु वरदाः।

आयुष्यमन्त्र (देवी से दीर्घायु की प्रार्थना करे)-

ऊँ आयुष्ष्यं व्वर्च्चस्य œ रायस्प्पोषमौद्भिदम् ।इद œ हिरण्यं व्वर्च्चस्वज्जैत्राया विशतादुमाम्।

नतद्द्रक्षा œ सिनपिशाचास्तरन्ति देवानामोः प्रथम œ ह्येतत् ।

बिभिर्तिदाक्षायण œ हिरण्ण्य œ सदेवेषुकृणुते दीर्घमायुः समनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः।

दाबद्ध्रन्दाक्षायणा हिरण्ण्यœ शतानीकायसुमनस्यमानाः।।

तन्मऽ आबद्‌ध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम्॥

अनेन अर्चनेन सगणेशमातर: प्रीयन्ताम् न मम। (जल का त्याग करें)

5.7. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को पूजन क्रम के अन्तर्गत पूजित षोड़श मातृकाओं के अन्तर्गत गौरी के साथ में गणपति, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, मातृ, लोकमातृ, धृति, पुष्टि, तुष्टि व आत्मकुलदेवता अर्थात् कुलदेवी तथा सप्त वसोर्द्धाराओं के अन्तर्गत Ÿश्री, लक्ष्मी, धृति, मेधा, स्वाहा, प्रज्ञा व सरस्वती के पूजन की विधि का ज्ञान करते हुए इनसे सम्बन्धित मन्त्रों का ज्ञान तथा मातृशक्ति में विश्वास एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नारी शक्ति का सम्मान करने की प्रेरणा मिलेगी। इस इकाई में मातृकास्तुति व श्रीसूक्त का पाठाभ्यास भी भावार्थ सहित छात्रों के ज्ञानार्जन हेतु दिया गया है।

5.8. शब्दावली

1. सर्जकता = सृजन करने की शक्ति
2. संहाकरता = नष्ट करने की शक्ति
3. व्यापकता = सभी में विद्यमान रहने की शक्ति
4. गौरी = हिमाचल की पुत्री/महोदव की शक्ति अथवा पत्नी
5. गणपति = शिवगणों में प्रथम
6. शची = इन्द्र की आद्याशक्ति
7. पद्मा = हाथ में कमल पुष्प धारण करने वाली देवी
8. मेधा = जड़बुद्धि को समाप्त करने वाली (बुद्धि) देवी
9. सावित्री = सूर्य की शक्ति

10. विजया	=	विजय प्रदान करने वाली देवी
11. जया	=	जय प्रदान करने वाली देवी
12. देवसेना	=	स्वामी कार्तिकेय के साथ रमण करने वाली देवी
13. स्वधा	=	पितरों के लिए कव्य प्रदान करने वाली देवी
14. स्वाहा	=	देवताओं को हवनीय द्रव्य से सन्तुष्ट करने वाली देवी
15. मातर:	=	माता के रूप आद्यशक्ति देवी
16. लोकमातर	:=	जगत कल्याण करने वाली माता
17. धृति	=	धैर्य को धारण करने वाली देवी
18. पुष्टि	=	पोषण करने वाली देवी
19. तुष्टि	=	कामना पूर्ण करने वाली देवी
20. षोड़शोपचार	=	16 द्रव्यों से पूजन

5.9. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : षोड़श मातृकाओं के नाम लिखिये ?

उत्तर : षोड़श मातृकाओं के नाम - गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, मातृ, लोकमातृ, धृति, पुष्टि, तुष्टि व आत्मकुलदेवता अर्थात् कुलदेवी।

प्रश्न - 2 : सप्त वसोर्द्धारा के नाम लिखिये ?

उत्तर : सप्त वसोर्द्धारा के नाम - श्री, लक्ष्मी, धृति, मेधा, स्वाहा, प्रज्ञा व सरस्वती।

प्रश्न - 3 : श्रीसूक्त में कितने श्लोक है?

उत्तर : श्रीसूक्त में मूल पन्द्रह (15) है तथा अन्तिम सोलहवां (16) श्लोक महात्म्य है।

प्रश्न - 4 : षोड़श मातृकाओं के मण्ड़ल का निर्माण किस दिशा में किया जाता है ?

उत्तर : षोड़श मातृकाओं के मण्ड़ल का निर्माण पूर्व व अग्निकोण के मध्य किया जाता है।

प्रश्न - 5 : शक्ति शब्द से आप क्या समझते हैं ?

उत्तर : शक्ति शब्द शक् धातु से क्तिन् प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है, जिसका तात्पर्य उस साधन से है जिससे कोई भी व्यक्ति कुछ भी करने में समर्थ हो पाता है।

5.10. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : षोड़श मातृका का सचित्र वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 2 : सप्त वसोर्द्धारा का सचित्र वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 3 : श्रीसूक्त से आप क्या समझते कीजिये ? विवेचना कीजिये।

प्रश्न - 4 : गणपति, गौरी एवं कुलदेवी के मन्त्रों का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 5 : आयुष्यमन्त्रों को उल्लेख कीजिये ?

5.11. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आवाहनप्रदीप: सम्पादक - रवि शर्मा प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर।
2. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
3. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

4. कर्मठगुरु:लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्यप्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

5. मन्त्रमहोदधिसम्पादक - श्रीशुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन वाराणसी।

इकाई — 6

नान्दी श्राद्ध

इकाई की रूपरेखा

6.1. प्रस्तावना

6.2. उद्देश्य

6.3. नान्दीश्राद्ध अथवा वृद्धिश्राद्ध (आभ्युदयिक कर्म)

6.4. सारांश

6.5. शब्दावलि

6.6. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

6.7. लघुत्तरीय प्रश्न

6.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

6.1. प्रस्तावना

पूजनकर्म में नान्दीश्राद्ध का विशेष महत्त्व है, इस पूजन के हमारा अभ्युदय होता है। माङ्गलिक कार्यों में यदि आशौचादि की सम्भावना हो तो नान्दीश्राद्ध का पूजन कर लेना चाहिए। सभी माङ्गलिक कार्यों से पूर्व नान्दीश्राद्ध विशेष पूजन है तथापि आशौचादि के किञ्चित् परिहार हेतु तो यह परम आवश्यक है।

यज्ञ, विवाह, प्रतिष्ठा, उपनयन, समावर्तन, पुत्रजन्म, गृहप्रवेश, नामकरण, सीमन्तोन्नयन, सन्तान का मुख देखने से पूर्व और वृषोत्सर्ग में नान्दीश्राद्ध अवश्य करना चाहिए। यज्ञ प्रारम्भ से 21 दिन पूर्व, विवाह से 10 दिन पूर्व, चूड़ाकर्म और उपनयन से 18 दिन पूर्व नान्दीश्राद्ध करना चाहिए।

6.2. उद्देश्य

1. इस इकाई के माध्यम से हमें पितरों के पूजन की विशेष प्रक्रिया का ज्ञान होगा।

2. नान्दीश्राद्ध से माता, पिता, दादा-दादी व परिवार के अन्य पितरों की तृप्ति होती है।

3. नान्दीश्राद्ध से कुल की वृद्धि हेतु पितरों से प्रार्थना की जाती है।

4. नान्दीश्राद्ध से परिवार का अभ्युदय होता है तथा हमारे अनुजों में भी पितरों का सम्मानभाव उत्पन्न होता है।

6.3. नान्दीश्राद्ध अथवा वृद्धिश्राद्ध (आभ्युदयिक कर्म)

प्रात: काल ब्रह्मवेला के पूर्व शयन से उठकर शौचादि से निवृत्त होकर किसी नदी, सरोवर या कुएँ पर ही अपनी सुविधा के अनुसार स्नान करके शुद्ध उज्ज्वल वस्त्र धारण करके पूर्वाभिमुख हो कुशासन पर बैठकर श्राद्ध करना चाहिए। स्वर्ण, चाँदी, तांबा, काँसे का पात्र पितरों के श्राद्ध हेतु श्रेष्ठ बताया गया है। मिट्टी तथा लोहे का पात्र सर्वथा वर्जित है।तत्पश्चात् तीन बार आचमन, पवित्रीधारण (दाहिने हाथ की अनामिका में दो कुशा की पवित्री धारण करे तथा बायें हाथ की अनामिका में तीन कुशा की पवित्री धारण करके), प्राणायाम आदि करे :-

ऊँ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

य: स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तर: शुचि:।।

ऊँ पुनन्तु मा देवजना: पुनन्तु मनसाधिय:।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेद: पुनीहिमा।।

ऊँ पुण्डरीकाक्ष: पुनात्तु (तीन बार उच्चारण करे)

बायें हाथ में जल लेकर तीन बार आचमन करे :-

ऊँ केशवाय नम:। ऊँ नारायणाय नम:। ऊँ माधवाय नम:। पुन: गोविन्दाय नम: बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास

अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे-धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

शुद्ध आसन पर बैठकर कर्मकर्ता आसन पूजन, शिखाबन्धन, वरुण पूजन, तिलकधारण आदि करके नान्दीश्राद्ध हेतु सम्पूर्ण सामग्री को संग्रहित करके सङ्कल्प करे - ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयो: पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन्‌ं देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन्‌ वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्र: (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मन: श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशे: नामराशे: वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्ठमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तै: सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं वसुरूद्रादित्यस्वरूपाणां पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां तथा अमुकगोत्राणाममुकामु कशर्म्मणांसपत्नीकानां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानाम् श्रीगणेशाम्बिकयो: साङ्कल्पिक नान्दीश्राद्धमहंकरिष्ये।

श्राद्ध काले गयां ध्यात्वा, ध्यात्वा देवं गदाधरम ।

मनसा च पितृन् ध्यात्वा नान्दीश्राद्ध समारभे ।।

आवाहन :- ऊँ देवताभ्य: पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।

नम: स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमोनम:।।

ऊँ पितृब्भ्य: स्वधायिब्भ्य: स्वधानम: पितामहेब्भ्य: स्वधायिब्भ्य: स्वधानम: प्प्रपितामहेब्भ्य: स्वधायिब्भ्य: स्वधानम:। अक्षन्निपतरोमीमदन्तपितरोतीतृपन्त पितर: पितर: शुन्धध्वम्। ऊँ भूर्भुव: स्व: दिव्यपितृभ्यो नम:।

पाद्यम् (प्रथम पाद्य पात्र) कर्मकर्ता रजत, ताम्र, कांस्य, मृण्मय अथवा काष्ठपात्र में दधि, कुंकुम, यव, अक्षत, जल डालकर दूर्वा अथवा कुशा से उक्त पदार्थों को मिलायें तथा वृद्धि शब्द पर पितृ आसन पर अथवा अन्य पात्र में उक्त मिश्रित पदार्थों को कुशा की पवित्री द्वारा अनामिका व अङ्गुष्ठ से हिलाकर आलोड़न करते हुए प्रोक्षण करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा;ॐ भूर्भुव: स्व: इदं व: पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धि:

वृद्धि शब्द का उच्चारण करते हुए विश्वेदेवा के लिए पूर्व दिशा की ओर उत्तराग्र कुशा आसन पर व द्वितीय पात्र में पैर धोने के लिए पाद्य जल युक्त पदार्थ को कुशा की पवित्री से छींटा देवे अथवा छोड़े।

द्वितीय पात्र स्थापनम् :-

पादोदक अथवा पाद्य पात्र को एक तरफ रखकर द्वितीय पात्र के स्थापन हेतु दूर्वाङ्कुर, दर्भा या पलाश आदि का पत्र आसन के लिए कुश पर रखकर द्वितीय पात्र का स्थापन करे, उसमें जल-यवाक्षत-दधि-चन्दन-पुष्प-दूर्वाङ्कुर अथवा दर्भा की पवित्री डाले।

जल :- **ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्यऽआपोभवन्तु पीतये। शँयोरभिस्रवन्तुन:।।**

चन्दन **:- ऊँ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:। गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत:।**

पुष्प :- **ऊँ ओषधि: प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्णव:।।**

दधि :- **ऊँ दधिक्राव्णो ऽ अकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिन:। सुरभिनो मुखाकरत्त्प्रणऽआयू œ षितारिषत् ।।**

यव **:- ऊँ यवोऽसियवयास्मद्वेशोयवयारातीः।।**

कुश :- **ऊँ पवित्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्वः प्रसवः। उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।।**

हाथ में अक्षत लेकर पूर्वादि दिशाओं में उच्चारण करते हुए अक्षत छोड़े :-

ऊँ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

इस मन्त्र को पढ़ता हुआ श्राद्ध के नाशक राक्षसों की निवृत्ति के लिए अपने चारों ओर डालते हुए प्रार्थना करे कि इन सभी दिशाओं में आवाहित देव हमारी रक्षा करे :-

पूर्वे रक्षतु गोविन्द - इससे पूर्व को प्रणाम करें।

आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः - इससे आग्नेय को प्रणाम करें।

दक्षिणे रक्षतु वाराहो - इससे दक्षिण को प्रणाम करें।

नारसिंहस्तु नैऋर्ते- इससे नैऋत्य को प्रणाम करें।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद - इससे पश्चिम को प्रणाम करें।

वायव्यां मधुसूदनः - इससे वायव्य को प्रणाम करें।

उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् - इससे उत्तर को प्रणाम करें।

ऐशान्ये तु गदाधरः - इससे ईशान को प्रणाम करें।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद - इससे आकाश को प्रणाम करें।

अधस्ताद् त्रिविक्रमः - इस मन्त्र को बोल अपने आगे की भूमि पर जहां श्राद्ध करना है छोड़ दें।

एवं दश दिशो रक्षेदा् वासुदेवो जनार्दन:।।- इस मन्त्र से सभी दिशाओं में प्रणाम करे।

द्रव्य पवित्रीकरण :- आभ्युदयिक श्राद्ध हेतु एकत्रित किये गये पदार्थों, उपहारादि का पात्रस्थ जलादि द्रव्यों से पवित्री द्वारा पवित्र करना चाहिए।

सङ्कल्पविधिना आभ्युदयिक श्राद्धोपहाराणां पवित्रास्तु -

देश: (उच्चारण करते हुए भूमि पर छींटा देवे)

काल: (उच्चारण करते हुए आकाश पर छींटा देवे)

पाकपात्र: (उच्चारण करते हुए पाक-पात्र पर छींटा देवे)

उपहार: (उच्चारण करते हुए उपहारादि पर छींटा देवे)

द्रव्य (उच्चारण करते हुए द्रव्य अथवा धन पर छींटा देवे)

श्रद्धा (उच्चारण करते हुए स्वयं पर छींटा देवे)

सम्पदा (उच्चारण करते हुए सम्पत्ति आदि का ध्यान करते हुए छींटा देवे) अस्तु।।

पुन: पात्रस्थ द्रव्यों से आसन आदि पदार्थों अथवा अन्य पात्र पर छींटा देवे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐभूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए कुशा का आसन समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व: अत्र आप: पान्तु वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए जल समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:इमे वाससि सु वाससि। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए वस्त्र समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व: इमानि यज्ञोपवीतानि सु यज्ञोपवीतानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐभूर्भुव: स्व: यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व: अयं वो गन्ध: सुगन्ध: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए गन्ध/चन्दन समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:इमे अक्षता: - सु अक्षता: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए अक्षत समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव:स्व: इमानि पुष्पाणि - सु पुष्पाणि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए पुष्प समर्पित करे ।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:अयं वो सुगन्धित इत्रं- सु इत्रं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए इत्र समर्पित करे ।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:स्व: अयं वो धूप: - सु धूप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए धूप समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:अयं वो सुगन्धित दीप: - सु दीप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए दीप समर्पित करे ।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:इदं नैवेद्यं - सु नैवेद्यं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए नैवेद्य समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञका: विश्वेदेवा: नान्दीमुखा: ॐ भूर्भुव: स्व:इदं आचमनीयम् - सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए आचमन हेतु जल समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वःइमानि ऋतुफलानि - सु ऋतुफलानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए ऋतुफल समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं पुन: आचमनीयम् सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए पुन: जल समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वःइदं ताम्बूलं - सु ताम्बूलं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए ताम्बूल समर्पित करे।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वःइदं दक्षिणां - सु दक्षिणां (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे सत्यवसु विश्वेदेवा के लिए दक्षिणा समर्पित करे ।

ॐ मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः

ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः

वृद्धि शब्द का उच्चारण करते हुए मातृपितामह और प्रपितामह के लिए पूर्व दिशा की ओर उत्तराग्र कुशा आसन पर व द्वितीय पात्र में पैर धोने के लिए पाद्य जल युक्त पदार्थ को कुशा की पवित्री से छींटा देवे अथवा छोड़े ।

द्वितीय पात्र स्थापनम् :-

पादोदक अथवा पाद्य पात्र को एक तरफ रखकर द्वितीय पात्र के स्थापन हेतु दूर्वाङ्कुर, दर्भा या पलाश आदि का पत्र आसन के लिए कुश पर रखकर द्वितीय पात्र का स्थापन करे, उसमें जल-यवाक्षत-दधि-चन्दन-पुष्प-दूर्वाङ्कुर अथवा दर्भा की पवित्री डाले।

जल :- ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शंय्योरभिस्रवन्तु न:।।

चन्दन :- ऊँ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:। गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत:।

पुष्प :- ऊँ ओषधि: प्रतिमोददध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्णव:।।

दधि :- ऊँ दधिक्राव्णो ऽ अकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिन:। सुरभिनो मुखाकरत्प्रणऽआयू œ षितारिषत्।।

यव :- ऊँ यवोऽसियवयास्मद्वेशोयवयाराती:।।

कुश :- ऊँ पवित्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्व: प्रसव:। उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभि: तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्काम: पुनेतच्छकेयम ्।।

हाथ में अक्षत लेकर पूर्वादि दिशाओं में उच्चारण करते हुए अक्षत छोड़े :-

ऊँ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा व्विश्ववेदा:।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमि: स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ऊँ प्राच्यै स्वाहा - पूर्व

ऊँ अवाच्यै स्वाहा - दक्षिण

ऊँ प्रतीच्यै स्वाहा - पश्चिम

ऊँ उदीच्यै स्वाहा - उत्तर

द्रव्य पवित्रीकरण :- आभ्युदयिक श्राद्ध हेतु एकत्रित किये गये पदार्थों, उपहारादि का पात्रस्थ जलादि द्रव्यों से पवित्री द्वारा पवित्र करना चाहिए।

सङ्कल्पविधिना आभ्युदयिक श्राद्धोपहाराणां पवित्रास्तु -

देश: (उच्चारण करते हुए भूमि पर छींटा देवे)

काल: (उच्चारण करते हुए आकाश पर छींटा देवे)

पाकपात्र: (उच्चारण करते हुए पाक-पात्र पर छींटा देवे)

उपहार: (उच्चारण करते हुए उपहारादि पर छींटा देवे)

द्रव्य (उच्चारण करते हुए द्रव्य अथवा धन पर छींटा देवे)

श्रद्धा (उच्चारण करते हुए स्वयं पर छींटा देवे)

सम्पदा (उच्चारण करते हुए सम्पत्ति आदि का ध्यान करते हुए छींटा देवे) अस्तु।।

पुन: पात्रस्थ द्रव्यों से आसन आदि पदार्थों अथवा अन्य पात्र पर छींटा देवे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: स्व: इमे आसने वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए कुशा का आसन समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: स्व: अत्र आप: पान्तु वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए जल समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: स्व: इमे वाससि सु वाससि। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए वस्त्र समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: स्व: इमानि यज्ञोपवीतानि सु यज्ञोपवीतानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: स्व: अयं वो गन्ध: सुगन्ध: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए गन्ध/चन्दन समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इमे अक्षता: - सु अक्षता: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए अक्षत समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इमानि पुष्पाणि - सु पुष्पाणि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए पुष्प समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: अयं वो सुगन्धित इत्रं- सु इत्रं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए इत्र समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: अयं वो धूप: - सु धूप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए धूप समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: अयं वो सुगन्धित दीप: - सु दीप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए दीप समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इदं नैवेद्यं - सु नैवेद्यं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए नैवेद्य समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: आचमनीयम् - सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए आचमन हेतु जल समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इमानि ऋतुफलानि - सु ऋतुफलानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए ऋतुफल समर्पित करे।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इदं पुन: आचमनीयम् सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए पुन: जल समर्पित करे ।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इदं ताम्बूलं - सु ताम्बूलं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए ताम्बूल समर्पित करे ।

ऊँ अमुकगोत्रा: मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ऊँ भुर्भव: इदं दक्षिणां - सु दक्षिणां (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए दक्षिणा समर्पित करे ।

ॐ मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः

ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः

वृद्धि शब्द का उच्चारण करते हुए पितृपितामह और प्रपितामहा के लिए पूर्व दिशा की ओर उत्तराग्र कुशा आसन पर व द्वितीय पात्र में पैर धोने के लिए पाद्य जल युक्त पदार्थ को कुशा की पवित्री से छींटा देवे अथवा छोड़े।

द्वितीय पात्र स्थापनम् :-

पादोदक अथवा पाद्य पात्र को एक तरफ रखकर द्वितीय पात्र के स्थापन हेतु दूर्वाङ्कुर, दर्भा या पलाश आदि का पत्र आसन के लिए कुश पर रखकर द्वितीय पात्र का स्थापन करे, उसमें जल-यवाक्षत-दधि-चन्दन-पुष्प-दूर्वाङ्कुर अथवा दर्भा की पवित्री डाले।

जल :- ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्यऽ आपोभवन्तु पीतये। शँय्योरभिस्रवन्तु न:।।

चन्दन :- ऊँ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:। गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत:।

पुष्प :- ऊँ ओषधि: प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्णव:।।

दधि :- ऊँ दधिक्राव्णो ऽ अकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिन:। सुरभिनो मुखाकरत्त्प्रणऽआयू œ षितारिषत् ॥

यव :- ऊँ यवोऽसियवयास्मद्वेशोयवयाराती:।।

कुश :- ऊँ पवित्त्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्व: प्रसव:। उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभि: तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्काम: पुनेतच्छकेयम ॥

हाथ में अक्षत लेकर पूर्वादि दिशाओं में उच्चारण करते हुए अक्षत छोड़े :-

ऊँ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा व्विश्ववेदा:।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमि: स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ऊँ प्राच्यै स्वाहा	-	पूर्व
ऊँ अवाच्यै स्वाहा	-	दक्षिण
ऊँ प्रतीच्यै स्वाहा	-	पश्चिम
ऊँ उदीच्यै स्वाहा	-	उत्तर

द्रव्य पवित्रीकरण :- आभ्युदयिक श्राद्ध हेतु एकत्रित किये गये पदार्थों, उपहारादि का पात्रस्थ जलादि द्रव्यों से पवित्री द्वारा पवित्र करना चाहिए।

सङ्कल्पविधिना आभ्युदयिक श्राद्धोपहाराणां पवित्रास्तु -

देश: (उच्चारण करते हुए भूमि पर छींटा देवे)

काल: (उच्चारण करते हुए आकाश पर छींटा देवे)

पाकपात्र: (उच्चारण करते हुए पाक-पात्र पर छींटा देवे)

उपहार: (उच्चारण करते हुए उपहारादि पर छींटा देवे)

द्रव्य (उच्चारण करते हुए द्रव्य अथवा धन पर छींटा देवे)

श्रद्धा (उच्चारण करते हुए स्वयं पर छींटा देवे)

सम्पदा (उच्चारण करते हुए सम्पत्ति आदि का ध्यान करते हुए छींटा देवे) अस्तु ।।

पुन: पात्रस्थ द्रव्यों से आसन आदि पदार्थों अथवा अन्य पात्र पर छींटा देवे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए कुशा का आसन समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अत्र आप: पान्तु वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए जल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे वाससि सु वाससि। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए वस्त्र समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमानि यज्ञोपवीतानि सु यज्ञोपवीतानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो गन्ध: सुगन्ध: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए गन्ध/चन्दन समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे अक्षता: - सु अक्षता: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए अक्षत समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमानि पुष्पाणि - सु पुष्पाणि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए पुष्प समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो सुगन्धित इत्रं - सु इत्रं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए इत्र समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो धूप: - सु धूप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए धूप समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो सुगन्धित दीप:- सु दीप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए दीप समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं नैवेद्यं - सु नैवेद्यं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए नैवेद्य समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं आचमनीयम्ं - सु आचमनीयम्ं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए आचमन हेतु जल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमानि ऋतुफलानि - सु ऋतुफलानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए ऋतुफल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं पुन: आचमनीयम् सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए पुन: जल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं ताम्बूलं - सु ताम्बूलं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए ताम्बूल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं दक्षिणां - सु दक्षिणां (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे पितृ, पितामह और प्रपितामहा के लिए दक्षिणा समर्पित करे ।

ॐ सत्त्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः

ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः

वृद्धि शब्द का उच्चारण करते हुए प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए पूर्व दिशा की ओर उत्तराग्र कुशा आसन पर व द्वितीय पात्र में पैर धोने के लिए पाद्य जल युक्त पदार्थ को कुशा की पवित्री से छींटा देवे अथवा छोड़े।

द्वितीय पात्र स्थापनम् :-

पादोदक अथवा पाद्य पात्र को एक तरफ रखकर द्वितीय पात्र के स्थापन हेतु दूर्वाङ्कुर, दर्भा या पलाश आदि का पत्र आसन के लिए कुश पर रखकर द्वितीय पात्र का स्थापन करे, उसमें जल-यवाक्षत-दधि-चन्दन-पुष्प-दूर्वाङ्कुर अथवा दर्भा की पवित्री डाले।

जल :- ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँय्योरभिस्रवन्तु न:।।

चन्दन :- ऊँ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:। गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत:।

पुष्प :- ऊँ ओषधि: प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्णव:।।

दधि :- ऊँ दधिक्राव्णो ऽ अकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिन:। सुरभिनो मुखाकरत्त्प्रणऽआयू œ षितारिषत् ।।

यव :- ऊँ यवोऽसियवयास्मद्वेशोयवयाराती:।।

कुश :- ऊँ पवित्त्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्व: प्रसव:। उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभि: तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्काम: पुनेतच्छकेयम्।।

हाथ में अक्षत लेकर पूर्वादि दिशाओं में उच्चारण करते हुए अक्षत छोड़े :-

ऊँ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा व्विश्ववेदा:।

स्वस्ति नस्ताक्र्ष्योऽअरिष्टनेमि: स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ।।

ऊँ प्राच्यै स्वाहा	-	पूर्व
ऊँ अवाच्यै स्वाहा	-	दक्षिण
ऊँ प्रतीच्यै स्वाहा	-	पश्चिम
ऊँ उदीच्यै स्वाहा	-	उत्तर

द्रव्य पवित्रीकरण :- आभ्युदयिक श्राद्ध हेतु एकत्रित किये गये पदार्थो, उपहारादि का पात्रस्थ जलादि द्रव्यों से पवित्री द्वारा पवित्र करना चाहिए।

सङ्कल्पविधिना आभ्युदयिक श्राद्धोपहाराणां पवित्रास्तु -

देश: (उच्चारण करते हुए भूमि पर छींटा देवे)

काल: (उच्चारण करते हुए आकाश पर छींटा देवे)

पाकपात्र: (उच्चारण करते हुए पाक-पात्र पर छींटा देवे)

उपहार: (उच्चारण करते हुए उपहारादि पर छींटा देवे)

द्रव्य (उच्चारण करते हुए द्रव्य अथवा धन पर छींटा देवे)

श्रद्धा (उच्चारण करते हुए स्वयं पर छींटा देवे)

सम्पदा (उच्चारण करते हुए सम्पत्ति आदि का ध्यान करते हुए छींटा देवे) अस्तु।

पुन: पात्रस्थ द्रव्यों से आसन आदि पदार्थों अथवा अन्य पात्र पर छींटा देवे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए कुशा का आसन समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अत्र आप: पान्तु वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए जल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे वाससि सु वाससि। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए वस्त्र समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमानि यज्ञोपवीतानि सु यज्ञोपवीतानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो गन्ध: सुगन्ध: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए गन्ध/चन्दन समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमे अक्षता: - सु अक्षता: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए अक्षत समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमानि पुष्पाणि - सु पुष्पाणि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए पुष्प समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो सुगन्धित इत्रं - सु इत्रं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए इत्र समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो धूप: - सु धूप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए धूप समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः अयं वो सुगन्धित दीप: - सु दीप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए दीप समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं नैवेद्यं - सु नैवेद्यं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए नैवेद्य समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं आचमनीयम् - सु आचमनीयमं् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए आचमन हेतु जल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इमानि ऋतुफलानि - सु ऋतुफलानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए ऋतुफल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं पुन: आचमनीयम् सु आचमनीयमं् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए पुन: जल समर्पित करे।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं ताम्बूलं - सु ताम्बूलं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए ताम्बूल समर्पित करे ।

ॐ अमुकगोत्रा: मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं दक्षिणां - सु दक्षिणां (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे प्रमातामह और वृद्धप्रमातामहा के लिए दक्षिणा समर्पित करे।

मतान्तर :-

5 श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः

वृद्धि शब्द का उच्चारण करते हुए गणेश और अम्बिका के लिए पूर्व दिशा की ओर उत्तराग्र कुशा आसन पर व द्वितीय पात्र में पैर धोने के लिए पाद्य जल युक्त पदार्थ को कुशा की पवित्री से छींटा देवे अथवा छोड़े।

द्वितीय पात्र स्थापनम् :-

पादोदक अथवा पाद्य पात्र को एक तरफ रखकर द्वितीय पात्र के स्थापन हेतु दूर्वाङ्कुर, दर्भा या पलाश आदि का पत्र आसन के लिए कुश पर रखकर द्वितीय पात्र का स्थापन करे, उसमें जल-यवाक्षत-दधि-चन्दन-पुष्प-दूर्वाङ्कुर अथवा दर्भा की पवित्री डाले।

जल :- ॐ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँय्योरभिस्रवन्तु न:।।

चन्दन :- ॐ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:। गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत:।

पुष्प :- ॐ ओषधि: प्रतिमोददध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:। अश्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्णव:।।

दधि :- ॐ दधिक्राव्णो ऽ अकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिन:। सुरभिनो मुखाकरत्त्प्रणऽआयू œ षितारिषत्।।

यव :- ॐ यवोऽसियवयास्मद्वेशोयवयाराती:।।

कुश :- ॐ पवित्त्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्व: प्रसव:। उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभि: तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्काम: पुनेतच्छकेयम।।

हाथ में अक्षत लेकर पूर्वादि दिशाओं में उच्चारण करते हुए अक्षत छोड़े :-

ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवा: स्वस्ति न: पूषा व्विश्ववेदा:।

स्वस्ति नस्ताक्र्ष्योऽअरिष्टनेमि: स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ॐ प्राच्यै स्वाहा - पूर्व

ॐ अवाच्यै स्वाहा - दक्षिण

ॐ प्रतीच्यै स्वाहा - पश्चिम

ॐ उदीच्यै स्वाहा - उत्तर

द्रव्य पवित्रीकरण :- आभ्युदयिक श्राद्ध हेतु एकत्रित किये गये पदार्थों, उपहारादि का पात्रस्थ जलादि द्रव्यों से पवित्री द्वारा पवित्र करना चाहिए।

सङ्कल्पविधिना आभ्युदयिक श्राद्धोपहाराणां पवित्रास्तु -

देश: (उच्चारण करते हुए भूमि पर छींटा देवे)

काल: (उच्चारण करते हुए आकाश पर छींटा देवे)

पाकपात्र: (उच्चारण करते हुए पाक-पात्र पर छींटा देवे)

उपहार: (उच्चारण करते हुए उपहारादि पर छींटा देवे)

द्रव्य (उच्चारण करते हुए द्रव्य अथवा धन पर छींटा देवे)

श्रद्धा (उच्चारण करते हुए स्वयं पर छींटा देवे)

सम्पदा (उच्चारण करते हुए सम्पत्ति आदि का ध्यान करते हुए छींटा देवे) अस्तु।

पुन: पात्रस्थ द्रव्यों से आसन आदि पदार्थों अथवा अन्य पात्र पर छींटा देवे ।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इमे आसने वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए कुशा का आसन समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: अत्र आप: पान्तु वो नम:। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए जल समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इमे वाससि सु वाससि। (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे गणेश और अम्बिका के लिए वस्त्र समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इमानि यज्ञोपवीतानि सु यज्ञोपवीतानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए यज्ञोपवीत समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: अयं वो गन्ध: सुगन्ध: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए गन्ध/चन्दन समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इमे अक्षता: - सु अक्षता: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए अक्षत समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इमानि पुष्पाणि - सु पुष्पाणि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए पुष्प समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: अयं वो सुगन्धित इत्रं- सु इत्रं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे गणेश और अम्बिका के लिए इत्र समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: अयं वो धूप: - सु धूप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए धूप समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: अयं वो सुगन्धित दीप: - सु दीप: (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए दीप समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इदं नैवेद्यं - सु नैवेद्यं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:)- इससे गणेश और अम्बिका के लिए नैवेद्य समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इदं आचमनीयम् - सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए आचमन हेतु जल समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इमानि ऋतुफलानि - सु ऋतुफलानि (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए ऋतुफल समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इदं पुन: आचमनीयम् सु आचमनीयम् (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए पुन: जल समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इदं ताम्बूलं - सु ताम्बूलं (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए ताम्बूल समर्पित करे।

श्रीगणेशाम्बिकयो: ॐ भूर्भुवः स्वः इसे आसने वो नम: इदं दक्षिणां - सु दक्षिणां (स्वाहा नामयं च वृद्धि:) - इससे गणेश और अम्बिका के लिए दक्षिणा समर्पित करे।

संकल्प: - (हाथ में अक्षत जल लेकर संकल्प को पढ़े)

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: श्रीमद्‌ïभगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयो: पश्चिम भागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन्ïं देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मïणानां सन्निधौ ब्रह्मïणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्ठमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात्ïं शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौं अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्र: (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मन: श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्‌ïध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशे: नामराशे: वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्ठमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तै: सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं

आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं वसुरूद्रादित्यस्वरूपाणां पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां तथा अमुकगोत्राणाममुकामु कशर्म्मणांसपत्नीकानां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानाम् श्रीगणेशाम्बिकयो: साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्ध कर्माङ्गिभूतं युग्मब्राह्मण भोजनसहितदक्षिणादिदानमहं करिष्ये।

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्रा ह्मण भोजन पर्याप्त दास्यमानमत्रं यथाशक्ति सोपस्करं निष्क्रयभूतं द्रव्यं स्वाहानामय च वृद्धिः।

ॐ मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मण भोजन पर्याप्त दास्यमानमत्रं यथाशक्ति सोपस्करं निष्क्रयभूतं द्रव्यं स्वाहानामय च वृद्धिः।

ॐ पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मण भोजन पर्याप्त दास्यमानमत्रं यथाशक्ति सोपस्करं निष्क्रयभूतं द्रव्यं स्वाहानामय च वृद्धिः।

ॐ मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्रा ह्मण भोजन पर्याप्त दास्यमानमत्रं यथाशक्ति सोपस्करं निष्क्रयभूतं द्रव्यं स्वाहानामय च वृद्धिः।

द्राक्षामलकनिष्क्रयीभूतद्रव्यदानम् — दांख, आंवला, दक्षिणा का दान

ॐ सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं व: इदं व: द्राक्षामलकनिष्क्रयीदक्षिणां मुखवास: प्रीयन्तां स्वाहा नामयज्च वृद्वि

ॐ मातृपितामही प्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः व: इदं व: द्राक्षामलकनिष्क्रयीदक्षिणां मुखवास: प्रीयन्तां स्वाहा नामयज्च वृद्वि

ॐ पितृपितामह प्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं व: इदं व: द्राक्षामलकनिष्क्रयीदक्षिणां मुखवास: प्रीयन्तां स्वाहा नामयज्च वृद्वि

ॐ मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः इदं वः द्राक्षामलकनिष्क्रयीदक्षिणां मुखवास: प्रीयन्तां स्वाहा नामयज्च वृद्धि

ॐ मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः इदं वः द्राक्षामलकनिष्क्रयीदक्षिणां मुखवास: प्रीयन्तां स्वाहा नामयज्च वृद्धि

पुष्पाञ्जलि :- हाथ में अक्षत जल लेकर मंत्र बोलते हुए प्रार्थना करें।

हे मातृवंशा! प्रभुदावतारा! हे पितृवंशा! मम पावनाश्च।

पुष्पाञ्जली मे सुमनोवदातुं, गृह्णन्तु दिव्यपितर:! पुनीता ।।1।।

स्वर्गस्थिता ये पितरस्यु दिव्या:, श्रेष्ठै: सुभावै सुरपूजितास्ते।

आयुष्यमारोग्यमभिप्रदाय गृह्णन्तु दिव्यपितर:! पुनीता ।।2।।

प्रार्थयेत् - हाथ में अक्षत जल लेकर मंत्र बोलते हुए प्रार्थना करें।

ॐ उपास्मैगायतानर: पवमानाययेन्दवे अभिदेवा2 इयक्षते।।1।।

येत्वाहिहत्येमघवन्नुवर्द्धन्न्योशं वरेहरिवोयगविष्टौयेत्वानूनमनुमदन्ति व्विप्प्रा:।

पिबेन्द्रसोम सगणोमरुद्धि :।।2।।

जनिष्ठाऽउग्र: सहसेतुरायमन्द्र ओजिष्ठोबहुलाभिमान अवर्द्धन्निं

मरुतश्चिदत्रमा तायद्वीरन्दधनिद्धनिष्ठा ।।3।।

आतूनऽइन्द्रवृत्रहन्नस्स्माकमद्र्धमागहि। महान्महीभिरुतिभि:।।4।।

त्वमिन्द्रप्रतूर्तिष्वभिव्विश्वाऽअसिस्पृध:।

अशस्तिहाजनिताव्विश्वतूरसित्वन्तूर्य्यतरुष्यत:।।5।।

अनुतेशुष्मन्तुरयन्तमीयतु क्षोणी: शिशुन्नमातरा।

व्विश्श्वास्तेस्पृध: श्रथयन्तमन्यवेव्वृत्रं यदिन्द्रतूर्व्वसि॥6॥

यज्ञोदेवानाम्प्रत्येति सुम्नमादित्त्यासोभवतामृडयन्त:।

आवोर्व्वाचीसुमतिर्व्वावृत्याद होश्श्चिद्याव्वरिवोव्वितरासत्॥7॥

अदब्धेभि: सवित: पायुभिष्ट्व शिवोभिरद्यपारिपाहिनोगयम्।

हिरण्यजिह्व: सुवितायनव्यसेरक्षामाकिर्न्नो अघश सऽईशत॥8॥

मातापितामही चैव तथैव प्रपितामही।

पितापितामहश्चैव तथैव प्रपितामहाः॥

मातामहस्तत्पिता च प्रमातामहकादयः।

एते भवन्तु सुप्रीताः प्रयच्छन्तु च मंलम्॥

इस प्रकार नान्दीश्राद्ध सम्पन्न करके पितरों का आशीर्वाद ग्रहण करे –

गोत्रन्नो वद्र्धतां		हमारे गोत्र की वृद्धि करे।
दातारो नोऽभि वद्र्धन्ताम्	-	हमें दाता (दानकर्ता) बनाओं।
वेदाः सन्ततिरेव च	-	हमारी सन्तति वेदों में शिक्षित हो।
श्रद्धा च नो माव्यगमत्		मेरे कुल की पितरों में श्रद्धा बनी रहे।
बहुदेयं च नोऽस्तु	-	सदा देने के लिए हमारे पास धन हो।
अन्नं च नो बहुभवेत्	-	हमारे यहाँ अन्न-धन प्रचुर मात्रा में हो।

अतिथींश्च लभेमहि	-	सदा हम अतिथियों का सत्कार करे।
याचितारश्च नः सन्तु	-	हमारा कुल दान हेतु सामर्थ्यवान बने।
मा च याचिष्म कञ्चन एताः सत्याः		हमारा कुल कभी याचक नहीं बने।
- आशिषः सन्तु -		इस प्रकार का हम आशीष प्रदान करे।
ब्राह्मणः सन्त्वेता सत्या आशिषः -		ब्राह्मण आशीर्वाद देवे - आपकी मनोकामनायें पूर्ण हो।
मन्त्रपाठः (पात्रटार मुद्रार्पणम् च - :-		द्रव्य से पात्र को बजाकर मुद्रा का त्याग करे)

ॐ इडामग्ने पुरुदषसषसनो शश्वत्तमषहवमानाय साध। स्यान्न सूनुस्तनयो व्विजावाग्ने सा ते सुमतिब्र्भूत्त्वस्म्मे ॥ उपास्म्मै गायता नरल पवमानायेन्दवेअभिदेवा 2॥ ऽइयक्षते ॥

यजमान - अनेन नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्।ब्राह्मणाः - सुसम्पन्नम् इति।

विसर्जनम् :-व्वाजेवाजे वत व्वाजिनो नो धनेषु व्विप्प्राऽअमृताऽऋतज्ञाल । अस्य मद्ध्व पिबत मादयद्ध्वन्तृप्ता‍त पथिभिद्र्देवयानैइ ॥

अनुव्रजनम् :-आमा व्वाजस्य प्प्रसवो जगम्म्यादेमे द्यावापृथिवी व्विश्वरूपे। आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमोऽअमृतत्त्वेन गम्म्यात् ॥ विश्वेदेवाः प्रीयन्तामिति। अस्मिन्नान्दीश्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्ट ब्राह्मणानां वचनात् नान्दीमुखप्रसादात् सर्वं परिपूर्णोऽस्तु। अस्तु परिपूर्णः इति ब्राह्मणाः।

तत्पश्चात् कर्म में न्यूनता की पूर्ति के लिए निम्नाङ्कित श्लोकों को पढ़ते हुए भगवान् से प्रार्थना करे :-

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥ॐ विष्णवे नमः .... 3॥

॥ ॐ वृद्धिः, वृद्धिः, वृद्धि ॥ ॐ शिवम्, शिवम्, शिवम् ॥ ॐ कल्याणम्, कल्याणम्, कल्याणम् ॥

6.4. सारांश

माङ्गलिक संस्कारों में पूजन के पूर्व नान्दी श्राद्ध पूजन अवश्य करना चाहिए। श्राद्ध शब्द श्रद्धा का पर्यायवाची है, नान्दी पितरों का पर्यायवाची है । नान्दीश्राद्ध में हम अपने पूर्वजों की अपनी श्रद्धा भावना व्यक्त करते है, उनका स्मरण करते है। शुभकार्यों में उनका आशीर्वाद ग्रहण करते है क्योंकि वे परोक्ष रूप से सभी कर्मों में अपनी उपस्थिति रखते है तथा अपने कुल के दीपकों से पूजन व तुष्टि की आकांक्षा करते है, उनकी सभी आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु नान्दीश्राद्ध ही सर्वोत्तम उपादान है। वैसे तो श्राद्ध कर्म में पूर्वजों का पिण्ड़दान इत्यादि किया जाता है, किन्तु माङ्गलिक कार्यों से पूर्व नान्दीश्राद्ध के अन्तर्गत पितरों के प्रति पिण्ड़दान आदि के बिना श्राद्धकर्म, दक्षिणादि दान/ब्राह्मणभोजन/आमान्नदान का सङ्कल्प करके किया जा सकता है। नान्दीश्राद्ध में सत्यवसु, विश्वेदेव, नाना-नानी, दादा-दादी आदि का पूजन किया जाता है। नान्दीश्राद्ध से हमारे कुल में वृद्धि होती है, सुख-शान्ति बनी रहती है तथा हम सभी का कल्याण का होता है।

6.5. शब्दावली

1. श्राद्ध = श्रद्धा
2. अशौच = अशुद्धिकाल
3. ताम्र = ताँबा
4. मृण्मय = मिट्टी का पात्र
5. आलोड़न = हिलाना
6. यव = जौ
7. दधि = दही
8. पादोदक = पैर धोने का जल
9. प्रमातामह: = परनाना

10. मातामह	=	नाना
11. वृद्धप्रमातामह	=	वृद्धपरनाना
12. मातामही	=	नानी
13. प्रमातामही	=	परनानी
14. वृद्धप्रमातामही	=	वृद्धपरनानी
15. पितामह	=	दादा
16. प्रपितामह	=	परदादा
17. पितामही	=	दादी
18. प्रपितामही	=	परदादी

6.6. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : दाहिने हाथ की किस अङ्गुली में पवित्री को धारण करनी चाहिए ?

उत्तर : दाहिने हाथ की अनामिका में दो कुशा की पवित्री धारण करनी चाहिए।

प्रश्न - 2 : नान्दीश्राद्ध में पात्रस्थ द्रव्यों को आलोड़न पवित्री द्वारा किस अङ्गुली से करना चाहिए ?

उत्तर : नान्दीश्राद्ध में पात्रस्थ द्रव्यों को आलोड़न पवित्री द्वारा अनामिका व अङ्गुष्ठ से करना चाहिए।

प्रश्न - 3 : पाद्यपात्र में डालने वाले द्रव्यों का उल्लेख कीजिये ?

उत्तर : पाद्यपात्र में डालने वाले द्रव्य - दही, कुंकुम, जौ, अक्षत, जल, दूर्वा अथवा कुशा।

प्रश्न - 4 : नान्दीश्राद्ध में किस विश्वेदेवा का अर्चन किया जाता है ?

उत्तर : नान्दीश्राद्ध में सत्यवसु संज्ञक विश्वेदेवा काअर्चन किया जाता है।

प्रश्न - 5 : नान्दी श्राद्ध में आसनादि अर्पण हेतु द्रव्यों के नाम बताईये ?

उत्तर : नान्दी श्राद्ध में आसनादि अर्पण हेतु द्रव्य - दही, चन्दन, जौ, अक्षत, जल, दूर्वा अथवा कुशा।

6.7. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : नान्दीश्राद्ध में पाद्य अर्पण की सम्पूर्ण विधि का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 2 : नान्दीश्राद्ध में द्वितीय पात्र स्थापन की विधि बताईये ?

प्रश्न - 3 : मातामह, प्रमातामह व वृद्धप्रमातामह के नान्दीश्राद्ध की विधि बताइये ?

प्रश्न - 4 : पितरों की प्रार्थना का मन्त्र लिखिये ?

प्रश्न - 5 : नान्दीश्राद्ध के पश्चात् पात्रटङ्कारण-मन्त्र का उल्लेख कीजिये ?

6.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कर्मठगुरु:लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
2. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
3. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

इकाई — 7

ब्राह्मण वरण और पुण्याहवाचन

इकाई की रूपरेखा

7.1. प्रस्तावना

7.2. उद्देश्य

7.3. ब्राह्मणवरण

7.4. स्वस्तिवाचन-कलशस्थापन

7.5. पुण्याहवाचन

7.6. सारांश

7.7. शब्दावलि

7.8. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

7.9. लघुत्तरीय प्रश्न

7.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

7.1. प्रस्तावना

भारतीय परम्परा में मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव की परम्परा रही है। इसी का अनुसरण करते हुए आगत अतिथियों का यथोचित सत्कार प्रत्येक गृहस्थी को करना चाहिए, जिसके फलस्वरूप गृहस्थी की सामाजिक-प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है। जब देवादि पूजन का समय हो तो ब्राह्मणों को शास्त्रों ने पूजा-दान-यज्ञ आदि कार्यों के सम्पादन के लिए उपयुक्त माना है। प्रत्येक शुभकार्य करने से पूर्व माता-पिता,

ब्राह्मणों, अपने से बड़े व्यक्तियों का आशीर्वाद लेना चाहिए, इनके शुभाशीर्वाद से आयु, कीर्ति, यश, बल आदि में वृद्धि होती है। साथ ही उचित-अनुचित कार्यों द्वारा उपार्जित धन का सदुपयोग भी होता है तथा सामाजिक क्रियाशीलता भी बनी रहती है। इसके बिना कार्य में सफलता नहीं मिलती है। शास्त्रों में विधि-विधान निश्चित किया है, जिसका ज्ञान सभी जिज्ञासुओं को इस इकाई में मिलेगा ।

प्रधान कार्य के अनुसार पुण्याहवाचन सर्वप्रथम (पूजनपूर्व) या बाद (उत्तरपूजन) में कर सकते हैं- धर्मकर्मणि मा्गल्ये संग्रामेऽद्भु दर्शनेसम्पूज्य गन्धमाल्यादेब्र्राह्मणान्स्वस्ति वाचयेत् ॥

7.2. उद्देश्य

1. आगन्तुक ब्राह्मणों का शास्त्रीय विधि से पूजन का ज्ञान प्राप्त करना।

2. ब्राह्मणों के कार्य-विभाजन अथवा उनकी कार्य हेतु नियुक्ति करने के विधि का ज्ञान प्राप्त करना।

3. ब्राह्मणों द्वारा किये गये कार्यों का फल प्राप्त करना।

4. ब्राह्मणों का परिचय प्राप्त करने की विधि का ज्ञान।

5. प्रत्येक माङ्गलिक कार्य के अन्तर्गत पुण्याहवाचन का वैदिक रीति से ज्ञान प्राप्त करना।

7.3. ब्राह्मणवरण

यजमान पूर्वाभिमुख बैठे हुए ब्राह्मण को सम्बोधन करता हुआ यह कहे :-

विनियोग :- ऊँ साधु भवानास्तामिति प्रजापतिऋर्षिर्ब्रह्मा देवता यजुश्छन्दो विप्रार्चने विनियोग:।

यजमान प्रार्थना करे :- ऊँ साधु भवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तम् ।

ब्राह्मण :- ऊँ अर्चय।

विष्टर :-यजमान :- ऊँ विष्टरो विष्टरो विष्टर:। (पच्चीस कुशा के समूह को स्त्री की वेणी अर्थात् चोटी की तरह गूँथ करके उसके अगले भाग को बायीं ओर से मोड़कर तिरछी गाँठ लगा देते है। इस प्रकार बने हुए कुश के

स्वरूप विशेष को विष्टर कहते है। कुछ विद्वानों ने कुश की संख्या का निर्देश नहीं किया है, वे अपरिमित मानते है, कुश के अभाव में काश का भी विष्टर बनाया जा सकता है। यह परम्परा अतिथि के स्वागत हेतु आराम के लिए आसन देने से सम्बन्धित है।)

यजमान :- ऊँ विष्टरं प्रतिगृह्यताम्। **ब्राह्मण :-** ऊँ विष्टरं प्रगृह्णामि।

ब्राह्मण विनियोग करे :- ऊँ वर्ष्मोस्मीत्यथर्वण ऋषिरनुष्पछन्दो विष्टरो देवता उपवेशने विनियोग:।

ब्राह्मण मन्त्र पढ़े :- **ऊँ वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्य:।**

इमं तमभि तिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति।।

यजमान से दोनों हाथों से विष्टर लेकर ब्राह्मण उत्तराग्र आसन के नीचे रख ऊपर बैठते हुए यह मन्त्र बोले।

पाद्यपात्र :-पैर धोने के लिए उपयोगी जल को पाद्य कहते है। अर्च्य के आसन पर बैठ जाने के बाद पैर धोना चाहिए, इसीलिए कांस्यपात्र में जल भरकर उसका अर्चन करके यजमान सपत्नीक खड़ा हो जाये एवं ब्राह्मणों से पैर धुलवाने की प्रार्थना करे।

ब्राह्मण निम्न मन्त्रों का पाठ करे :-

स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवा स्वस्ति न॒ पूषाव्विश्श्ववेदा

स्वस्ति नस्ताक्र्ष्यो ऽ अरिष्ट्टनेमि स्वस्ति नो बृहस्प्पति र्द्दधातु।।

पय॒ पृथिव्व्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्व्यन्तरिक्षे पयोधा।

पयस्वती प्प्रदिश॒ सन्तु मह्यय्यांयम्।।

व्विष्ण्णो रराटमसि व्विष्णो श्रप्त्रेस्त्थो व्विष्ण्णो स्यूरसि-

व्विष्णोद्र्ध्रुवोसि। व्वैष्ण्णवमसि व्विष्ण्णवेत्त्वा।।

अग्ग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्या देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो

देवता रुद्द्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता

बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता ॥

द्यौ शान्तिरन्तरिक्क्ष शान्ति पृथिवी शान्तिराप शान्तिरोषधय शान्ति।

व्वनस्प्पतय शान्तिवर्वश्श्वे देवा शान्तिब्ब्रह्म्म शान्ति सर्व्व

शान्ति शान्तिरेव शान्ति सा मा शान्तिरेधि॥

यजमान :- ॐ पाद्यं पाद्यं पाद्यम्।

यजमान :- ॐ पाद्यं प्रतिगृह्यताम्।

ब्राह्मण :- ॐ पाद्यं प्रतिगृह्णामि।

यजमान (सपत्नि) पैर धोते हुए बोले :-

यत्फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे।

तत्फलं पाण्ड़वश्रेष्ठ: विप्राणां पादशोचने।।

विप्रपाद तले धृष्ट: क्षिप्यमाणस्तु ये करा:।

स करा: करविज्ञेय: शेषा हि अकराकरा:।।

पृथिव्यानि यानि तीर्थाणि तानि तीर्थाणि सागरे।

स सागराणि तीर्थानि विप्रस्य दक्षिणकरे।

ब्राह्मण यजमान की अञ्जलि से पाद्यपात्र ग्रहण करके भूमि पर रख अञ्जलि से पाद्य के जल से यजमान ब्राह्मण का पहले दायाँ पैर फिर बायाँ पैर धोवे।

विनियोग :- ॐ विराजो दोहोऽसीति प्रजापतिऋर्षिर्यजुश्छन्द आपो देवता विप्रपादप्रक्षालने विनियोग:।

मन्त्र :- ऊँ विराजो दोहोऽसि व्विराजो दोहमशीयमयि पाद्यायै व्विराजो दोह:।।

यजमान दूसरा विष्टर लेकर कहे :- ऊँ विष्टरो विष्टरो विष्टर:।

यजमान :- ऊँ विष्टर: प्रतिगृह्यताम्। **ब्राह्मण :-** ऊँ विष्टरं प्रतिगृह्णमि।

ब्राह्मण यजमान के पास से विष्टर उत्तराग्र पैरों के नीचे रखे और यह मन्त्र बोले :-

ऊँ व्वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्य:।

इमं तमभि तिष्ठामि यो मा कश्चाऽभिदासति।।

अर्घ्य :-यजमान एक पात्र में दूर्वा, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन और जल लेवे :- मृण्मय अथवा कांस्य के अर्घ्यपात्र (दधि-दूर्वा-कुशाग्र-पुष्प-अक्षत-कुंकुम-दक्षिणा-सुपारी मिश्रित जल) में जल, दूर्वा, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन रखकर अर्घ्य के रूप में ब्राह्मण के सम्मुख खड़ा होकर ब्राह्मण से ग्रहण करने की प्रार्थना करे।

तत्पश्चात ब्राह्मण शान्तिपाठ करे :-

॥ हरि: ऊँ ॥

आशु शिशानो व्वृषभो न भीमो घनाघन क्क्षोभणश्च्च-र्षणीनाम्।

सङ्क्रन्दनोनिमिषऽएकवीर शत सेनाऽअज-यत्सा कमिन्द्र ॥ 1॥

सङ्क्रन्दनेना निमिषेण जिष्णुना युत्त्कारेण दुश्च्च्यवनेनधृष्णुना।

तदिन्द्रेण जयततत्त्सहद्ध्वँ य्युधोनरऽइषुहस्त्तेन व्वृष्णणा॥ 2॥

सऽइषुहस्त्तै सनिषङ्गिभिर्व्वशीसœ स्रष्ट्टासयुधऽ इन्द्रोग-णेन ।

स सृष्ट्टं जित्सोमपाबाहु शद्र्ध्युग्ग्र धन्न्वा प्प्रतिहिताभिरस्त्ता॥ 3॥

बृहस्प्पते परिदीया रथेन रक्षोहामित्त्रा 2॥ ऽअपबाधमान ।

प्रभञ्जन्त्सेना प्प्रमृणो युधा जयन्नस्म्माकमेद्ध्यविता रथानाम्॥4॥

बलविज्ञाय स्त्थविरप्प्रवीर सहस्वान्वाजी सहमानऽउग्ग्र।

अभिवीरोऽ अभिसत्त्वा सहोजा जैत्त्रमिन्द्र रथमातिष् गोवित्॥ 5॥

गोत्त्रभिदङ्गोविदँव्वज्ज्रबाहुञ्जयन्तमज्ज्म प्प्रमृणन्तमोजसा।

इम सजाताऽ अनु वीरयद्ध्व मिन्द्र सखायोऽ अनु सरभद्ध्वम्॥6॥

अभि गोत्त्राणि सहसा गाहमानोदयो व्वीर शतमन्न्युरिन्द्र।

दुश्च्च्यवन पृतनाषाडयुद्ध्योस्म्माक सेनाऽअवतु प्प्रयुत्त्सु॥7॥

इन्द्रऽआसान्नेता बृहस्प्पतिर्द्दक्षिणा यज्ञ पुरऽएतु सोम।

देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनाम्मरुतो यन्त्वग्ग्रम्॥8॥

इन्द्रस्य व्वृष्ण्णो व्वरुणस्य राज्ञऽआदित्त्यानाम्मरुताœ शर्द्धऽउग्ग्रम्।

महामनसाम्भुवनच्च्यवानाङ्घोषो देवानाञ्जयता मुदस्त्थात्॥9॥

उद्धर्षय मघवन्नायुधान्न्युत्त्सत्त्वनाम्मामकानाम्मनाœसि।

उद्वृत्त्रहन्वाजिनाँ व्वाजिनान्न्युद्रथानाञ्जयताँय्यन्तु घोषा॥10॥

अस्म्माकमिन्द्र समृतेषु द्ध्वजेष्ष्वस्म्माकँय्याऽ इषवस्त्ता जयन्तु।

अस्म्माकँ व्वीराऽउत्तरे भवन्त्वस्म्मा 2॥ऽउ देवाऽअवता हवेषु॥11॥

अमीषा ञ्चित्तम्प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्न्यप्प्वे परेहि।

अभिप्प्रे हिनिर्द्दह हृत्सु शोकैरन्धेना मित्त्रास्त्तमसा सचन्ताम्॥12॥

अवसृष्ट्वा परापत शरव्व्ये ब्ब्रह्मंस शिते ।

गच्छामित्त्रान्प्र पद्‌यस्व मामीषाङ्‌कञ्चनोच्छिष ॥13॥

प्रेता जयता नरऽइन्द्रो व शर्म्म यच्छतु।

उग्ग्रा व्र सन्तु बाहवोनाधृष्य्या यथासथ॥ 14॥

असौ या सेना मरुत परेषामब्भ्यैति नऽओजसा स्प्पर्द्धमाना।

ताङ्‌हततमसा पव्व्रतेन यथामीऽअन्न्योऽअन्न्यन्न जानन् ॥15॥

यत्र बाणा सम्पतन्ति कुमारा व्विशिखाऽइव ।

तन्नऽइन्द्रो बृहस्प्पतिरदिति शर्म्म यच्छतु व्विश्श्वाहा शर्म्मयच्छतु॥16॥

मर्म्माणिते व्वर्म्मणा च्छादयामि सोमस्त्त्वा राजामृते-नानुवस्ताम्।

उरोर्व्वरीयो व्वरुणस्त्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानु देवा मदन्तु॥ 17॥

गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्प्रियाणान्त्वा प्प्रियपति

हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम ।

आहम जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्॥

तत्पश्चात् यजमान ब्राह्मण से प्रार्थना करे (अर्घ्य के रूप में ब्राह्मण के सम्मुख खड़ा होकर ब्राह्मण से ग्रहण करने की प्रार्थना करे।) :-

आयु आरोग्य पुत्रादि सुख श्रीप्राप्त्ये मम आपदविघ्नविनाशाय शत्रु बुद्धि क्षयाय च विशेष: काम्य होमेन सुहूतं समिधादिभि: नवग्रहमखं यज्ञं कर्तुं यूयं प्रसीदत स्वागतं भो द्विजश्रेष्ठ मदनुग्रहकारका: इदं अर्घं भवान् प्रतिगृह्यताम्।

यजमान :- ऊँ अर्घो अर्घो अर्घ:।

यजमान :- ऊँ अर्घं प्रतिगृह्यताम्।

ब्राह्मण :- ऊँ अर्घं प्रतिगृह्णामि।

ब्राह्मण यजमान के हाथ से अर्घ्यपात्र को ग्रहण करता हुआ मस्तक के लगाकर यह मन्त्र पढ़े :-

विनियोग :- ऊँ आप:स्थ युष्माभिरिति मन्त्रस्य सिन्धुद्वीप ऋषिरनुष्टुपछन्द-

आपो देवता अर्घग्रहणे विनियोग:।

मन्त्र :- ऊँ आप:स्थ युष्माभि: सर्वान्कामानवाप्नवानि।

पात्रस्थ जल को ईशान दिशा (अन्यपात्र में) में छोड़ता हुआ यह मन्त्र पढ़े :-

विनियोग :-

ऊँ समुद्रं व इत्यादि मन्त्रस्याथर्वण ऋषिर्बृहती छन्दो वरूणो देवता अर्घजलप्रवाहे **विनियोग:।**

मन्त्र :- ऊँ समुद्रं व: प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत।

अरिष्टामस्माकं व्वीरा मा पराऽसेचि मत्पय:।

आचमनीय -

यजमान आचमनीय पात्र लेवे :- सुविधापूर्वक आचमन करने के लिए उपयोगी पात्रविशेष में आचमन के लिए रखा गया जल आचमनीय कहलाता है और इसे ब्राह्मण को पाद्य के बाद दिया जाता है, इसमें कर्पूर, अगर, पुष्प, जातीफल, लवङ्ग व कङ्कोल को डालने (कर्पूरमगरुं पुष्पं दद्यात् जातिफलं मुने। लवङ्गमपि कङ्कोलं शस्तमाचमनीयके।।) का विधान है। ब्राह्मण आचमनीय पात्र लेकर जल से आचमन करे।

यजमान :- ऊँ आचमनीयं आचमनीयं आचमनीयम्।

यजमान :- ऊँ आचमनीयं प्रतिगृह्यताम्।

ब्राह्मण :- ऊँ आचमनीयं प्रतिगृह्णामि।

यजमान के हाथ से ब्राह्मण आचमनीय पात्र लेकर अपने बायें हाथ में रखकर दायें हाथ से दो बार आचमन करे।

विनियोग :- ऊँ आमाऽगन्निति परमेष्ठी ऋषिर्बृहतीछन्द आपो देवता आचमने विनियोग:।

मन्त्र :- **ऊँ आमाऽगन्यशसा स œ सृज व्वर्चसा।**

तं मा कुरू प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम्।

यजमान काँसी की कटोरी में शुद्ध दही, शहद व घी मिलावे और दूसरी काँसी की कटोरी से ढँक लेवे।

मधुपर्क :-

यजमान :- ऊँ मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्क:।

यजमान :- ऊँ मधुपर्क: प्रतिगृह्यताम्।

ब्राह्मण :- ऊँ मधुपर्कं प्रतिगृह्णामि।

यजमान के हाथ में स्थित मधुपर्क को खोलकर ब्राह्मण देखे और यह मन्त्र पढ़े :-

पदार्थविशेषबोधक मधुपर्क शब्द पुल्लिङ्ग है और कर्मविशेषवाचक मधुपर्क नपुंसकलिङ्ग है, यहाँ पूजनविधि को ध्यान में रखकर विचार किया जा रहा है। पदार्थविशेषवाचक मधुपर्क शब्द से भी दो तरह के पदार्थों का सङ्केत मिलता है - दही, घी, शहद के मिश्रण को मधुपर्क (दधिसर्पिजलं क्षौद्रं शीतं ताभिस्तुपञ्चभि:। प्रोच्यते मधुपर्कस्तु सर्वदेवोपतुष्टये ।। अथवा आज्यं दधि मधु मिश्रं मधुपर्कं विदुर्बुधा:। मधुपर्कं दधिमधुघृतमपिहितं कांस्येन।।) कहते है तथा दही, शहद, घी के मिश्रण को भी मधुपर्क कहते है। काँसे के कटोरे में रखकर काँसे के कटारे से ढक करके ब्राह्मण को देना चाहिए।

मधुपर्क का प्रमाण :- घृत एक पल, दधि तीन पल व शहद एक पल मिलाने पर मधुपर्क बनता है अर्थात् आठ तोला का पल मानने पर आधा सेर तथा चार तोला का पल मानने पर पावभर के बराबर दही आदि से बने हुए पदार्थ का वजन होता है।

मन्त्रोच्चारपूर्वक ब्राह्मण मधुपर्क को बायें हाथ में लेकर दायें हाथ के अङ्गुष्ठ व अनामिका अङ्गुली से प्रदक्षिण क्रम से तीन बार मिलाकर भूमि पर थोड़ा-थोड़ा छोड़े, इसके बाद तीन बार प्राशन करे, प्रतिप्राशन में मन्त्र का पाठ करे तत्पश्चात् प्राशन के बाद दो बार आचमन करे।

विनियोग :- ऊँ मित्रस्येति प्रजापतिऋर्षि: पंक्तिश्छन्दो मित्रो देवता मधुपर्कदर्शने विनियोग:।

मन्त्र :- ऊँ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे।

ब्राह्मण दोनों हाथ से ग्रहण करता हुआ यह मन्त्र पढ़े :-

विनियोग :- ऊँ देवस्यत्वेति ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्द: सविता देवता मधुपर्कग्रहणे विनियोग:।

मन्त्र :- ऊँ देवस्य त्वा सवितु: प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याप्रतिगृह्णामि ।

तत्पश्चात् बायें हाथ में रखकर ऊपर की कटोरी हटाकर दायें हाथ की अनामिका अंगुली से तीन बार चलाकर अनामिका और अंगूठे से थोड़ा सा भूमि पर पर गिराये :-

विनियोग :- ऊँ नम: श्यावेति प्रजापतिऋर्षिर्गायत्री छन्द: सविता देवता मधुपर्कालोडने विनियोग:

मन्त्र :- ऊँ नम: श्यावास्यायान्नशने यत्तऽआविद्धं तत्ते निष्कृन्तामि।

इस मन्त्र से तीन बार प्रक्षेप करके तीनबार फिर नीचे के मन्त्र से मधुपर्क का सेवन करता हुआ तीनों बार यन्मधुनो मन्त्र का उच्चारण करे :-

विनियोग :- ऊँ यन्मधुन इति कौत्सऋर्षिर्मधुपर्को देवता जगतीछन्दो मधुपर्कप्राशने विनियोग:।

मन्त्र :- ऊँ यन्मधुनो मधव्यं परम œ रूपमन्नाद्यम्।

तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि। 3

फिर मधुपर्क को ब्राह्मण स्वयं प्राशन करे (उच्छिष्ट/शेष) तथा मधुपर्क को अपने पुत्र/शिष्य को देवे/असञ्चरे निधाय :-

फिर ब्राह्मण तीन बार आचमन करके तर्जनी मध्यमा व अनामिका अंगुली से मुख का स्पर्श करे :-

मन्त्रोच्चापूर्वक ब्राह्मण दायें हाथ की अनामिका, मध्यमा अङ्गुली व अङ्गुष्ठ से से सर्वप्रथम मुख का स्पर्श करे एवं इसी प्रकार क्रमश: नाक, आँख, कान का स्पर्श करते हुए बायें हाथ से दायें हाथ का तथा दायें हाथ से बायें हाथ का स्पर्श करे तत्पश्चात् घुटने का स्पर्श करते हुए सभी अङ्गों का स्पर्श करे।

ऊँ वाङ्गऽआस्ये अस्तु।

तत्पश्चात् तर्जनी व अंगुष्ठ से नासिका का स्पर्श करे :- ऊँ नसोर्मे प्राण: अस्तु।

तत्पश्चात् अनामिका व अंगुष्ठ से नेत्रों का स्पर्श करे :- ऊँ अक्ष्णोर्मे चक्षु: अस्तु।

तत्पश्चात् मध्यमा व अंगुष्ठ से कानों का स्पर्श करे :-ऊँ कणयोर्मे श्रोत्रमस्तु।

तत्पश्चात् हाथ के अग्रभाग से दोनों भुजाओं का स्पर्श करे :-ऊँ बाह्वोर्मे बलम् अस्तु।

तत्पश्चात् दोनों हाथों से जंघाओं का स्पर्श करे :- ऊँ ऊर्वोर्मे ओज: अस्तु।

तत्पश्चात् दोनों हाथों से सम्पूर्ण अंगों का स्पर्श करे :-

ऊँ अरिष्टानि मे अङ्गानि तनूस्तन्वा में सह सन्तु।

यजमान ब्राह्मण के साथ दूर्वादल पकड़कर तीन बार यह कहे (तृणत्याग :- यजमान द्रव्य या तृण को खड़ा करे, पुन: ब्राह्मण उसे पकड़े, तत्पश्चात् मन्त्रोच्चारपूर्वक उस तृण को तोड़कर ईशानकोण में त्याग देवे।) :-

ऊँ गौर्गौर्गौ:।

ब्राह्मण-विनियोग :- ऊँ माता रूद्राणाम् इति वामदेव ऋषिर्यजुश्छन्दो गौर्देवता अभिमन्त्रेण विनियोग:।

मन्त्र :-

ॐ माता रूद्राणां दुहिता वसूनाॿ स्वसाऽऽदित्यानाम मृतस्य नाभि:।

प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मागामनागामदितिं व्वधिष्ट।

अर्थात् हे गौमाता! आप रुद्रों की माता, वसुओं की पुत्री, अदितिपुत्रों की बहिन और घृतरूप अमृत का खजाना हो, आप अवध्य एवं पूजनीय हो, अत: आप मेरा व मेरा यजमान जीवन मङ्गलमय करते हुए हमारे सभी पूर्वकृत् पापों को नष्ट करे।

मम (स्वस्य) चामुष्य (अमुक शर्मणो यजमानस्य) च पाप्मा हत:।

ॐ उत्सृजत तृणामन्यत्तु। उच्चस्वर से यह कहकर दूर्वादल (तृण) को ईशान कोण मेंछोड़ देवे।

अत्र अत्राऽऽचारात् गोदानम् :-

अङ्गन्यास एवं तृणत्याग के बाद आचार्यों ने गोदान का निर्देश किया है, इसलिए मधुपर्क के अनन्तर गोदान यथाशक्ति अवश्य करना चाहिए। वर्तमान में कुछ ही यजमान गोदान कर पाते है क्योंकि गाय इतनी मँहगी आती है कि हर व्यक्ति गाय दान नहीं कर सकता और गोदान सभी ब्राह्मण भिन्न-भिन्न कारणों से ले भी नहीं सकते है, अत: गोदान में ब्राह्मण अपने विवेक से काम करे।

सङ्कल्प :-

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु:श्रीमद्ïभगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयो: पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये अमुकक्षेत्रे/प्रदेश/नगरे/स्थाने (पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे - जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मïणानां सन्निधौ ब्रह्मïणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टïमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिïसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन्ï वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात्ï शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये

अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टा◌ायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्र: (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मन: श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशे: नामराशे: वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तै: सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ा्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं मधुपर्कोपयोगिनो गोरूत्सर्गकर्मण: साद्गुण्यार्थं सवत्सा गौ/गोनिष्क्रयीभूतम् इदं (गोतृप्त्यर्थं तृणनिष्क्रिय द्रव्यं वा) द्रव्यम् अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहम् उत्सृज्ये।

यहाँ ब्राह्मण कहे :- ऊँ स्वस्ति। (कल्याण)

यजमान वरण हेतु द्रव्य पास में रखकर ब्राह्मणों से प्रार्थना करे :-

पावना: सर्ववर्णानां ब्राह्मणा ब्रह्मरुपिण:।

अनुगृöन्तु मामद्य ..... (सङ्कल्पित कर्म) पूजनकर्मणि।।

यद्वाक्यामृतसंसिक्ता वृद्धिं यान्ति नरद्रुमा:।

अङ्गीकुर्वन्तु मत्कर्म कल्पद्रुमसमाशिष:।।

ब्राह्मण के तिलक करे :-

नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादाक्षिशिरोरु बाहवे।

सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नम:।।

ब्राह्मण के दायें हाथ में मोली (रक्षासूत्र) बाँधे :-

ऊँ दाबद्ध्रन्दाक्षायणाहिरण्य œ शतानीकायसुमनस्यमाना:।

तन्मऽआबद्ध्नामिशतशारदायायुष्माञ्जरदर्ष्टिथासम्।।

यजमान अपने दायें हाथ में वर्णद्रव्यादि लेकर बोले (ब्राह्मण को देने हेतु द्रव्य :- धोत्ती, दुपट्टा, कुर्त्ता, तौलिया, बनियान, माला, जनेऊ, गोमुखी, आसन, लोई, छाता, पुस्तक, दक्षिणा, पात्र, पञ्चपात्र, स्वर्णमय/रजतमय कुण्डल, स्वर्णमय/रजतमय मुद्रिका आदि अक्षत-पुष्प सहित) :-

ब्राह्मणों के गोत्र :-

गोत्रादि	**प्रवर**	**प्रवरसंख्या**
1. भारद्वाज	भारद्वाज, अङ्गिरस, बार्हस्पत्य	3
2. कौशिक	कौशिक, अघमर्षण, विश्वामित्र	3
3. अत्रि अर्चन,	अनस, शयावाश्वेति	3
4. काश्यप	काश्यप, वतसारन , ध्रुव	3
5. अत्रि (आत्रेय)	अर्चन, अनस, श्यावाश्वेति	3
6. कौत्स	अङ्गिरस, कौत्स, सांख्यायन	3
7. कपिल	अङ्गिरस, बार्हस्पत्य, भारद्वाज	3
8. गर्ग	अङ्गिरस, भारद्वाज, बार्हस्पत्य, श्रवत, गर्ग	5
9. गौतम	गौतम, अङ्गिरस, औतथ्य	3
10. जमदग्नि	जमदग्नि, औवर्त, वसिष्ठ	3
11 जैमिनी	जैमिनी, औतथ्य, सांकृत्य	3

12. भार्गव	भार्गव, च्यवन, आप्नवान, और्व, जमदग्नि	5
13. मरीचि	भार्गव, वैतहत्य, सावयस	3
14. सांख्यायन	सांख्यायन, वाचस्पति, अङ्गिरस, श्रवत, गर्ग	5
15. मुद्गल (मौद्गल्य/बावलिया)	मुद्गल, अङ्गिरस, बार्हस्पत्य	3
16. वत्स	और्वच्यवन, भार्गव, जमदग्नि	3
17. वसिष्ठ	वसिष्ठ, अत्रि, सांकृत्य	3
18. विश्वामित्र	विश्वामित्र, बृहस्पति, वृषगुणा	3
19. शाण्ड़िल्य	शाण्ड़िल्य, असित, दैवत	3
20. हारित	अङ्गिरस, अम्बरीष, यौवन	3
21. अगस्ति	अगस्त्य, दादर्यच्युत, ऐहमवाह	3
22. पराशर	शक्ति, वसिष्ठ, पराशर	3
23. पैप्पलाद	वसिष्ठ, मेत्रावरुण, पैप्पलाद	3
24. सांकृत्य (त्रिवेदी)	सांकृत्य, अङ्गिरस, वृषगुण	3
25. कौत्स	अङ्गिरस, कौत्स, सांख्यायन	3

अमुकगोत्र: अमुक प्रवरान्वित अमुकवेदशाखा ध्यायिन अमुकशर्मण: .... (ब्राह्मण का नाम - पण्ड़ित श्री आत्माराम) अस्मिन्कर्मणि एभिर्वरणद्रव्यै: अमुकामुक गोत्रप्रवरशाखा अमुकशर्माऽहं (शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं) पूजनसम्पादनार्थमहं .... (आचार्य/ब्रह्मा/ऋत्विक्/होता/उद्गाता) कर्म कर्मणि त्वां अहं वृणे।

ब्रह्मा प्रार्थना :-

यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा स्वर्गेलोके पितामह तथा त्वं मम् यज्ञेस्मिन् ब्रह्माभव द्विजोत्तम:।

आचार्य प्रार्थना :-

आचार्यो हि यथास्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पति:।

तथा त्वं मम् यज्ञेस्मिन् आचार्य भव: सुव्रत:।।

आचार्य मन्त्रपाठ करे :-

ऊँ बृहस्पते ऽ अति यर्दो ऽ अर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु ।

द्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।। अनेन अर्चनेन यज्ञ आचार्य: प्रियताम् न मम्।

ऋत्विक प्रार्थना :-

यज्ञादिकर्मकार्येषु ऋत्विक् शक्रमखे यदा ।

तथा यज्ञादिकार्य अस्मिन् ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ।।

ऋत्विक् मन्त्रपाठ करे :-

ऊँ ब्रह्मज्ञानम्प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत: सुरुचोव्वेनआव:।

सबुध्न्याऽ उपमाऽ अस्यविष्ठा: सतश्चयोनिमसतश्च व्विव:।।

भद्द्रङ्कर्णेभि: शृणुयाम देवा भद्द्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा:।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिव्र्व्यशेमहि देवहितं य्यदायु:।।अनेन अर्चनेन ब्राह्मण (ऋत्विक्) प्रियताम् न मम्।

ब्राह्मण बोले :- 'वृतोऽस्मि बोले ।

इस प्रकार सभी ब्राह्मणों का यथाशक्ति यथोचित देशकाल परिस्थिति के अनुसार वरण करें ।

7.4. स्वस्तिवाचन-कलशस्थापन

स्वपुरत: तण्डुलै: अष्टदलं कृत्वा (पूर्व-ईशान के मध्य 24 अङ्गुल प्रमाण से चतुरस्र वेदी बनावे अथवा काष्ठ की चौकी पर शुद्ध नवीनवस्त्र पर अष्टदल अथवा वरुण का मण्ड़ल स्वस्तिवाचन/पुण्याहवाचन हेतु बनाकर निम्न विधि से पूजन करे) -

भूमिं स्पृष्ट्वा (भूमि कास्पर्श करे) :-

ऊँ महिद्द्यौ: पृथिवीचनऽइमँज्ञम्मिमिक्षताम्। पितृतान्नोभरीमभि :।।

धान्यस्पर्श (धान्य से मण्ड़ल बनावे) :-

ऊँ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्प्राणायत्वो दानायत्वा व्यानायत्वा ।

दीर्घामनुप्रसितिमायुषे धान्देवो व:।

सविता हिरण्यपाणि: प्रतिगृब्भ्णात्वछिद्रेण पाणिना चक्षुषेत्वा महीनाम्पयोऽसि ।

धान्योपरि ताम्रकलश स्थापयेत् (ताँबे के कलश की स्थापना करे) :-

ऊँ आजिग्घ्र कलशम्मह्यात्वा व्विशन्त्विन्दव: पुनरुर्ज्जानिवर्त्तस्व सा न:।

सहस्रन्धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्म्माव्विशताद्रयि:।।

कलशेजलम्पूरयेत् (कलश को जल से पूरित करे) :-

ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भर्सनीस्थो

व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्यसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

कलशेगन्धप्रक्षेप: (जलपूरित कलश में गन्ध डाले) :-

ॐ त्वां गन्धर्वा ऽ अखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पति:।

त्वामोषधेसोमोराजाव्विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत्॥

कलशे सर्वोषधि प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में सर्वोषधि डाले) :-

ॐ या ऽ ओषधी: पूर्व्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।

मनैनुबभ्रूणामह œ शतंधामानि सप्त च॥

कलशे दूर्वाङ्कुराणि प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में दूर्वा डाले) : -

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुष: परुषस्परि।

एवानो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च॥

कलशे पञ्चपल्लव (पीपल, आम, गूलर, बड़, अशोक) प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में पञ्चपल्लव लगाये):-

ॐ अश्वत्थे वो निषदनम्पर्णेवो व्वसतिष्कृता।

गोभाज ऽ इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्॥

कलशे सप्तमृत्तिका (हाथी-स्थान, अश्व-स्थान, वल्मीक-स्थान, दीमक, नदी-संगम, तालाब, गौशाला) प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में सप्तमृत्तिका डाले) :-

ॐ स्योना पृथिवि नो भवा नृक्षरा निवेशनि। च्छा: न: शर्म्म सप्प्रथा:॥

कलशे फलं पूगीफलं वा प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में सुपारी डाले) :-

ॐ : फलीर्नीया ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणी:।

बृहस्पति प्प्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हस:॥

कलशे हिरण्यद्रव्यं प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में द्रव्य/दक्षिणा डाले) :-

ॐ हिरण्यगर्भ: समवर्त्तताग्रे भूतस्यात: पतिरेक ऽ आसीत्।

सदाधार पृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषा व्विधेम॥

कलशे पञ्चरत्न प्रक्षेप: (जलपूरित कलश में पञ्चरत्न डाले) :-

ॐ परिवापति: कविरग्निर्हव्यन्यक्रमीत्। दधद्र्त्नानिदाशुषे ॥

कलशे रक्तसूत्रेण वेष्टयेत् (जलपूरित कलश के कण्ठ पर मोलिकासूत्र बाँधे) :-

ॐ ुवासुवासा: परिवीत ऽ आगात्स ऽ उश्रेयान् भवति जायमान:।

तं धीरा स: कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्त:॥

पूर्णपात्रं स्थापयेत् (जलपूरित कलश के ऊपर पूर्णपात्र स्थापित करे) :-

ॐ पूर्णादर्व्वि परापतसु पूर्णा पुनरापत।

व्वस्न्नेवव्विक्क्रीणावहा ऽ इषमूर्ज œ शतक्क्रतो ॥

कलशेसपूर्णपात्रोपरि श्रीफलं स्थापयेत् (पूर्णपात्र पर नारियल स्थापित करे) :-

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण ॥

कलशं वस्त्रेणावेष्टयेत् (कलश पर स्थित नारियल को यथोचित वस्त्रादि से अलंकृत करे) :-

ॐ सुजातो ज्योतिषा सहशर्म्मव्वरूथमासदत्स्व:।

व्वासो ऽ अग्ने व्विश्वरूप œ संव्ययस्वव्विभावसो॥

कलशे वरूणं ध्यायेत् (कलश में वरुण का आवाहन करे) :-

ऊँ तत्वामि ब्ब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानोहविर्ब्भि:।

अहेडमानो व्वरुणे हवोद्ध्युरुश œ समानऽआयु: प्प्रमोषी:।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: कलशे वरुणाय नम:। वरुणमावाहयामि स्थापयामि ।

पूर्ववत् आसनपाद्यादि पूजयेत्।

यथोपचार सामग्री से पूर्वस्थापित कलश का षोड़शोपचार पूजन करे।

पुष्पाञ्जलि -

नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुम‘लाय ।

सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते।।

पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनी जीवनायक।

पुण्याहवाचनं यावत् तावत्वं सन्निधो भव।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: स्वस्तिकलशेवरुणाय नम: पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

प्रार्थना - कण्ठे यस्य महेश्वरो मुखतटे विष्णुर्विधाता स्थितौ,

मध्ये मातृगणा: सरित्पतिगण: पार्श्वं प्रविष्टं तथा।

सद्वीपा वसुधाधिपां प्रणिधिपो वेदानवद्यास्तथा,

साङ्गास्तत्कलशस्थितं सुमनसैरम्भ: पतिं भावये।।अनेन पूजनेन साङ्गवरुण: प्रीयन्ताम् न मम।।

7.5. पुण्याहवाचन

इस पूजन में यजमान ब्राह्मण को अपने व अपने परिवार के मङ्गल हेतु प्रार्थना करता है तत्पश्चात् ब्राह्मण यजमान के लिए पुण्य श्लोकों का उच्चारण करता है, यही पुण्याहवाचन (पुण्य का वाचन) है। इसके अन्तर्गत ब्राह्मण यजमान के परिवार हेतु दीर्घायु, सुख-समृद्धि, बल-पुष्टि, आरोग्यता, स्वस्ति आदि की कामना करते हुए मन्त्रों का उच्चारण करता है तथा अपने किये गये कार्यों (अभीष्ट पूजन) का फल यजमान को प्रदान करता है

सम्पूज्य गंधमाल्याद्यैब्र्राह्मणान्स्वस्ति वाचयेत्।

धर्मकर्मणिमाल्ये संग्रामेऽद्भुतदर्शने।।1।।

पुण्याहवाचनं दैवं ब्राह्मणस्यविधीयते।

एतत्देव निरोंकारं कुर्यात्क्षत्रियवैश्ययोः।।2।।

यमजानः अवनिकृत जानुमंडलः कमलमुकुलसदृशमंजलि शिरस्याधाय (आचार्यः स्व) दक्षिणेन पाणिना स्वर्ण (जल) पूर्णकलशं (यजमानाञ्जलौ) धारयित्वा आशिषः प्रार्थयेत् । (इस मन्त्र से कलश को यजमान अपने सिर से स्पर्श करवाकर अपनी पत्नी के सिर व चूड़े का स्पर्श करवायें, इसके बाद ब्राह्मण कलश को स्वस्थान स्थापित करें । इस मन्त्र का उच्चारण तीन बार करें ।)

यजमान-

1. दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च ।

तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु

विप्राः - ॐ अस्तु दीर्घमायु।

ॐ त्रीणि पदा व्विचक्रमे व्विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः।

अतोधर्म्माणि धारयन्। (इति मन्त्रेण कलशं स्वशिरसि संयोज्य)

यजमान- 2. दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च ।

तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ।

विप्राः - ॐ अस्तु दीर्घमायु ।

ॐ त्रीणि पदा व्विचक्रमे व्विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः।

अतोधर्म्माणि धारयन्। (इति मन्त्रेण कलशं स्वहृदये संयोज्य)

यजमान-

3. दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च।

तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु।

विप्राः - ॐ अस्तु दीर्घमायु : ।

ॐ त्रीणि पदा व्विचक्रमे व्विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः।

अतोधर्म्माणि धारयन्। (इति मन्त्रेण कलशं स्वदक्षिणवामस्कन्धे संयोज्य)

विप्रा :- अस्तु इति ब्रूयुः। ततः कलशं स्वस्थाने स्थापयेत्। यजमानः ब्राह्मणानां करेषु सुप्रोक्षितं कुर्यात्।

यजमान :- अपां मध्ये स्थिता देवाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम् ।

ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवन्तु ते।।

यजमान :- सन्तु शिवा आपः सन्तु -ब्राह्मणों के हाथ अथवा पात्र में जल छोड़े

विप्रा :- सन्तु शिवा आपः। (एवं सर्वत्र यजमानस्य वचनोत्तरं ब्राह्मणवचनम्)

यजमान :- लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे।

सा मे वसतु वै नित्यं, सौमनस्यं तथाऽस्तु नः।। ॐ सौमनस्यमस्तु । ब्राह्मणों के हाथ अथवा पात्र में पुष्प छोड़े

विप्राः- अस्तु सौमनस्यम्।

यजमान :-

अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम्।

यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम। ब्राह्मणों के हाथ अथवा पात्र में अक्षत छोड़े

ॐ अक्षतं चारिष्टं चास्तु इति। अस्तु अक्षतमरिष्टम् इति ब्राह्मणाः।

यजमान :-ॐ गन्धाः पान्तु मा`ल्यं चास्तु। ब्राह्मणों के हाथ अथवा पात्र में गन्ध छोड़े

विप्राः- अस्तु मांगल्यम् इति।

यजमानः - पुनः अक्षतान्दद्यात्। ब्राह्मणों के हाथ अथवा पात्र में अक्षत छोड़े

विप्राः- ॐ अक्षताः पांतु आयुष्यमस्तु। अस्तु आयुष्यम् इति ब्राह्मणाः।

यजमान :-

ॐ पुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्तु ब्राह्मणों के हाथ अथवा पात्र में पुष्प छोड़े

विप्राः :- अस्तु सौश्रियं।

यजमान :- ॐ ताम्बूलानि पान्तु ऐश्वर्यमस्तु ब्राह्मणों के हाथों अथवा पात्र ताम्बुल रखें

विप्राः :- अस्तु ऐश्वर्यम्।

यजमान :- ॐ दक्षिणाः पान्तु आरोग्यमस्तु। ब्राह्मणों के हाथों अथवा पात्र दक्षिणा रखें

विप्राः :- अस्तु आरोग्यम्।

यजमान :-

ॐ दीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशोविद्याविनयो वित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चारोग्यं चायुष्यञ्चास्तु।

विप्राः- ॐ बहुपुत्रं बहुधनं चारोग्यं चायुष्यञ्चास्तु।

यजमान :-

यं कृत्वा सर्वदेवयज्ञ क्रियाकरण कर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते।

तमहमोंकारमाद कृत्वा ऋग्यजुसामाथर्वाशीर्वचनं बहुऋषिसम्मतं समनुज्ञातं

भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये ।

विप्राः- (वाच्यतां)।

ॐ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोतप्र च तिष्ठत । नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत ॥1॥

ॐ सवितात्त्वा सवाना ठ. सुवतामग्निर्गृहपतीना उ सोमोव्वनस्पतीनाम्।

बृहस्पतिव्र्वाच ऽ इन्द्रोज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो-मित्रः सत्यो व्वरुणो धर्म्मपतीनाम् ॥2॥

ॐ नतद्रक्षा उ सिनपिशा-चास्तरन्तिदेवाना मोजः प्रथमजउह्येतत् ।

विभर्ति दाक्षयण उ हिरण्य उ सदेवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषुकृणुते दीर्घमायुः॥ 3॥

ॐ उच्चातेजातमन्धसो दिविसद्भूम्याददे। उग्र उ शर्म्ममहिश्रवः। ।4॥

यजमान :-

व्रतजपनियमतपः स्वाध्याय क्रतु शमदमदयादानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्।

विप्राः- समाहित मनसः स्मः॥

यजमान :- प्रसीदन्तु भवन्तः।

विप्राः- प्रसन्नाः स्मः।

यजमान मूर्धनि पात्रे वा दूर्वा ...कलशजलसेचनम् -

ॐ शान्तिरस्तु। ॐ पुष्टिरस्तु । ॐ तुष्टिरस्तु। ॐ वृद्धिरस्तु।ॐ अविघ्नमस्तु। ॐ आयुष्यमस्तु। ॐ आरोग्यमस्तु।ॐ शिवमस्तु।ॐ शिवं कर्मास्तु।ॐ कर्मसमृद्धिरस्तु।ॐ धर्मसमृद्धिरस्तु।ॐ वेदसमृद्धिरस्तु। ॐ शास्त्र समृद्धिरस्तु।ॐ धनधान्य समृद्धिरस्तु।ॐ पुत्रपौत्र समृद्धिरस्तु। ॐ इष्ट सम्पदस्तु । विप्राः सर्वत्र अस्तु वदेयुः (ब्राह्मण यहां पर अस्तु का उच्चारण करें)

(तत्र पात्राद्वहिरुत्तरत्तः पात्रान्तरे भूमौ वा जलं पातयेत्) तत्पश्चात भूमि /पात्र/मुध्रिं में जल का प्रोक्षण करे।

ॐ अरिष्टनिरसनमस्तु।

ॐ यत्पापं रोगंऽशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु।

पुनः पात्रे - ॐ यच्छ्रेयस्तदस्तु ।

ॐ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु ।

ॐ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु ।

ॐ उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः (शोभनाः) सम्पद्यन्ताम् ।

तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्र ग्रहलग्नादि सम्पदस्तु ।

ॐ तिथिकरणे समुहूर्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने साधिदेवते प्रीयेताम् ।

ॐ दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम् ।

ॐ अग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् ।

ॐ इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्।

ॐ माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम् ।

ॐ वशिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयन्ताम् ।

ॐ अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम् ।

ॐ ब्रह्मपुरोगा सर्वेवेदाः प्रीयन्ताम् ।

ॐ विष्णुपुरोगा सर्वेदेवा प्रीयन्ताम् ।

ॐ आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम् ।

ॐ ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम् ।

ॐ अम्बिकासरस्वत्यौ प्रीयेताम् ।

ॐ श्रद्धामेधे प्रीयेताम् ।

ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयताम् ।

ॐ भगवती माहेश्वरी प्रीयताम्।

ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्।

ॐ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्।

ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्।

ॐ भगवती तु ष्टिकरी प्रीयताम्।

ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् ।

ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम् ।

ॐ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम् ।

ॐ सर्वाः इष्टदेवताः प्रीयन्ताम् ।

(बहिः पात्रान्तरे उत्तरतः वा निहिते पात्रे जलं पातयेत्।) तत्पश्चात भूमि अथवा पात्र में जल छोड़े।

ॐ हताश्च ब्रह्मद्विषः। ॐ हताश्च परिपंथिनः। ॐ हताश्च विघ्नकत्रारः।

ॐ शत्रवः पराभवं यान्तु। ॐ शाम्यन्तु घोराणि । ॐ शाम्यन्तु पापानि।

ॐ शाम्यन्त्वीतयः ।

पुनः पात्रे -

ॐ शुभानि वद्र्धन्ताम्। ॐ शिवा आपः सन्तु । ॐ शिवा ऋतवः सन्तु ।

ॐ शिवा ओषधयः सन्तु। ॐ शिवा वनस्पतयः सन्तु । ॐ शिवा अतिथयः सन्तु ।

ॐ शिवा अग्नयः सन्तु। ॐ शिवा आहुतयः सन्तु। ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम् ।

विप्राः :- ॐ निकामे निकामे नः पर्ज्जन्यो व्वर्षतु फलवत्यो न ऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।

ॐ शुक्रारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिताः आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्।

ॐ भगवान्नारायणः प्रीयताम्। ॐ भगवान् पर्ज्जन्यः प्रीयताम्। ॐ भगवान् स्वामी महासेनः प्रीयताम्। ॐ पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु।

यजामन :- एतत्कल्याणयुक्तं (पुण्यं) पुण्याहं वाचयिष्ये।

विप्राः :- वाच्यताम्।

यजमान :- ॐ ब्राह्म्यं पुण्यमहर्य्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम् ।

वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः।।

भो विप्राः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य .... कमर्ण "पुण्याहं भवन्तो बुरवन्तु त्रिवारं ब्रूयात्।

विप्राः –

ॐ पुण्याहम्, ॐ पुण्याहम्, ॐ पुण्याहम् ।

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः ।

पुनन्तु व्विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा ।।

यजमान :-

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुराकृतम्।

ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं बुरवन्तु नः।।

भो विप्राः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य .... कमर्ण 'कल्याणं भवन्तो बुरवन्तु" त्रिवारं वदेत्।

विप्राः :- ॐ कल्याणम्, ॐ कल्याणम्, ॐ कल्याणम्।

ॐ थेमां वाचं कल्याणीमावदानि नेभ्यः।

ब्रह्मराजन्याभ्या उ शूद्राय चार्याय च स्वायचारणाय च ।

प्रियोदेवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु।।

यजमान :- सागरस्य यथा वृद्धिर्महालक्ष्यादिभिः कृता।

सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋqद्ध ब्रुवन्तु नः।।

भो विप्राः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य .... कमर्ण ऋद्धि भवन्तो बुर्वन्तु" इति त्रिवारं वदेत्।

विप्राः :- ॐ ऋद्ध्यताम्, ॐ ऋद्ध्यताम्, ॐ ऋद्ध्यताम् ।

ॐ सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्मज्ज्योतिरमृताऽअभूम ।

दिवम्पृथिव्याऽअद्ध्यारुहामाविदामदेवान्त्स्वर्ज्योतिः।

यजमान :- स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा ।

विनायक प्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः।।

भो विप्राः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य .... कमर्ण स्वति भवन्तो बुर्वन्तु" इति त्रिवारं वदेत्।

विप्राः :- ॐ आयुष्मते स्वस्ति, ॐ आयुष्मते स्वस्ति, ॐ आयुष्मते स्वस्ति

ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्ताक्ष्र्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु

यजमान :- ॐ मृकण्डसूनोरायुर्यद् ध्रुवलोमशयोस्तथा।

आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम्।।

विप्राः :- ॐ शतं जीवन्तु भवन्तः।

ॐ शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रानश्चक्रा जरसन्तनूनाम्।

पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्यारीरिषता युर्गन्तोः।।

यजमान :- ॐ शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे।

धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं साऽस्तु सद्मनि।।

विप्राः :- ॐ अस्तु श्रीः।

ॐ मनस: काममाकूतिं वाच: सत्यमशीमहि।

पशूना œ रूपमन्नस्य रसो यश: श्री: श्रयताम्मयि स्वाहा।।

यजमान :- ॐ प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट्।

भगवान् शाश्वतो नित्यं स नो रक्षतु सर्वतः।।

विप्राः :- ''ॐ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम् । (पात्रे जलं क्षिपेत्।) तत्पश्चात भूमि अथवा पात्र में जल छोड़े।/पात्र/मुध्रिं में जल छोड़े

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वारूपाणि परिताबभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽ अस्त्वयममुष्य पितासावस्य पिता व्वय ल स्याम पतयो रयीणा ल स्वाहा।

यजमान :- ॐ आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे ।

श्रिये दत्ताऽऽशिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः।।

देवेन्द्रस्य यथा स्वस्ति यथा स्वस्ति गुरोर्गृहे ।

एकलि यथा स्वस्ति तथा स्वस्ति सदा मम ।।

विप्राः :- ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

ॐ प्रतिपन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम्।

येन विश्वाः परिद्विषो व्वृणक्ति व्विन्दते व्वसु।।

ॐ विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव।।

मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।

शत्रूणां बुद्धि नाशोऽस्तु मित्राणामुदयोऽस्तु नः।।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।

ब्रह्मवक्त्रे स्थिता नित्यं निघ्नन्तु तव शात्रवान्।।

अक्षतान्विप्रहस्तात्तु नित्यं गृह्णन्ति ये नराः।

चत्वारि तेषां वद्र्धन्ते आयुः कीर्तिः यशोबलम्।।

ॐ श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शत सम्वत्सरं दीर्घमायुः।।

कृतेऽस्मिन्पुण्याहवाचने उपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्री गणेशाम्बिकयोः प्रसादाच्च सर्व विधिः परिपूर्णोऽस्तु।

अस्तु परिपूर्णः प्रतिवचनम्।

ततोभिषेक (तत्पश्चात् पात्र में छोड़े गये शेष जल/पुण्याहवाचन पात्र के जल से यजमान का सपरिवार दूर्वा से अभिषेक करे। अभिषेक के समय पत्नी को वामाङ्ग (बायें हाथ) में कर देना चाहिए।)

कर्तुर्वामतः पत्नीं उपविश्य पात्रपातितकलशोदकेन दूर्वाम्रपल्लवैः सपत्नीक यजमानमभिषिञ्चेयुः।

ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।

ॐ योवः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः। उशतीरिवमातरः।।

ॐ तस्म्माऽ अर‘मामवोयस्यक्षयायजिन्नवथ। आपोजनयथाचनः।।

शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्।

पुत्रासो त्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।

यतो यत: समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्न: कुरु प्रजाब्भ्योभयन्न: पशुभ्य:।।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ल शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

व्वनस्प्पतयः शान्तिव्विश्श्वेदेवाः शान्तिब्ब्रह्मशान्तिः सव्र्व ल शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामाशान्तिरेधिŸ।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिरस्तु। यजमान स्वस्थाने उपविश्य हस्ते जलं गृहीत्वा पूजनं कर्तृकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं दक्षिणां दास्ये। (यजमान अपने स्थान पर बैठकर हाथ में जल लेकर ब्राह्मणों को यथोचित दक्षिणा देवे।)

तेन श्री कर्मा‘देवताः प्रीयताम्।

7.6. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को पूजनविधि के अन्तर्गत ब्राह्मणों के वरण की समुचित विधि का ज्ञान होगा। यजमान अभीष्ट कार्यों की सिद्ध के लिए ब्राह्मणों को आमन्त्रित करना तथा अपने कार्यों के सुसम्पादन हेतु ब्राह्मण का आसन, पाद्य अर्थात् पैर धोने का जल के जल देना, अर्घ के द्वारा सम्मान करना, मधुपर्क के द्वारा पुष्टि की कामना करना, तथा पूर्वकृत् पापों का गौदान के द्वारा प्रायश्चित्त करना, आगन्तुक ब्राह्मणों को अपने अभीष्ट कार्य की सिद्धि हेतु कार्य का आग्रह करना तथा उनका यथोचित द्रव्यादि से सम्मान करना तथा पुण्याहवाचन के अन्तर्गत ब्राह्मणों द्वारा अपने और अपने परिवार के लिए पुण्य-कल्याण-ऋद्धि-स्वस्ति आदि की कामना हेतु ब्राह्मणों से आशीर्वचन ग्रहण करना आदि इस इकाई में समाहित है।

7.7. शब्दावली

1. विष्टर = 25 कुशाओं का आसन-विशेष
2. साधु = सज्जन
3. पाद्यपात्र = पैर धोने का जल पात्र
4. तृण = तिनका

5. मधुपर्क = दही, शहद व घी का मिश्रण

6. ब्राह्मण = ब्रह्म को जानने वाला

7. विप्र = वेदपाठ करने वाला

8. यजमान = पूजन करने वाला कर्ता

9. अक्षत = चावल

10. वरण = नियुक्त करना

7.8. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : विष्टर कितनी कुशाओं से निर्मित होता है ?

उत्तर : विष्टर पच्चीस (25) कुशाओं से निर्मित होता है।

प्रश्न - 2 : अर्घ्यपात्र की सामग्री का उल्लेख करिये ?

उत्तर : अर्घ्यपात्र की सामग्री - दधि-दूर्वा-कुशाग्र-पुष्प-अक्षत-कुंकुम-दक्षिणा-सुपारी मिश्रित जल।

प्रश्न - 3 : मधुपर्क की सामग्री का उल्लेख करिये ?

उत्तर : मधुपर्क की सामग्री - दही, शहद व घी।

प्रश्न - 4 : कलशस्थापन में किस देवता का पूजन किया जाता है ?

उत्तर : कलशस्थापन में वरुण देवता का पूजन किया जाता है।

प्रश्न - 5 : पुण्याहवाचन में यजमान ब्राह्मणों से आशीर्वचन में क्या अपेक्षा करता है ?

उत्तर : पुण्याहवाचन के अन्तर्गत यजमान ब्राह्मणों द्वारा अपने और अपने परिवार के लिए पुण्य-कल्याण-ऋद्धि-स्वस्ति-दीर्घायु-वंशवृद्धि आदि की कामना करता है।

7.9. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : ब्राह्मणवरण के अन्तर्गत विष्टर-पाद्य-अर्घ्य-आचमन-मधुपर्क की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 2 : यजमान द्वारा ब्रह्मा, आचार्य व ऋत्विग् के प्रति की जाने वाली प्रार्थना का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 3 : कलशस्थापना की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 4 : पुण्याहवाचन में ब्राह्मणों को दी जाने वाली सामग्री की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 5 : पुण्याहवाचन में ब्राह्मणों द्वारा उच्चारित पुण्य-कल्याण-ऋद्धि-स्वस्ति-दीर्घायु-वंशवृद्धि के मन्त्रों का उल्लेख कीजिये ?

7.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. विवाह संस्कार - द्वितीय संस्करण सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - हंसा प्रकाशन, जयपुर।
2. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
3. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर
4. कर्मठगुरु:लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
5. मन्त्रमहोदधि सम्पादक - श्रीशुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन वाराणसी।

इकाई — 8

अग्नि स्थापन एवं नवग्रह

इकाई की रूपरेखा

8.1. प्रस्तावना

8.2. उद्देश्य

8.3. विषय प्रवेश

8.4. कुशकण्डिका

8.5. नवग्रह पूजन

8.6. पञ्चदेव पूजन

8.7. सारांश

8.8. शब्दावली

8.9. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

8.10. लघुत्तरीय प्रश्न

8.11. सन्दर्भ ग्रन्थ

8.1. प्रस्तावना

अग्नि पूजन अथवा आराधना प्राचीनकाल से प्रचलित है अग्नि के द्वारा ही देवताओं की पुष्टि के लिए हविष्यान पहुंचाया जाता है। अग्नि को सभी देवों ने आग्रगण्य एवं पवित्र माना है। जिसके माध्यम से विष्णु इन्द्र, रूद्रादि देवों के लिए अन्न प्रदान किया जाता है। कार्य के अनुसार अग्नि विविध विविध नामों से जानी जाती है।

ग्रहशान्तिप्रकरण में अग्नि स्थापन एवं नवग्रह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। लोकाचार के अनुसार कर्मकाण्ड़ का क्रम भिन्न-भिन्न (प्रमुखतया जयपुरीक्रम एवं काशीय क्रम) हो सकता है, परन्तु विधान वही रहता है। अग्नि स्थापन के पश्चात् ग्रह-स्थापन का क्रम आता है। ग्रह मनुष्य के जीवन को जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त प्रभावित करते है। ग्रहों की कृपा तो मनुष्य को सदैव चाहिए। यदि कुण्ड ली में ग्रह निर्बल है, तो उनकी पुष्टि के लिए ग्रहपूजन किया जाता है तथा यदि कुण्ड ली में पुष्ट है तो उनकी शुभता को बढ़ाने के लिए भी ग्रहपूजन किया जाता है। ग्रहों का प्रभाव साक्षातां् मनुष्य पर पड़ता है। उदाहरणतया हम देख सकते है पूर्णिमा के दिन जब चन्द्रमा पूर्णकलाओं से युक्त होता है, तो समुद्र में ज्वार, मानसिक रोगी की उद्विग्रता में वृद्धि आदि कई परिवर्तन देखने में आते है। इस इकाई में सभी जिज्ञासुओं को ग्रहशान्ति प्रकरण के अन्तर्गत अग्निस्थापन एवं ग्रहपूजन के साथ-साथ अपने जीवन में आये कष्टों के निवारण अथवा अशुभ समय के ताप को कम करने हुए ग्रहों के विभिन्न पूजनक्रम एवं हवनादि क्रम शास्त्रों ने बताये है। मान्यता है कि हवनक्रम में अग्निस्थापन के पश्चात् सूर्यादि ग्रहों का अर्चन किया जाना चाहिए। हवन हेतु स्थण्ड़िल अथवा का कुण्ड का निर्माण आवश्यक है। सामान्यत: कुण्ड एक हाथ अर्थात् 24 अङ्गुलात्मक (18 इन्च) चतुरस्र बनाना चाहिए।

8.2. उद्देश्य

1. अग्निस्थापन की विधि का छात्रों को ज्ञान होगा।

2. नवग्रहों के विभिन्न मन्त्रों का ज्ञान

3. ग्रहों के पूजन में पारङ्गत ।

8.3. विषय प्रवेश

पंचभूसंस्कारा: (कुण्डे स्थंडिले वा) :

होमे कुण्ड़ाभावे बालुकाभि: समेखलं स्थण्डिलं (होमसंख्यानुसारेण) एकहस्तात्मकं (हस्त चतुर्विंशाङ्गुलात्मकम्) द्विहस्तात्मकं वा कुर्यात। (यथोचित कुण्ड अथवा स्थण्ड़िल का निर्माण करे ।)

गौरसर्षपान् विकिरयेत् (पीली सरसों का विकिरण करे।) -

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा: सर्वतो दिशम्।

सर्वेषामवरोधेन हवनकर्म समारभे।।

पवित्रीकरणम् (कुण्ड अथवा स्थण्ड़िल का जल से प्रोक्षण करे) :-

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तान ऽऊर्ज्जेदधातन .... 0।।

1. परिसमूहनम् - कनिष्ठाङ्गुष्ठमध्यत: मूलधृतैस्त्रिभिर्दर्भाग्रै: दक्षिणत: उदक्संस्थं त्रि: परिसमुह्य। (कुशों से वेदी को साफ करें)

तान्कुशानैशान्यां परित्यजेत्।(उस कुशों को ईशान कोण में फेंक दे।)

2. गोमयोदकेन उपलेपनम् - दक्षिणत: उदक्संस्थं गोमयो-दकेन त्रिरुपलेपयेत्। (वेदी के उपर गोबर तथा जल से लेप करे)

3. उल्लेखनम् - स्रुवमूलेन द्वादशाङ्गुला प्रागग्रा तिस्रो रेखा: उल्लेखयेत्। (श्रुवा के मूल भाग से तीन रेखा खीचे)

4. उद्धरणम् - प्रतिरेखात: अंगुष्ठानामिकाभ्यां अंगुष्ठात् अनामिकापर्यन्तं त्रिवारं पांसूनुद्धृत्य।

ऐशान्यां परित्यजेत्।

5. अभ्युक्षणम् - प्रतिरेखां न्युब्जमुष्टिना प्राजापत्यतीर्थेन उदकेन त्रिरभ्युक्षेत।

8.4. कुशकण्डिका

सर्वप्रथम चौसठ (64) कुशापात्र ले। इनमें से सोलह कुशा लेकर अग्निकोण से ईशानकोण तक वेदी के पास रखे। फिर सोलह कुशाएँ नैऋर्त्यकोण से वायव्यकोण तक फैला देवे। इसके पश्चात् अग्नि के उत्तरभाग से पश्चिम दिशा में तीन कुशा और दो कुशा पवित्री के लिए स्थापित करे। अब प्रोक्षणीपात्र, घी के लिए भगोनी अथवा कचौला रखे। फिर स्रुवा, पोंछने के लिए तीन कुशाएँ, हाथ में रखने के लिए तीन कुशाएँ, तीन समिधाएँ, घी, चावलों के पूर्ण पात्र पूर्व-पूर्व क्रम से रखे। पवित्री के लिए रखे गये दो कुशापात्रों को आगे से आठ अङ्गुल नाप

कर तीन कुशाओं से तोड़ लेवे और आगे के कुशापात्रों से पवित्री बनाकर धारण करके इसी पवित्री से युक्त हाथ से प्रणीता के जल को तीन बार प्रोक्षणीपात्र में डालें। फिर अनामिका एवं अङ्गुष्ठ से पवित्री ग्रहण करके जल को तीन बार ऊपर की ओर उछालें। फिर प्रणीता का जल प्रोक्षणी में मिलावे । इसके बाद प्रोक्षणी पात्र स्थापित करके घृत के पात्र में घृत डाले। घी के पात्र को अग्नि पर गर्म करे। फिर कुशा को जलाकर घी ऊपर घुमाकर अग्नि में छोड़ देवे। इसके बाद अधोमुख स्रुवा को अग्नि पर गर्मकरके सम्मार्जन हेतु रखे। फिर तीन कुशाओं को लेकर उन के अग्रभाग से स्रुवा के भीतरी एवं मूल भाग से स्रुवा के मूल में बाहर से पोंछकर प्रणीता के जल से स्रुवा को सींचे। पुन: स्रुवा को तपावें और उसे दक्षिण की त रफ रख देवे, तत्पश्चात् घी के पात्र को अग्नि के ऊपर से हटाकर जैसे प्रोक्षणी में से उछाला गया था वैसे ही कुशा से उछालकर उसमें यदि तृण, लोम, कीट आदि कोई वस्तु यदि गिर गयी हो तो उसे निकालकर प्रोक्षणी के समान घी उछाले। फिर उपयमन हेतु रखे हुए तीन कुशा लेकर खड़े होकर ब्रह्मा का मन में स्मरण करते हुए घी युक्त तीन समिधाओं को अग्नि में छोड़े, फिर बैठकर अग्नि के चारों ओर तीन बार जलसिञ्चन करे, तत्पश्चात् दाहिना घुटना मोड़कर ब्रह्मा से अपने तक कुशा रखकर प्रज्वलित अग्नि में स्रुवा से घी की आहुति दे तथा स्वाहा कहते ही अग्नि में आहुति देव और इदम् कहते ही प्रोक्षणी पात्र में शेष घी डाल देवे।

दक्षिणतो ब्रह्मासनम्। (वेदी/कुण्ड के दक्षिण दिशा में ब्रह्मा का आसन लगायें ।)

तदुपरि प्रागग्रान् कुशानास्तीर्य तदुपरि ब्रह्माणम्ं स्थापयेत् । पूजयेत । (उत्तर की ओर कुशा का अग्रभाग रखते हुए उस पर ब्रह्मा की स्थापना करके गन्धादि से पूजन करे।)

प्रार्थयेत् :-

यावत्कर्म समाप्ति: स्यात् तावत्त्वं ब्रह्मा भव। (कार्य की समाप्ति पर्यन्त पूजन-स्थल पर ब्रह्मा से स्थिर रहने की प्रार्थना करे।)

उत्तरत: प्रणीतासनम्ं - (उत्तर की ओर प्रणीता व प्रोक्षणी-पात्र की स्थापना करे ।)

मृण्मयं वा प्रणीतापात्रं त्रिवारं वारिणापूर्य्य। (तीन बार जल डाले)

ऊँ प्रणय ऊँ प्रणय ऊँ प्रणय,

ब्रह्मांणो मुखमवलोक्य आलभ्य वा । (ब्रह्माजी को उपयमनकुशा से स्पर्श करे)

परिस्तरणम् -

ततः बर्हिष चतुरोभागान्विधायैकैकभागेन चतुर्दिक्षु अग्रेण मूलमाच्छाद्य वारत्रयं परिस्तरेत् :- (बर्हिष के चार भाग करके एक-एक भाग से वेदी/कुण्ड की परिधि पर कुशाओं से परिस्तरण करे आच्छादित करे।)

1. आग्नेयादीशान्तम्। (अग्निकोण से ईशानकोण तक)
2. ब्रह्मणोऽग्निं पर्यन्तं (ब्रह्मा से अग्निकोण तक)
3. नैऋत्यादि वायव्यान्तं (नैऋत्य से वायव्य तक)
4. अग्नितः प्रणीतापर्यन्तम्। (अग्निकोण से प्रणीतापात्र तक)

पात्रसादनम्। (प्रणीता, प्रोक्षणीपात्र तथा घी का पात्र, खीर बनाने का पात्र, उपयमन कुशा, तीन समिधा, नवग्रह-समिधा, स्रुवा, स्रुची, शुद्ध घी, चावल, पूर्णपात्र, तिल-जौ आदि हवनीय सामग्रियों को एकत्रित करके वेदी/कुण्ड के पास क्रमशः रखे तथा बायें हाथ में प्रोक्षणीपात्र लेकर दो पत्र की कुशा से शुद्ध जल से प्रोक्षण करते हुए पवित्र करे।) :-

अग्नेरुत्तरतः पश्चिमदिशि कुशोपरि पवित्रच्छेदनानि त्रीणि तृणानि, पवित्रे द्वे, प्रोक्षणीपात्रम् आज्यस्थाली, चरुस्थाली, सम्मार्जनकुशा पञ्च त्रीणि वा उपयमन कुशाः सप्त, समिधः तिस्रः, स्रुवः, स्रुक्, आज्यं, तण्डुलाः, पूर्णपात्रम्, तिल-यव, ग्रहसमिध अन्यद् हवनीयं च आसादयेत् - ततः कुशद्वयं प्रादेशमात्रं वामहस्ते धृत्वा तत्र कुशत्रयं दक्षिणहस्तेन कुशद्वयोपरि निधाय, कुशद्वयं कुशत्रयोपरि प्रदक्षिणीकृत्य छिन्द्यात्। कुशपत्रद्वयं ग्राह्यम्, कुशत्रयमुत्तरतः क्षिपेत्।

प्रोक्षणीसंस्कारः (प्रणीता-पात्र के जल से निम्न प्रकार प्रोक्षण करे) :-

प्रणीतासन्निधौ प्रोक्षणीपात्रं निधाय, सपवित्रहस्तेन त्रिः प्रणितोदकमासिच्य अनामिकाङ्गुष्ठभ्यामुत्तराग्रे पवित्रे धृत्वा त्रिरुत्पवनम्।

ततः प्रोक्षणीपात्रं सव्यहस्ते कृत्वा अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां सपवित्रं हस्तेन त्रिरुदिङ्गनम्(जलोच्छालनम्)।

आसादितद्रव्याणि प्रोक्षणं कृत्वा अग्निप्रणीतयोर्मध्ये प्रोक्षणीपात्रं निदध्यात्।

अधिश्रयणम् (घी के पात्र को यथास्थान रखकर चावल को तीन बार प्रणीता के जल से धोकर अग्नि के मध्य में खीर का पात्र रखे तथा दक्षिण की ओर घी के पात्र को रखे) :-

आज्यस्थाल्यामाज्यं निर्वाप्य, चरुस्थाल्यां तण्डुलान् त्रि: प्रक्षाल्य,

प्रणीतोदकेनआसिंच्य, अग्निमध्ये चरुं दक्षिणे आज्यं च निदध्यात्।

स्रुव-संस्कार: (प्रणीता के जल से स्रुवादि का प्रोक्षण करे तथा बनी हुई खीर व पिघले हुए घी को निरीक्षण करके यथास्थान रखे, बायें हाथ में उपयमन कुशा तथा दाहिने हाथ में तीन समिधा को लेकर अग्नि में "समिधौ व्याधाय मन्त्र से अग्नि में छोड़े। प्रोक्षणी के जल को वेदी/कुण्ड के अग्निकोण से प्रारम्भ करके ईशान से प्रणीता पात्र तक जल गिरायें तथा वायव्यकोण में (संस्रव हेतु) स्थापित करे) :-

अधोमुखस्रुवं त्रि: प्रतप्य वामकरे उत्तानं कृत्वा, दक्षिणकरेण संमार्जनकुशाग्रैर्मूलतोऽग्रपर्यन्तं, मूलैर्बाह्यत: संमृज्य, प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्य, पुन: प्रतप्य दक्षिणत: कुशोपरि निदध्यात् । तत: आज्यं चरो: पूर्वेणानीय अग्रे धृत्वा, आज्य पश्चिमेन चरुमानीय, आज्यस्योत्तरतो निदध्यात् । पवित्राभ्यामाज्योत्पवनम् । अपद्रव्यनिरसनम्। पुरतो निदध्यात्। पवित्रयो: प्रोक्षणी पात्रे निधानम्। उपमयनकुशान्। वामकरे गृहीत्वा तिस्रो घृताक्ता: पालाश्य: समिधादाय प्रजापतिं मनसा ध्यात्वा उत्थाय ॐ समिधोऽभ्याधाय स्वाहा इत्यग्रौ क्षिपेत्। तत: उपविश्य दक्षिण चुलुकगृहीतेन सपवित्रेण प्रोक्षण्युदकेन अग्रे ईशानादारभ्य ईशानपर्यन्तं प्रदक्षिणाक्रमेण पर्युक्षणम् इतरथावृत्ति:। पवित्रे प्रणीतापात्रे निधाय संश्रवधारणार्थं प्रोक्षणीपात्रं प्रणीताग्न्योर्मध्ये वायव्ये वा संस्थाप्य।

अग्निस्थापनम् – (अग्नि की स्थापना करें**)**

कांस्यपात्रस्थं निर्धूमवह्निं द्वितीयपात्रेण पिहितं कुण्डे/स्थण्ड़िले वा(स्थण्डिलाद्) बहिराग्नेयां दिशि निधाय। क्रव्यादांशं नैऋत्यां दिशि परित्यज्य।

अग्निं संस्थाप्य-

ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य।

त्रिधा बद्धो व्वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या आविशेष।।

अथ दक्षिणजानुं पातयित्वोपविष्टो, हृदि सव्यहस्तं दत्त्वा ब्रह्मणान्वारब्ध: स्रुवेणाज्यं जुहुयात्।

1. ऊँ प्रजापतये स्वाहा (मनसा) इदं प्रजापतये न मम।

2. ऊँ इन्द्राय स्वाहा इदं इन्द्राय न मम।

3. ऊँ अग्नये स्वाहा इदं अग्नये न मम।

4. ऊँ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम।किंचित्घृतं प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेप।

अग्निपूजनम् :- (अग्नि का पूजन करे इस मंत्र के द्वारा)

ऊँ अग्निन्दूतम्पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवा2 ॥ऽ आसाद-यादिह ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... अग्नये नम:॥ गन्धादिभि: सम्पूज्य ।

विविध कर्मों में आवाहित अग्नियों के नाम :-

कर्म	**अग्नि**	**कर्म**	**अग्नि**
1. गर्भाधान	मरुत	2. पुंसवन	पवमान्
3. सीमन्त	मङ्गल	4. जातकर्म	प्रबल
5. नामकरण	पार्थिव	6. अन्नप्राशन	शुचि
7. चौल	सव्य	8. व्रतबन्धन	समुद्भव
9. गौदान	सूर्य	10. विवाह	योजक
11. आवस्थ्य	द्विज	12. वैश्वदेव	रुक्मक:
13. प्रायश्चित	विटप	14. पाकयज्ञ	पावक

15. देवकर्म	हव्य	16. पितृकर्म	कव्य
17. शान्तिकर्म	वरद	18. पौष्टिककर्म	बलवर्द्धन
19. पूर्णाहुति	मृड़	20. अभिचारकर्म	क्रोध
21. वश्यकर्म	कामद	22. वनदाहक	दूषक
23. पाचनकर्म	जठर	24. मृतदाह	क्रव्याद
25. लक्षहोम	वह्नि	26. कोटिहोम	हुताशन
27. वृषोत्सर्ग	अध्वर	28. पवित्रता	ब्राह्मण
29. समुद्र	वाड़व	30. क्षय	सम्वर्त्तक
31. ब्रह्मकर्म	गार्हपत्य	32. ईश्वरकर्म	दक्षिणाग्नि
33. विष्णुकर्म	आवाहन	34. चण्डीकर्म	शतमङ्गल।

वरुणाहुतिः :- (इस मंत्र को पढ़ते हुए घी का आहुती देवे)

1. ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि स्वाहा।
2. ॐ व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्थो स्वाहा।
3. ॐ व्वरुणस्य ऽऋतसदन्यसि स्वाहा।
4. ॐ व्वरुणस्य ऽऋतसदनमसि स्वाहा।
5. ॐ व्वरुणस्य ऽऋतसदनमासीद स्वाहा। अनेन हवनेन वरुण: प्रीयताम्।

8.5. नवग्रह पूजन

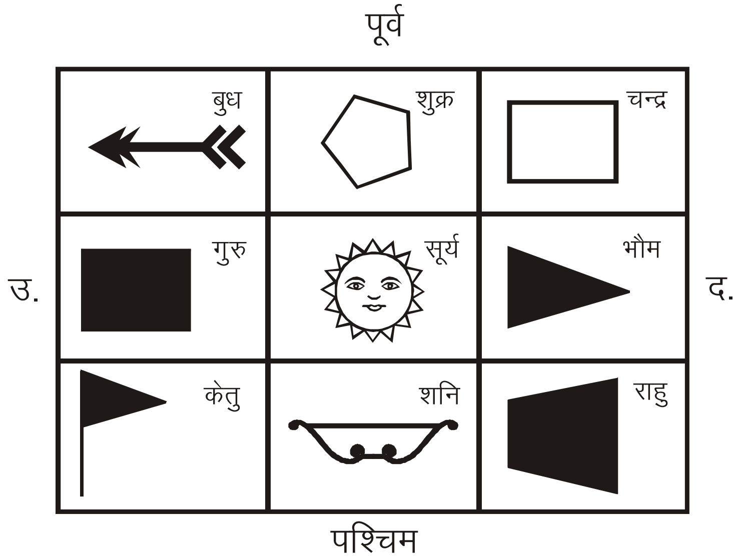

बायें हाथ में अक्षत लेकर दायें हाथ से अक्षत समर्पित करते हुए नवग्रहों की पूजा करे :-

सूर्य :-

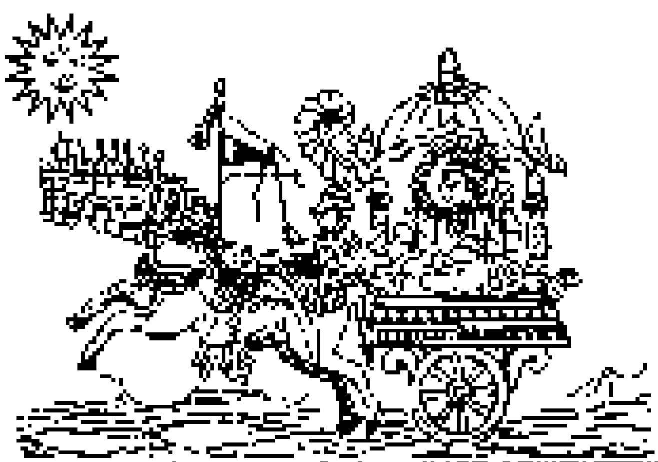

कलिङ्गोद्भूतं त्वां द्विभुजमरुणच्छत्रमरुणं

ग्रहाध्यक्षं सप्ताश्वरथमधिरूढं सकरुणम।

सहस्रांशु सूर्यं धृतजनिममुं कश्यपकुले

ह्वयामो राजन्यं वरद मखमेह्येहि भगवन ।।1।।

हिन्दी :- कलिङ्ग देश में उत्पन्न, दो भुजा वाले, लालछत्र से युक्त, लालशरीर वाले, ग्रहों के अध्यक्ष, सातअश्वो से युक्त, रथ पर आरुढ़, करुणा से युक्त, सहस्रों किरणों वाले, कश्यपकुल में जन्म लेने वाले क्षत्रिय, हे भगवन्! हम आपका आवाहन करते है, यहाँ यज्ञ में पधारो, वरदान दो ।

जपाकुसुमसाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च ।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: सूर्याय नम:, मध्ये सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।

चन्द्रमा :-

इमं देवं चन्द्रं हरिणमधिरूढं रसनिधिं

गदापाणिं मुक्तास्रजमिनसुतातीरविषयम।

ह्वयाम: सद्गोत्रे सुरजननुतात्रेर्द्विजकुले,

समुद्भूतं'देव! त्वमिहमखभुव्येहि भगवन ।।2।।

हिन्दी :- हरिण पर सवार, समस्त रसों के स्वामी, हाथ में गदा धारण करने वाले, खुले केशवाले, देवताओं द्वारा प्रणत, अत्रि ऋषि के ब्राह्मणकुल में सद्गोत्र में उत्पन्न हे चन्द्रदेव! आप यहाँ यज्ञभूमि में पधारें।

दधिशङ्कतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्।

ज्योत्स्नापqत निशानाथं सोममावाहयाम्यहम् ।।

मन्त्र :- ऊँ इमन्देवा ऽ असपत्न œ सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ।

इमममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना œ राजा ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: चन्द्रमसे नम:, आग्नेयां चन्द्रमसमावाहयामि स्थापयामि।

मङ्गल :-

कुमारं शत्रुघ्नंधरणिसुतमारक्तवपुषं

कुले भारद्वाजे धृतजनिमवन्त्यामृषिनुतम।

गदां शूलं शक्तिं वरमिह वहन्तं निजभुजै

र्ह्वयामोऽचार्थं भो कुज मखमुपेह्येहि भगवन्।।3।।

हिन्दी :- पृथ्वी के पुत्र, लालशरीर वाले, शत्रुओं का विनाश करने वाले, भारद्वाज कुल में अवन्ती नगरी में जन्म लेने वाले, ऋषियों के द्वारा नमस्कृत, चार भुजाओं में गदा, शूल, शक्ति, वरमुद्रा धारण करने वाले हे कुजदेवता! हम पूजन के लिए आपका आवाहन करते है, इस यज्ञभूमि में पधारकर हमें वर प्रदान करे ।

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजसमप्रभम्।

कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ऊँ अग्निर्मूर्द्धादिव: ककुत्पति: पृथिव्या ऽ अयम्। अपा œ रेता œ सिजिन्वति ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: भौमाय नम:, दक्षिणे भौममावाहयामि स्थापयामि।

बुध :-

गदां खड्गं खेटं वरमपि दधानं निजकरै

मुंदा शार्दूलस्थं हरितवसनं हेमवपुषम्।

वणिग्वर्णं देवं मगधभवमात्रेयसकुलं,

ह्वयामोऽर्चार्थं भो बुध मखमुपेह्येहि भगवन ।।4।।

हिन्दी :- चार भुजाओं में गदा, खड्ग, खेट और वरमुद्रा धारण करने वाले, सिंह पर प्रसन्नमुख होकर स्थित, हरे वस्त्र धारण किये हुए, स्वर्ण के समान शरीर वाले वैश्यवर्ण, मगध देश में उत्पन्न, आत्रेयकुल में जन्म लेने वाले हे बुध देवता! आपको पूजन के लिए आवाहन करते है, हे भगवन! यज्ञ में पधारो।

प्रियुकलिकाभासं रूपेणाप्रतिमं बुधम्।

सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ऊँ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स0e सृजेथा मयञ्च।

अस्मिन्त्सधस्थे ऽ अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।

ऊँ भूर्भुव: स्व: बुधाय नम: , ईशाने बुधमावाहयामि स्थापयामि।

गुरु :-

कमण्डल्वक्षस्रग्वर रुचिरदण्डान् निजकरै-

र्दधानं हेमाभं सुविमलमतिं सिन्धुविषयम्।

हयारूढं विप्राङ्गिरसकुलरत्नं सुरगुरुं

ह्वयामस्त्वां भक्त्या मखभुवमुपेह्येहि भगवन्।।5।।

हिन्दी :- कमण्डलु, रुद्राक्षमाला, वरमुद्रा और सुन्दरदण्ड अपने हाथों में धारण किये हुए स्वर्ण की आभावाले, सुन्दर विमल बुद्धि से युक्त, समुद्र के समान विशाल, अश्व पर आरुढ़, अङ्गिरस के ब्राह्मण कुल में रत्नस्वरूप देवताओं के गुरु हम तुम्हें भक्तिपूर्वक बुलाते है, हे भगवन! यज्ञभूमि में पधारे ।

देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसन्निभम्।

वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- **ॐ बृहस्पते ऽ अति यदर्यो ऽ अर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु।**

द्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गुरवे नम: , उत्तरे गुरुमावाहयामि स्थापयामि ।

शुक्र :-

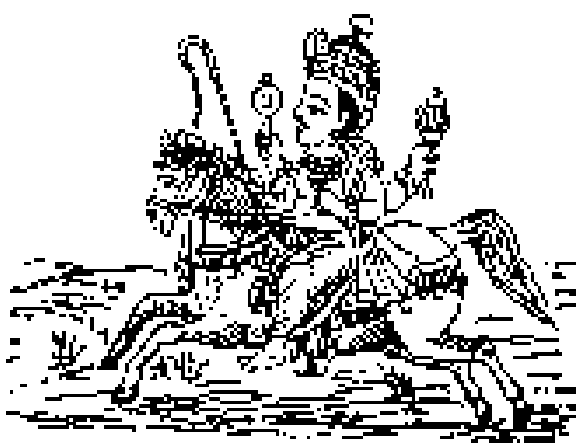

समुत्पन्नं पुण्ये भृगुमुनिकुले भोजकटके

कमण्डल्वक्षस्रग्वर परिघहस्तं स्मितमुखम ्।

द्विजं दैत्याचार्यं धवलहययानं खगमनं

ह्वयामोऽर्चार्थं त्वां मखभुवमुपेह्येहि भगवन ।।6।।

हिन्दी :- पुण्यों से युक्त, भृगुऋषि के कुल में उत्पन्न, भोजकटक देश में जन्मलेने वाले, कमलण्डलु, रुद्राक्षमाला, वरमुद्रा और परिघ हाथ में लिए हुए प्रसन्नमुख ब्राह्मणवर्ण, दैत्यों के आचार्य, श्वेत अश्व पर विराजमान, आकाश में गमन करने वाले, हम आपका पूजन के लिए आवाहन करते है, हे भगवन शुक्र! यज्ञभूमि में पधारे।

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्।

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- **ऊँ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पय: सोमं प्रजापति:।**

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान œ शुक्रमन्धस ऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतम्मधु।।

ऊँ भूर्भुव: शुक्राय नम:, पूर्वे शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।

शनि :-

शनिं कृष्णं कृष्णाजिनधरमथादित्यतनयं

त्रिशूलेष्विष्वासान् वरमिहवहन्तं निजभुजैः।

प्रजातं सौराष्ट्रे दुरितशमनं गृध्रगमनं,

ह्वयामो मन्दारं वरद मखमेह्येहि भगवन्।।7।।

हिन्दी :- काले वर्ण वाले, काले मृग का चर्म धारण करने वाले, आदित्य (सूर्य) भगवान के पुत्र, त्रिशूल, बाण, धनुष, प्रवरमुद्रा, धारण करने वाले, सौराष्ट्र में उत्पन्न, समस्त दुरित (अशुभफल) का शमन करने वाले, गृध्र पर गमन करने वाले, मन्दगति से चलने वाले हे शनिदेव! हम आपका आवाहन करते है, हे भगवनां! यज्ञभूमि में आओ और हमे वर दो।

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।

छायामार्त्तण्ड सम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ॐ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँयोरभिस्रवन्तुनः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः शनैश्चराय नमः, पश्चिमे शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि।

राहु :-

करालास्यं राहुं मृगपतिरथारूढमसितं

सुरैरर्च्यं पैठीनसकुलमणिं बर्बरभवम ।

विवस्वद्राकेशग्रसनरसिकं कायरहितं

ह्वयामस्त्वां राहो! वरद! मखमेह्येहि भगवन।।8।।

हिन्दी :- कराल-विकराल मुखवाले, सिंह के रथ पर विराजमान, कृष्णवर्ण, देवताओं द्वारा पूज्य, पैठीनस कुल के मणि, बर्बर देश में उत्पन्न, सूर्य और चन्द्रमा को ग्रसने के प्रेमी, शरीर से रहित हे राहु! हम तुम्हारा आवाहन करते है, आप यहाँ यज्ञभूमि में पधारे और हमे वर दे।

अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्द्दनम्।

सहिकागर्भसम्भूतं राहुमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ॐ कयानश्चित्रऽआभुवदूती सदावृध: सखा। कयाशचिष्ठया व्वृता।।

ॐ भूर्भुव: स्व: राहवे नम:, नैऋत्यां राहुं आवाहयामि स्थापयामि।

केतु :-

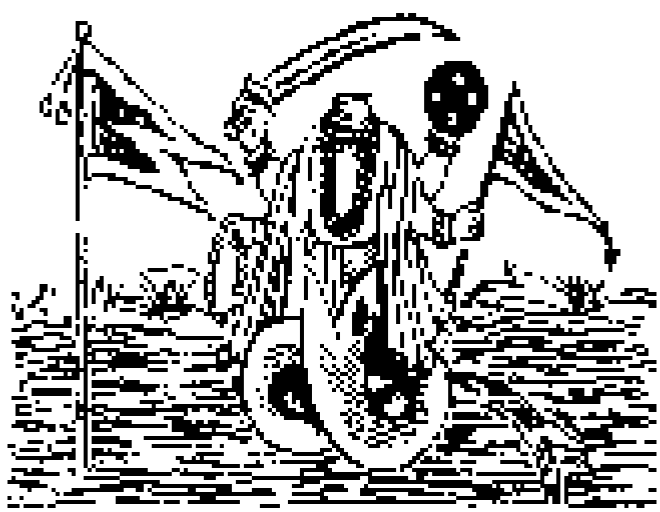

महाकायं केतुं भगणदलनं जैमिनिकुलं,

कपोतस्थं धूम्रं मलयगिरिजातं भयहरम्,

करालं नीलाभध्वजवरकरं चित्रवसनं,

ह्वयामस्त्वां केतो वरद मखमेह्येहि भगवन ।।9।।

हिन्दी :- महान् शरीर वाले, राशियों के समूह का दलन करने वाले, जैमिनी कुल में उत्पन्न, कबूतर पर स्थित, धुएँ के समान वर्ण वाले, मलयपर्वत पर उत्पन्न, भयहरण करने वाले, विकराल, नीलेवर्ण का ध्वज और वरमुद्रा हाथ में लिए हुए विचित्र वस्त्रों को धारण करने वाले हे केतु! हम तुम्हारा आवाहन करते है भगवन आप यज्ञभूमि में पधारे और हमे वर दे।

पलाशधूम्रसाशं तारकाग्रहमस्तकम्।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ऊँ केतुं कृण्णवन्नकेतवे पेशो मा ऽ अपेशसे। समुषद्भिरजायथा:।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: केतवे नम: , वायव्यां केतुमावाहयामि स्थापयामि।

नमोऽस्तु वो ग्रहा: सर्वे इहागच्छत तिष्ठत।

ईशान पूर्वयोर्मध्ये गृह्यतां मम पूजनम्।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: नवग्रहेभ्यो नम:।

8.5.1. अधिपति देवानां पूजन :-

01. ऊँ भूर्भुव: स्व: ईश्वराय नम:। ईश्वरम् आवाहयामि स्थापयामि।

02. ऊँ भूर्भुव: स्व: उमायै नम:। उमा आवाहयामि स्थापयामि।

03. ऊँ भूर्भुव: स्व: स्कन्दाय नम:। स्कन्दमावाहयामि स्थापयामि।

04. ऊँ भूर्भुव: स्व: विष्णवे नम:। विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि।

05. ऊँ भूर्भुव: स्व: ब्रह्मणे नम:। ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि।

06. ऊँ भूर्भुव: स्व: इन्द्राय नम:। इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि।

07. ऊँ भूर्भुव: स्व: यमाय नम:। यम आवाहयामि स्थापयामि।

08. ऊँ भूर्भुव: स्व: कालाय नम:। काल आवाहयामि स्थापयामि।

09. ऊँ भूर्भुव: स्व: चित्रगुप्ताय नम:। चित्रगुप्तं आवाहयामि स्थापयामि।

8.5.2. प्रत्याधिपति देवानां स्वाहाकार :-

01. ऊँ अग्नये नम:। अग्निम् आवाहयामि स्थापयामि।

02. ऊँ अद्भ्य: नम:। अद्भ्य: आवाहयामि स्थापयामि।

03. ऊँ धरायै नम:। धरामावाहयामि स्थापयामि।

04. ऊँ विष्णवे नम:। विष्णुं आवाहयामि स्थापयामि।

05. ऊँ इन्द्राय नम:। इन्द्रं आवाहयामि स्थापयामि।

06. ऊँ इन्द्राण्यै नम:। इन्द्राणी आवाहयामि स्थापयामि।

07. ऊँ प्रजापतये नम:। प्रजापतिम् आवाहयामि स्थापयामि ।

08. ऊँ नागेभ्य: नम:। नाग आवाहयामि स्थापयामि।

09. ऊँ ब्रह्मांणे नम:। ब्रह्माणम आवाहयामि स्थापयामि ।

8.6. पञ्चदेव पूजन

ब्रह्मा :-

अक्षमालां श्रुवं चैव धारयन्तं कमण्डलुम्।

पद्मासनस्थं जटिलं विधिमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ऊँ ब्रह्मज्ञानम्प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत: सुरुचोव्वेनआव:।

सबुध्न्याऽ उपमाऽ अस्यविष्ठा: सतश्चयोनिमसतश्च व्विव:।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: ब्रह्मणे नम:, ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ।

विष्णु :-

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम्।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम्।

मन्त्र :- ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपाœ सुरे स्वाहा।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: विष्णवे नम:, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि ।

शिव :-

पञ्चवक्त्रं वृषारूढं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्।

खट्वा‘धारिणं वन्द्यं शिवमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- ऊँ नम: शम्भवाय च मयोभवाय च नम: शङ्कराय च मयस्कराय

च नम: शिवाय शिवतराय च ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: शिवाय नम:, शिवमावहयामि स्थापयामि।

लक्ष्मी :-

अक्षसूत्रं च कमलं दर्पणं च कमण्डलुम्।

हस्तेषु धारयन्तीं तामुमामावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- **ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।**

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ॐ भूर्भुव: स्व: लक्ष्म्यै नम:, लक्ष्मीमावाहयामि स्थापयामि।

सरस्वती :-

प्रणवस्यैव जननीं रसनाग्रस्थितां सदा।

प्रगल्भदात्रीं चपलां वाणीमावाहयाम्यहम्।।

मन्त्र :- **ॐ पञ्चनद्य: सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतस:।**

सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्।।

ॐ भूर्भुव: स्व: सरस्वत्यै नम:, सरस्वतीमावाहयामि स्थापयामि।।

रुद्रकलश - **ईशानकोण में ताँबे का या मिट्टी का कलश स्थापित करे :-**

मन्त्र :- **ॐ असंख्याता सहस्राणिरुद्राऽअधिभूम्याम्।**

तेषा œ सहस्रयोजनेव धन्वानितन्मसि।

ॐ भूर्भुव: स्व: असंख्यातरुद्रेभ्यो नम:, असंख्यातरुद्रान् आवाहयामि स्थापयामि।।

इस मन्त्र से रुद्रकलश पर अक्षत चढ़ाएँ।

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञœ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामो 3 म्प्रतिष्ठ ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: आदित्यादिनवग्रहा: ब्रह्मादिपञ्चदेवा: रुद्रकलशे असंख्यातरुद्राय नम:। सुप्रतिष्ठिता: वरदा: भवन्तु।

यथोचित विविध मन्त्रों से/मैत्रसूक्त द्वारा पृथक्-पृथक् षोड़शोपचार पूजन करें।

॥ अथ मैत्रसूक्त ॥

॥ हरि: ॐ ॥

व्विभ्भ्राड्बृहत्त्पिबतु सोम्म्यम्मद्ध्वायुर्द्दधद्द्यज्ञपतम्वविह्रु तम्।

व्वातजूतो योऽअभिरक्क्षति त्त्मना प्प्रजा पुपोष पुरुधा व्विराजति॥ 1॥

उदु त्त्यञ्जातवेदसन्देवँ व्वहन्ति केतव़।

द्दृशेव्विश्श्वाय सूर्य्यम्॥ 2॥

येना पावक चक्क्षसा भुरण्ण्यन्तञ्जना2॥ऽ अनु।

त्वँ व्वरुणपश्श्यसि॥ 3॥

दैव्व्यावद्ध्वर्य्यूऽआगत रथेन सूर्य्यत्त्वचा। मद्ध्वा यज्ञ समञ्जाथे।

तम्प्रत्क्रथायँव्वेनश्चिच्चत्रन्देवानाम्॥ 4॥

तम्प्रत्क्रथा पूर्व्वथा व्विश्श्वथेमथा ज्ज्येष्ता तिम्बर्हिषदœ स्वर्व्विदम्।

प्रतीचीनँ व्वृजनन्दोहसे धुनिमा शुञ्जयन्तमनु यासुव्वर्द्धसे॥ 5॥

अयँव्वेनश्च्चोदयत्त्पृश्निगब्र्भा ज्ज्योतिर्ज्जरायू रजसो व्विमाने।

इममपाœ सङ्गमे सूर्य्यस्य शिशुन्न व्विप्प्रा मतिभीरिहन्ति॥6॥

चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्क्षुर्म्मित्त्रस्य व्वरुण स्याग्ग्रे।

आप्प्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्क्ष सूर्य्यऽआत्क्मा जगतस्त स्त्थुषश्च्च॥ 7॥

आ नऽइडाभिर्व्विदथे सुशस्ति व्विश्श्वानर सविता देवऽएतु।

अपि यथा युवानो मत्त्सथा नो व्विश्श्वञ्जगदभि पित्त्वे मनीषा॥ 8॥

यदद्य कच्च व्वृत्रहन्नुदगाऽ अभि सूर्य्य।

सर्व्वन्तदिन्द्र ते व्वशे॥ 9॥

तरणिर्व्विश्श्वदर्शतो ज्ज्योतिष्क्कृदसि सूर्य्य।

व्विश्श्वमाभासि रोचनम्॥ 10॥

तत्त्सूर्य्यस्य देवत्त्वन्तन्महित्त्वम्मद्ध्या कर्त्तोर्व्वितत सञ्जभार।

यदेदयुक्त हरित सधस्त्थादाद्द्रात्त्री व्वासस्त्तनुते सिमस्म्मै॥11॥

तन्मित्त्रस्य व्वरुणस्याभिचक्क्षे सूर्य्यो रूपङ्कृणुते द्द्योरुपस्त्थे।

अनन्तमन्न्यद्द्रुशदस्य पाज़ कृष्ण्णमन्न्यद्धरित सम्भरन्ति॥ 12॥

बण्णमहा2ऽअसि सूर्य्य बडादित्त्य महा2ऽअसि ।

महस्त्ते सतो महिमा पनस्यतेद्धा देव महा2ऽ असि ॥ 13॥

बट्सूर्य्य श्रवसा महाऽ असि सत्रा देव महा2ऽ असि ।

मह्ना देवानामसुर्य्यं पुरोहितो व्विभु ज्ज्योतिरदाब्भ्यम्॥14॥

श्रायन्तऽइव सूयर्यं व्विश्श्वेदिन्द्रस्य भक्क्षत।

व्वसूनि जाते जनमानऽओजसा प्प्रति भागन्न दीधिम॥ 15॥

अद्द्या देवाऽउदिता सूर्य्यस्य निर हस पिपृता निरवद्द्यात्।

तन्नो मित्त्रो व्वरुणो मामहन्तामदिति सिन्धु पृथिवीऽउत द्द्यौ॥ 16॥

आ कृष्ष्णेन रजसा व्वर्त्तमानो निवेशयन्न मृतम्मर्त्यञ्च।

हिरण्ण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्श्यन्॥ 17॥

नवग्रहाणां पुष्पाञ्जलि :-

सूर्य: शौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मङ्गलं मङ्गल:।

सद्बुद्धिश्च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्र: सुखं शं शनि:॥

राहुर्बाहुबलं करोतु सततं केतु: कुलस्योन्नतिम्।

नित्यं प्रीतिकरा भवन्तु मम ते सर्वेऽनुकूला ग्रहा: ॥1 ॥

सूर्य भगवान सभी को शौर्य प्रदान करें, चन्द्रमा उच्चपद प्रदान करें, मङ्गलग्रह मङ्गलकार्य सिद्ध करें, बुध सद्बुद्धि प्रदान करें, गुरु श्रेष्ठता प्रदान करें, शुक्र सुख-शान्ति प्रदान करें, शनि कल्याण करें, राहु बाहुबल प्रदान करें, केतु निरन्तर कुल की उन्नति प्रदान करें और सभी ग्रह नित्य प्रसन्नता प्रदान करें तथा सभी ग्रह हमारे व सभी के अनुकूल रहें।

सूर्यो यच्छतु भूफ्तां द्विजपति: प्रीतिं परां तन्वताम्।

माङ्गल्यं विदधातु भूमितनयो बुद्धिं विधत्तां बुध:॥

गौरं गौरवमातनोतु च गुरुः शुक्रः स शुक्रार्थदः।

सौरिर्वैरिविनाशनं वितनुते रोगक्षयं सैंहिकः ॥2 ॥

सूर्य पृथ्वीपतित्व, चन्द्रमा प्रेम, मंगल मांगल्य, बुध सद्बुद्धि, गुरु गौरव, शुक्र वीर्य (बल) और धन, शनि शत्रु-नाश तथा राहु-केतु रोगों का विनाश करें।

पञ्चदेव पुष्पाञ्जलि :-

पुष्पाञ्जलिं सकलपञ्चसुराः मदीय, भक्त्यार्पितं सुमधुरगन्धयुतंसारम्।

दीनेविधाय करुणामयि हे सुरेन्द्रा! स्वीकृत्य दीनजनवत्सलता किरन्तु।।

असंख्यातरुद्राः पुष्पाञ्जलि

रुद्रा इमे विघ्नहरा वरेण्याः, भूमौ तथा खे दिवि संचरन्त।

पुष्पाञ्जलिर्मञ्जुलकेसराढ्यं, किरामि तत्पादवराम्बुजेषु।

प्रार्थना

ऊँ आयुश्च वित्तञ्च तथा सुखञ्च धर्मार्थलाभौ बहुपुत्रतां च।

शत्रुक्षयं राजसु पूज्यताञ्च तुष्टा ग्रहाः क्षेमकराः भवन्तु॥ 1 ॥

सभी ग्रह हम पर प्रसन्न होकर हमारा कल्याण करें और आयु, धन, सुख, धर्म, अर्थ इन सबका लाभ करायें, बहुत सी सन्तान (पुत्र) दें, शत्रुओं का नाश करें और राजाओं में पूज्यता उत्पन्न करे।

ग्रहाः राज्यं प्रयच्छन्ति ग्रहाः राज्यं हरन्ति च।

ग्रहैर्व्याप्तमिदं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम्॥2 ॥ ग्रह ही राज्य देने वाले तथा ग्रह ही राज्य हरने वाले होते है, ग्रहों से ही सचराचर त्रैलोक्य व्याप्त है। अनेन अर्चनेन सूर्याद्यावाहित देवताः पञ्चलोकपालाः असंख्यातरुद्राः प्रीयन्ताम् न मम।। तत्पश्चात् षोड़शोपचार पूजन करे।

8.7. सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत छात्रों को हवनादि कार्यों में वेदी अथवा कुण्ड के निर्माण के पश्चातां अग्निस्थापन की विधि का ज्ञान प्रदान किया गया है, जिसमें वेदी अथवा कुण्ड पञ्चभूसंस्कार - परिसमूहन, उपलेपन, उल्लेखन, उद्धरण व अभ्युक्षण की विधि अग्नि स्थापन तथा दक्षिण दिशा की ओर ब्रह्मा का आसन तथा उत्तर की ओर प्रणीता व प्रोक्षणी का स्थापन, परिस्तरण, हवनीय द्रव्यों का पवित्रीकरण, संग्रहण करते हुए यथोचित अग्नि का अर्चन तथा सूर्यादि नवग्रह अधिपति एवं प्रत्याधिपति देवताओं का अर्चन करने की विधि का साङ्गोपाङ्ग वर्णन किया गया है।

8.8. शब्दावलि

1. ब्रह्मासन = ब्रह्मा के बैठने का स्थान
2. प्रणीता = वेदी अथवा कुण्ड के उत्तर दिशा में रखा हुआ जलपात्र
3. परिस्तरण = वेदी अथवा कुण्ड के चारों ओर कुशाओं का आच्छादन
4. पात्रसादन = पात्रों को यथोचित स्थान पर स्थापित करना
5. पञ्चभूसंस्कार = (पाँच संस्कार) परिसमूहन, उपलेपन, उल्लेखन, उद्धरण व अभ्युक्षण

8.9. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : वेदी अथवा कुण्ड के किस दिशा में ब्रह्मा का आसन स्थापित किया जाता है ?

उत्तर : वेदी अथवा कुण्ड के दक्षिण दिशा में ब्रह्मा का आसन स्थापित किया जाता है।

प्रश्न - 2 : वेदी अथवा कुण्ड के किस दिशा में प्रणीता व प्रोक्षणी का आसन स्थापित किया जाता है ?

उत्तर : वेदी अथवा कुण्ड के उत्तर दिशा में प्रणीता व प्रोक्षणी का आसन स्थापित किया जाता है।

प्रश्न - 3 : परिस्तरण क्या होता है ?

उत्तर : वेदी अथवा कुण्ड के चारों ओर कुशाओं का आच्छादन करने को परिस्तरण कहते है।

प्रश्न - 4 : नवग्रहों के नाम बताइये ?

उत्तर : सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि - ये नवग्रह शास्त्रोक्त हैं।

प्रश्न - 5 : विवाह की अग्नि का नाम बताइये ?

उत्तर : विवाह की अिग्न का नाम योजक है।

8.10. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : पञ्चभूसंस्कार का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 2 : कुशकण्ड़िका से आप क्या समझते हैं ?

प्रश्न - 3 : पात्रसादन की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 4 : अग्रिपूजन से आप क्या समझते हैं ? विवेचना कीजिये।

प्रश्न - 5 : नवग्रहों की स्थापन विधि का उल्लेख कीजिये ?

8.11. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कर्मठगुरु:लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

2. हवनात्मक दुर्गासप्तशतीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

3. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

4. ज्योतिष सम्राट् पञ्चाङ्ग, सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

5. मन्त्रमहोदधिसम्पादक - श्रीशुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन वाराणसी।

सूर्यादि नवग्रह के दान पदार्थ, जपनीय मंत्र, जप संख्या, समिधा, औषधि, रत्न उपरत्न, धातु रत्न धारण करने की अङ्गुली, नक्षत्रवार, समय, पुराणोक्त स्तवन सामग्री :-

इकाई — 9

वास्तु, योगिनी, क्षेत्रपाल

इकाई की रूपरेखा

9.1. प्रस्तावना

9.2. उद्देश्य

9.3. विषय वस्तु

9.4 चतु:षष्टियोगिनीमण्डल पूजन

9.5. क्षेत्रपाल मण्डल पूजन

9.6. सारांश

9.7. शब्दावली

9.8. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

9.9. लघुत्तरीय प्रश्न

9.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

9.1. प्रस्तावना

ग्रहशान्ति प्रकरण में वास्तु, योगिनी व क्षेत्रपाल पूजन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। योगिनियों की संख्या 64 है। पूजन क्रम में 16 देवियाँ व 7 घृतमातृकायें भी है, परन्तु योगिनियों का विशेष महत्त्व है। इनके अन्तर्गत श्रीमहाकाली, श्रीमहालक्ष्मी, श्रीमहासरस्वती तथा इनकी गजाननादि 64 देवियों का पूजन किया जाता है। साधना भेद से इनके पूजनक्रम में विविध नामों से पाठभेद यत्र-तत्र उपलब्ध है । योगिनी के मण्ड़ल निर्माण हेतु वेदी का निर्माण

आग्रेयकोण में किया जाता है, नवीन वस्त्र पर धान्य से 64 कोष्ठकात्मक मण्ड़ल बनाना चाहिए। मण्ड़ल के देवताओं के पूजन से पूर्व महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती का आवाहन करना चाहिए। मण्ड़ल पूजन की षोड़शोपचार पूजन के पश्चात् योगिनी के देवताओं के लिए पृथक्-पृथक् द्रव्यों से अथवा पायस (दूध अथवा दूधनिर्मित मिष्ठान्न) से बलि देनी चाहिए। बलि देते समय प्रत्येक देवता हेतु पृथक्-पृथक् दीप भी प्रज्ज्वलित करके देवता के लिए दीपदान करना चाहिए।

क्षेत्रपाल के पूजन के अन्तर्गत भैरव का पूजन किया जाता है । भैरव (भैरव (भय+रव) अर्थात् जिसकी प्रवेश ध्वनि विशेष अनुभूति को प्राप्त कराती है ।) समस्त सृष्टि के लोकपाल है । साधना में शक्ति के साथ-साथ भैरव एवं भैरवी परम असाध्य है।

क्षेत्रपाल के मण्ड़ल निर्माण हेतु वेदी का निर्माण वायव्यकोण कृष्णवस्त्र पर किया जाता है, नवीन वस्त्र पर धान्य से 49 कोष्ठकात्मक मण्ड़ल बनाना चाहिए। मण्ड़ल पूजन की षोड़शोपचार पूजन के पश्चात् क्षेत्रपाल (भैरव) के देवताओं के लिए पृथक्-पृथक् द्रव्यों से अथवा पायस (दूध अथवा दूधनिर्मित मिष्ठान्न) से बलि देनी चाहिए। बलि देते समय प्रत्येक देवता हेतु पृथक्-पृथक् दीप भी प्रज्ज्वलित करके देवता के लिए दीपदान करना चाहिए ।

वास्तु :- व्याकरण शास्त्र के अनुसार वस् — निवासे धातु उणादि सूत्र वसेस्तुन सूत्र से तुन् प्रत्यय से वास्तु शब्द तथा अगारे णिथ सूत्र से णिद्वाव होने पर वास्तु शब्द निष्पत्र होता है। सत्ययुग के आरम्भ में एक महान प्राणी उत्पन्न हुआ, जो अपने विशाल शरीर से समस्त लोकों में व्याप्त था, इसको देखकर देवराज इन्द्र सहित सभी देवता भय एवं आश्चर्य से चकित थे, तत्पश्चात् उन्होंने क्रोधित होकर उस असुर को पकड़कर उसका सिर नीचे करके भूमि में गाड़ दिया और स्वयं वहाँ खड़े रहे, इसी का नाम ब्रह्माजी ने 'वास्तुपुरुष रखा । ज्योतिर्विज्ञान के विभागों में आज सर्वाधिक लोकप्रिय तथा जनसामान्य को सही दिशा और उत्तम दशा प्रदान करने वाला प्रमुख है वास्तुविज्ञानŸ। 'वास्तुङ्क के नाम से हमारे सामने आजकल व्यावसायिक वास्तुशास्त्रियों का भयावह मुख प्रकट हो जाता है, जबकि वास्तव में तो यह विद्या अत्यन्त सैद्धान्तिक, सन्तुलित तथा आध्यात्मिक ऊर्जा से सम्पन्न है । लोगों ने इसे इतना सहज बना दिया है कि वे आज वास्तु के नाम पर जन-सामान्य को डराने लगे है तथा अव्यावहारिक रूप से उनके भवनों को ध्वस्त कराकर नये भवन बनाने तक का परामर्श दे डालते है । अत्यन्त निम्नवर्ग का व्यक्ति तो सहम जाता है तथा निराशा से घिर कर आत्मदाह तक कर लेता है जातक के जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण अ' है, वास्तु । इसके बिना जीवन की कल्पना निरर्थक ही होती है। मनुष्य की यही कामना होती है कि गृह सदैव कल्याणकारी व चिरस्थायी हो । सभी प्राणी सुख तथा सुरक्षा की दृष्टि से अपने योग्य निवास स्थान की व्यवस्था करते है। उन सभी में मानव बुद्धि-प्रधान प्राणी है, जिसका जीवनक्रम धार्मिक

ग्रन्थों की छत्रछाया में अनुशासित होता है । ‘‘वास्तुपुरुष की उत्पत्ति हमारे शास्त्रों के अनुसार वास्तु की उत्पत्ति आदिकाल में बतायी गयी है। यथा-

किमपि किल भूतमभवद्रुन्धानं रोदसी शरीरेण।

तदमरगणेन सहसा विनिगृह्याधोमुखं न्यस्तम्।।

यत्र च येन गृहीतं विबुधेनाधिष्ठितः स तत्रैव।

तदमरमयं विधाता वास्तुनरः कल्पयामासः।।

स्त्री-पुत्र आदि के भोग, सुख, धर्म, अर्थ व काम को देने वाला प्राणियों के सुख का स्थान और सर्दी, वायु और गर्मी जैसे मौसमी कष्टों से रक्षा करने वाला 'घर ही है। विधिवत् गृहनिर्माणकर्ता को बावड़ी, देवालय आदि के निर्माण का पुण्य भी प्राप्त होता है, इसलिए विश्वकर्मा आदि देवशिल्पियों ने सर्वप्रथम गृहनिर्माण का निर्देश दिया है ।

घर बनाने का फल		**श्रौत व स्मार्त आदि कर्मो का फल**	
गृह	फल	गृह	फल
पत्थर	अनन्तगुणा	तीर्थ (गङ्गादि)	अनन्तगुणा
ईंट	सौ करोड़ गुणा	मन्दिर	सौ करोड़ गुणा
मिट्टी	दस करोड़ गुणा	सरोवर/कुआँ	दस करोड़ गुणा
पर्णशाला	करोड़ गुणा	स्वघर	करोड़ गुणा

अपने कुल के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों के घर अथवा मन्दिर आदि में बिना शुल्क दिये रहकर स्वहित में किये गये सभी श्रौत स्मार्त्त आदि शुभकार्य अपने लिए निष्फल हो जाते है, क्योंकि उनका फल भूस्वामी को प्राप्त होता है। अत: स्वहित में किये गये कार्यों का शुल्क अवश्य देना चाहिए ।

9.2. उद्देश्य

1. वास्तुदेवता के मन्त्रों का सस्वर पाठाभ्यास।

2. योगिनी के मन्त्रों का सस्वर पाठाभ्यास।

3. क्षेत्रपाल के मन्त्रों का सस्वर पाठाभ्यास ।

9-3 विषय वस्तु

वास्तु पूजनम्

वास्तु देवता के मण्ड़ल निर्माण हेतु वेदी का निर्माण नैऋर्त्यकोण में किया जाता है, नवीन वस्त्र पर धान्य से 49, 64, 81 अथवा कार्यविशेष के अनुसार यथासंख्यक कोष्ठकात्मक मण्ड़ल बनाना चाहिए। मण्ड़ल पूजन से पूर्व अग्निकोण से प्रारम्भ करके ईशान पर्यन्त चार नागफणी की कीलो की पूजन-बलि सहित स्थापना की जाती है। मण्ड़ल पूजन की षोड़शोपचार पूजन के पश्चात् वास्तु के देवताओं के लिए पृथक्-पृथक् द्रव्यों से अथवा पायस (दूध अथवा दूधनिर्मित मिष्ठान्न) से बलि देनी चाहिए । बलि देते समय प्रत्येक देवता हेतु पृथक्-पृथक् दीप भी प्रज्ज्वलित करके देवता के लिए दीपदान करना चाहिए तथा पूजन के उपरान्त प्रधानदेवता वास्तु के लिए सदीपबलि देनी चाहिए । शास्त्रों के अनुसार खात में गिरगिट के स्वरूप में वास्तुदेवता की कल्पना की गयी है। रजत अथवा स्वर्णमयी मूर्ति की मण्ड़ल पर स्थापना करके निम्न मन्त्रों से पूजन करना चाहिए: -

संकल्प - हाथ में अक्षत जल लेकर संकल्प बोले देशकालौ संकीर्त्यै मया पूर्वोच्चारितसंकल्पाऽङ्गतया वास्तुमण्डले शङ्कुरोपणसहित देवानामावाहनपूर्वकं पूजनं बलिदानञ्च करिष्ये ।

शङ्कुरोपण :-

चार लोहे की नागफणी की कीलों को आग्नेय, नैऋर्त्य, वायव्य व ईशानकोण में क्रमश: शङ्कुरोपण, बलिदानादि कर्म करना चाहिए।

ऊँ विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वत:।

अस्मिन् गृहे/मण्ड़ले अवतिष्ठन्तु आयुर्बलकरा: स्वहा ।।

बलिदान :-

1. ऊँ अग्न्ये नम: इमं बलिं समर्पयामि

2. ऊँ नैत्रऋत्यै नम: इमं बलिं समर्पयामि

3. ऊँ वायव्यै नम: इमं बलिं समर्पयामि

4. ऊँ ईशानाय नम: इमं बलिं समर्पयामि।

रेखापूजन :- पश्चिम से पूर्व की ओर :- हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुए रेखा पर छोड़े

1. ऊँ शान्त्यै नम:, 2. ऊँ यशोवत्यै नम:,

3. ऊँ विशालाय नम:, 4. ऊँ प्राणवाहिन्यै नम:,

5. ऊँ सत्यै नम:, 6. ऊँ सुमत्यै नम:,

7. ऊँ नन्दाय नम:, 8. ऊँ सुभद्राय नम:,

9. ऊँ सुरथाय नम:,

रेखापूजन :- दक्षिण से उत्तर की ओर :- हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुएरेखा पर छोड़े

1. ऊँ हिरण्यायै नम:, 2. ऊँ लक्ष्म्यै नम:,

3. ऊँ विभूत्यै नम:, 4. ऊँ विमलाय नम:,

5. ऊँ प्रियाय नम:, 6. ऊँ जयाय नम:,

7. ऊँ ज्वालाय नम:, 8. ऊँ विशालाय नम:,

9. ऊँ ईड़ाय नम:।

रेखापूजन :- पश्चिम से पूर्व की ओर :- हाथ में अक्षत लेकर मंत्र बोलते हुए रेखा पर छोड़े

वास्तुमण्डलस्थदेवा: नम: सुप्रतिष्ठिता भवन्तु। यथामिलितोपचारद्रव्यै: संपूज्य।

तत्र मण्डलमध्ये चतु:पदे पीतवर्णे कोष्ठोपरि ताम्रादिकलशस्य स्थापनं कुर्यात्।

तदुपरिप्राणप्रतिष्ठापूर्वकं वास्तुमूर्तिं संस्थाप्य। आवाहयेत् -

ऊँ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो ऽ अनमी वो भवान:।

यत्त्वे महे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भवद्विपदे शं चतुष्पदे।

ऊँ भूर्भुव: स्व: वास्तुपुरुषाय नम:। वास्तुपुरुषमावा0 स्था0।।

पूजनं कुर्यात् -

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयो: पाद्यं समर्पयामि। हस्तयो: अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि । शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि। वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गंधं समर्पयामि। अक्षतान् समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि। परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम । नैवेद्यं समर्पयामि। मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुन: आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

पुष्पाञ्जलि :-

ऊँ शिख्यादि कामे खलु वास्तु देवा,

गृöवन्तु पुष्पाञ्जलिमत्र शीघ्रम्।

पीड़ाहरा भव्यकरा विशाला,

भवन्तु भूपालन तत्पराश्च ॥ पुष्पाञ्जलि समर्पयामि।

मण्डलाग्रे बलिं दद्यात् :- ऊँ अमीवहा वास्तोष्पते विश्वारूपाण्याविशन्। खा सुशेव ऽ एधिन: स्वाहा। ऊँ वास्तुपुरुषाय बलिद्रव्याय नम:। संपूज्य। भो शिख्यादिगणसहित वास्तुपुरुष इमं बलिं समर्पयामि। जलमुत्सृजेत्।

प्रार्थना - भो वास्तुपुरुष इमं बलिं गृहाण मम (यजमानस्य) गृहे आयु: कर्ता क्षेम कर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिं कर्ता तुष्टि कर्ता निर्विघ्नकर्ता कल्याणकर्ता भव।

नमस्कार :-नमामि वास्तुपुरुष सशिख्यादिगणवृत:।

पूजां बलिं गृहाणेमां सौम्यो भवतु सर्वदा॥

अनेन पूजाबलिदानेन शिख्यादिवास्तुमण्डलस्थदेवै: सह वास्तुपुरुष: प्रीयताम्॥

9.4 चतु:षष्टियोगिनीमण्डल पूजन

योगिनी के मण्ड़ल निर्माण हेतु वेदी का निर्माण आग्नेयकोण में किया जाता है, नवीन वस्त्र पर धान्य से 64 कोष्ठकात्मक मण्ड़ल बनाना चाहिए। मण्ड़ल के देवताओं के पूजन से पूर्व महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती का आवाहन करना चाहिए। मण्ड़ल पूजन की षोड़शोपचार पूजन के पश्चात् योगिनी के देवताओं के लिए पृथक्-पृथक् द्रव्यों से अथवा पायस (दूध अथवा दूधनिर्मित मिष्ठान्न) से बलि देनी चाहिए। बलि देते समय प्रत्येक देवता हेतु पृथक्-पृथक् दीप भी प्रज्ज्वलित करके देवता के लिए दीपदान करना चाहिए। रजत अथवा स्वर्णमयी मूर्ति की मण्ड़ल पर स्थापना करके निम्न मन्त्रों से पूजन करना चाहिए: -

अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा-

ऊँ भूर्भुव: स्व: महालक्ष्म्यै नम:। महालक्ष्मीमावाहयामि स्थापयामि।

पूजनं कुर्यात्-

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयो: पाद्यं समर्पयामि। हस्तयो: अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गंधं समर्पयामि। अक्षतान् समर्पयामि। पुष्पमालां

समर्पयामि । परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्। नैवेद्यं समर्पयामि । मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुन: आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

9.5. क्षेत्रपाल मण्डल पूजन

क्षेत्रपाल के मण्ड़ल निर्माण हेतु वेदी का निर्माण वायव्यकोण कृष्णवस्त्र पर किया जाता है, नवीन वस्त्र पर धान्य से 49 कोष्ठकात्मक मण्ड़ल बनाना चाहिए। मण्ड़ल पूजन की षोड़शोपचार पूजन के पश्चात् क्षेत्रपाल (भैरव) के देवताओं के लिए पृथक्-पृथक् द्रव्यों से अथवा पायस (दूध अथवा दूधनिर्मित मिष्ठान्न) से बलि देनी चाहिए। बलि देते समय प्रत्येक देवता हेतु पृथक्-पृथक् दीप भी प्रज्ज्वलित करके देवता के लिए दीपदान करना चाहिए । कलश स्थापन करते हुए उस पर रजत अथवा स्वर्णमयी मूर्ति की मण्ड़ल पर स्थापना करके निम्न मन्त्रों से पूजन करना चाहिए:-

संकल्प - देशकालौ संकीर्त्य मया पूर्वोच्चारितसंकल्पा ऽङ्गतया अजरादि पावनपर्यन्तानां क्षेत्रपालमण्डलस्थ देवानामावाहनपूर्वकं पूजनं बलिदानञ्च करिष्ये।

ॐ भूर्भुव: स्व: व्यापकाय नम:, व्यापकमावाहयामि स्थापयामि ॥2॥

ॐ भूर्भुव: स्व: वटुकाय नम:, वटुकमावाहयामि स्थापयामि ॥2॥

ॐ भूर्भुव: स्व: विमुक्ताय नम: , विमुक्तमावाहयामि स्थापयामि ॥3॥

ॐ भूर्भुव: स्व: लिप्तकाय नम:, लिप्तकमावाहयामि स्थापयामि ॥4॥

ॐ भूर्भुव: स्व: लीलाकाय नम: , लीलाकमावाहयामि स्थापयामि ॥5॥

ॐ भूर्भुव: स्व: एकदंष्ट्राय नम:, एकदंष्ट्रमावाहयामि स्थापयामि ॥6॥

दक्षिणकोष्ठे -

ऊँ अब्भ्यो हस्तिभ्पं जभ्वायाश्वभ्पं पुष्ट्यै गोपाभ्लं व्वीभ्ष्ट्वष्ट्वायविपाभ्लं तेजाPसेजपाभ्लमिरायै कीभ्नाशं कीभ्लालाय सुराकाभ्रं भभ्द्द्राय गृहभ्प œ श्रेयसे व्वित्तभ्धमाद्क्ष्यायानुक्षभ्त्तारम् ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: ऐरावतराय नम:, ऐरावतमावाहयामि स्थापयामि॥1॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: ओषधीघ्राय नम:, ओषधीघ्रमावाहयामि स्थापयामि॥2॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: बन्धनाय नम:, बन्धनमावाहयामि स्थापयामि॥3॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: दिव्यकायाय नम:, दिव्यकायमावाहयामि स्थापयामि॥4॥

अजरादिपावनान्तक्षेत्रपालमण्डलस्थदेवा: सह क्षेत्राधिपतये नम: सुप्रतिष्ठिता भवन्तु।

यथामिलितोपचारद्रव्यै: संपूज्य।

पूजनं कुर्यात् -

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि । पादयो: पाद्यं समर्पयामि। हस्तयो: अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि । वस्त्रं समर्पयामि । यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि । गंधं समर्पयामि। अक्षतान् समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि। परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम । नैवेद्यं समर्पयामि । मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुन: आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

पुष्पाञ्जलि :-

नीलाञ्जनाद्रिनिभमूर्ध्वपिशंगकेश,

वृत्तोग्रलोचनमुपात्तगदाकपालम् ।

रक्ताम्बरं भुजगभूषणमुग्रदंष्ट्रं

क्षेत्राधिपा कुसुमपुञ्ज गृहाण शीघ्रम्॥ पुष्पाञ्जलि समर्पयामि।

नमस्कार :- क्षेत्रपाल महाबाहो महाबल पराक्रम:।

क्षेत्राणां रक्षणार्थाय प्रणमामि पुन: पुन:॥

मण्डलाग्रेपायस बलिदद्यात् -

ऊँ क्षेत्रस्य पतिनां वयं हितेनेव जयामसि। गामश्व पोषयित्वा स नो मृलाती दृशे।

क्षेत्रपाल बलिद्रव्याय नम:। भो क्षेत्रपाल इमं बलिं समर्पयामि। जलमुत्सृजेत्॥

भो क्षेत्रपाल इमं बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सर्वविघ्नान्नाशय नाशय सर्व मनोरथान् **पूरय पूरय स्वाहा।**

अनेन पूजाबलिदानेन क्षेत्रपालमण्डलस्थदेवा: सह क्षेत्राधिपति प्रीयताम्।

9.6. सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत पूजन क्रम के महत्त्वपूर्ण अङ्ग वास्तु, योगिनी व क्षेत्रपाल के पूजन हेतु सरस्वर मन्त्र दिये गये हैं। पूजनक्रम में केवलमात्र नाम से भी पूजन किया जा सकता है तथापि विशेष महत्त्व तो समन्त्रिक पूजन का ही है। वास्तुमण्ड़ल का निर्माण नैऋर्त्यकोण में करते हुए सर्वप्रथम मण्ड़ल के चारों कोणों पर शङ्कुरोपण करते हुए पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर की ओर रेखादेवताओं का आवाहन-पूजन करने के साथ कलशस्थापन करते हुए शिख्यादि वास्तुमण्ड़ल देवताओं का पूजन तथा बलिदानादि की विधि तथा महाकाली, महालक्ष्मी व महासरस्वती सहित 64 योगिनीयों का अग्निकोण में पूजन, बलिदान एवं वायव्यकोण में क्षेत्रपाल मण्ड़ल के अजरादि देवताओं का पूजन, बलिदान साङ्गोपाङ्ग इस इकाई में दिया गया है।

9.7. शब्दावली

1. वास्तु = निवासित भूमि का देवता

2. शङ्कु = आगे से नोंक वाली कील

3. रोपण	=	स्थापना करना
4. नैऋर्त्य	=	दक्षिण-पश्चिम का कोना
5. पायस	=	दूध
6. स्वर्णयमी	=	स्वर्ण से निर्मित
7. अग्निकोण	=	पूर्व-दक्षिण का कोना
8. रजत	=	चाँदी
9. वायव्य	=	उत्तर-पश्चिम का कोना
10. क्षेत्रपाल	=	क्षेत्र का पालक/रक्षक

9.8. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : वास्तुमण्ड़ल का निर्माण किस कोण में किया जाता है?

उत्तर : वास्तुमण्ड़ल का निर्माण नैऋर्त्यकोण में किया जाता है।

प्रश्न - 2 : नागफणी की कीलों की स्थापना कहां की जाती है?

उत्तर : नागफणी की कीलों की स्थापना वास्तुमण्डल के चारों कोणों पर की जाती है।

प्रश्न - 3 : योगिनियों की संख्या कितनी होती है?

उत्तर : योगिनियों की संख्या 64 होती है।

प्रश्न - 4 : क्षेत्रपालमण्ड़ल का निर्माण किस कोण में किया जाता है ?

उत्तर : क्षेत्रपालमण्ड़ल का निर्माण वायव्यकोण में किया जाता है।

प्रश्न - 5 : क्षेत्रपाल मण्ड़ल के कितने देवता होते हैं ?

उत्तर : क्षेत्रपाल मण्ड़ल के 49 देवता होते हैं।

9.9. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : वास्तु मण्ड़ल की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 2 : क्षेत्रपाल मण्ड़ल की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 3 : योगिनी मण्ड़ल की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 4 : वास्तु मण्ड़ल में रेखा देवताओं से आप क्या समझते हैं ?

प्रश्न - 5 : वास्तु, योगिनी, क्षेत्रपाल मण्ड़ल देवताओं की बलिदान-विधि की विवेचना कीजिये ?

9.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कर्मठगुरु:लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
2. हवनात्मक दुर्गासप्तशतीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - रा. सं सा. के., जयपुर।
3. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अ. भा. प्रा. ज्यो. शो. सं., जयपुर।
4. मन्त्रमहोदधि सम्पादक - श्रीशुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन वाराणसी।

इकाई — 10

सर्वतोभद्र

इकाई की रूपरेखा

10.1. प्रस्तावना

10.2. उद्देश्य

10.3. सर्वतोभद्रमण्डल पूजन

10.4. प्रधान पूजन

10.5. सारांश

10.6. शब्दावली

10.7. अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

10.8. लघुत्तरात्मक प्रश्न

10.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

10.1. प्रस्तावना

यज्ञ, याग, होम, व्रत, अनुष्ठान आदि धार्मिक कर्मकाण्डों में देवताओं के अनुसार विविध भद्र मण्ड़लों की रचना करना आवश्यक होता है । इनका उल्लेख तान्त्रिक ग्रन्थों, पुराणों आदि में मिलता है । मन्त्रसाधना हेतु भद्रमण्ड़ल का निर्माण आवश्यक बताया गया है। यथा -

साधक: साधयेन्मन्त्रं देवतायतनादिके।

शुद्धभूमौ गृहे प्राच्र्य मण्ड़ले हरिमीश्वरम॥

इन भद्रमण्ड़लों का निर्माण सदैव किसी समचतुस्र भूमि या चौकी पर ही करना चाहिए। यथा -

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे मण्ड़लादीनि वै लिखेत।

रसबाणाक्षिकोष्ठेषु सर्वतोभद्रमालिखेत॥

भद्रमण्ड़लों का वर्गीकरण :-

1. सामान्य भद्रमण्ड़ल :- सर्वतोभद्रमण्ड़ल सामान्य भद्र है, इसका उपयोग सभी यागों एवं अनुष्ठानों में किया जाता है।
2. शैवभद्र :- इसका उपयोग शैवयाग तथा व्रतादि में करते है, जिनमें एकर्लिङ्गतोभद्र, चतुर्लिङ्गतोभद्र, अष्टलिङ्गतोभद्र तथा द्वादशलिङ्गतोभद्र प्रमुख है।
3. शाक्तभद्र :- गौरीव्रत, देवी सम्बन्धी अनुष्ठानों एवं यज्ञों में प्रमुखतया गौरीतिलकादि भद्रमण्ड़ल का उपयोग किया जाता है।
4. गणपतिमण्ड़ल :- श्रीगणेशोपासना एवं यागादि में इसका उपयोग होता है।
5. सूर्यभद्र :- इसका उपयोग सूर्यसम्बन्धी अनुष्ठानों में होता है।
6. नवग्रहमण्ड़ल :- नवग्रहों की पीठ सामान्य है, तथा उनके विशेष पीठ भी बनते है।
7. श्रीरामादि के भद्रमण्ड़ल :- यह श्रीराम के यज्ञ में बनता है।

इसी प्रकार सभी देवताओं के प्रमुख मण्ड़ल उनसे सम्बन्धित अनुष्ठानों एवं यज्ञों में बनाये जाते है।

10.2. उद्देश्य

1. प्रधान देवता के पूजन हेतु मन्त्रों का ज्ञान प्राप्त करना।

2. भद्रमण्ड़ल के देवताओं के पूजन की विधि का ज्ञान प्राप्त करना।

3. मन्त्रों का सस्वर पाठाभ्यास।

10.3. विषय वस्तु

सर्वतोभद्रमण्डल पूजन

पूर्वदिशा में काष्ठ की चौकी अथवा समचतुरस्र वेदी पर पीत वस्त्र बिछाकर यथोचित धान्य अथवा अक्षत को गुलाल में रंगकर धान्य से 324 कोष्ठकों का निर्माण करते हुए मण्ड़ल का निर्माण करना चाहिए। समानभाग से पश्चिम से पूर्व तथा दक्षिण से उत्तर 18-18 कोष्ठकों का निर्माण करना चाहिए तत्पश्चात् अधोलिखित मन्त्रों से उनमें देवाताओं का आवाहन-स्थापन करना चाहिए:-

तत्सदद्य - अस्मिन कर्मणि महावेद्यां सर्वतोभद्रमण्डले ब्रह्मादिदेवतानां स्थापनं पूजनं च करिष्ये।

ऊँ वैनायक्यै नम:। वैनायकीमावाहयामि स्थापयामि।

प्रधानपीठ पर ब्रह्मादि सर्वतोभद्र मण्डलस्थ देवों का आवाहन करके गन्धादि से पञ्चोपचार अर्चन (गन्धादिभि: सम्पूज्य) करके वरुण कलश का स्थापन करना चाहिए।

10.4. प्रधान पूजन

जिस किसी भी कर्म के प्रधान देवता का अर्चन करना हो, उस देवता का मण्ड़ल पूर्वमध्य में बनाना चाहिए तथा प्रधान देवता की मूर्ति आदि का कलश पर स्थापनादि पूजन करना चाहिए। पूजन से पूर्व मूर्ति का अग्न्युत्तारण , प्राणप्रतिष्ठा आदि संस्कार करना चाहिए।

उपरोक्त मन्त्रों का उच्चारण करते हुए प्रधान मूर्ति को शुद्धजल से स्नान करवायें :-

ऊँ शुद्धवाल: सर्व शुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विना: श्येत: श्येताक्षो -

रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्ण्णामा अवलिप्ता रौद्द्रानभोरूपा: पार्ज्जन्न्या:।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (अमुकदेव) शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

तत्पश्चात् प्रतिमा का हाथ/कुशा/दूर्वा से स्पर्श करते हुए देवता के प्राणों का मूर्ति में स्थापन/आवाहन करे।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः सोऽहं अस्यां मूर्तौ प्राणा इह प्राणाः।

ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ जीव इह स्थितः।

ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणि पादपायूपस्थानि,

इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

मूर्ति में आवाहन :-

अस्यै प्राणा प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणा: क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।।

जिस भी देवता का प्रधान पूजन करना हो, उसी देवता का मन्त्र/ध्यान आदि से षोड़शोपचार/पञ्चोपचार पूजन करे। पूर्व प्रतिष्ठापित मूर्तियों /देवताओं का

1. गणपति का आवाहन :-

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणै: पूजितं श्वेतगन्धै;

क्षीराब्धौ रत्नदीपै: सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्।

दोर्भि: पाशाङ्कुशाब्जाभयवरदधतं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं

ध्याये शान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्।।

ॐ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा

निधिपति हवामहे व्वसोमम। आहमं जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।।

ॐ भूर्भुव: स्व: गणपतये नम:, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

2. विष्णु का आवाहन/ध्यान :-

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्

विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।

लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,

वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम॥

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा॥

ॐ भूर्भुव: स्व: विष्णवे नम:, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय विष्णुं आवाहयामि/ध्यायामि।

3. शिव का आवाहन/ध्यान :-

ॐ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम्

रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।

पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्

विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

ॐ नम: शम्भवाय च मयोभवाय च नम:

शङ्कराय च मयस्कराय च नम: शिवाय शिवतराय च॥

ॐ भूर्भुव: स्व: शिवाय नम:, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय शिवम् आवाहयामि/ध्यायामि।

4. महाकाली का आवाहन/ध्यान :-

खड्गं चक्र-गदेषु चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः,

शङ्कं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वा-भूषावृताम्।

नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाद-दशकां सेवे महा-कालिकां,

यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्।।

ऊँ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन।

ससस्त्यश्वक: सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्। ।

ऊँ भूर्भुव: स्व: महाकाल्यै नम:, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय महाकाली आवाहयामि/ध्यायामि।

5. महालक्ष्मी का आवाहन/ध्यान :-

अक्ष-स्रक्परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां,

दण्डं शक्तिमqस च चर्म जलजं घण्टां सुरभाजनम्।

शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननाम्,

सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह-महा-लक्ष्मीं सरोज-स्थिताम्।।

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाश्र्वे नक्षत्राणि रूपमश्वि नौव्व्यात्तम्।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: लक्ष्म्यै नम:, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय लक्ष्मीम् आवाहयामि/ध्यायामि।

6. महासरस्वती का आवाहन/ध्यान :-

______घण्टा-शूल-हलानि शङ्क-मुसले चक्रं धनुः सायकं,

हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्य-प्रभाम्।

गौरी-देह-समुद्भवां त्रि-जगतामाधार-भूतां महा-

पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि -दैत्यार्दिनीम् ।।

ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सरस्वत्यै नमः, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय सरस्वतीम् आवाहयामि/ध्यायामि।

7. दुर्गा का आवाहन/ध्यान :-

या माया मधुकैटभप्रमिथिनी, या माहिषोन्मूलिनी,

या धूम्रेक्षणचण्डमुण्डमथिनी, या रक्तबीजाशनी।

शक्तिशुंभनिशुंभदैत्यदलनी, या सिद्धिलक्ष्मीपरा,

सा चण्डी नवकोटिशक्तिसहिता, मां पातु विश्वेश्वरी।।

ॐ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन।

ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीमहाकालीश्रीमहालक्ष्मीश्रीमहासरस्वती त्रिगुणात्मिकायै दुर्गादैव्यै नमः, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधारय सशक्तिकाय सवाहनाय दुर्गाम् आवाहयामि/ध्यायामि।

8. श्रीराम का आवाहन/ध्यान :-

ॐ रामाय रामचन्द्राय रामभद्राय वेधसे।

रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः।।

नान्यास्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये,

सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।

भक्तिं प्रयच्छ रघुपु‘व निर्भरां मे,

कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं,

मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।

सीतां पाश्र्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभं राघवं,

पश्यन्तं मुकुटा‘दादिविविधाकल्पोज्ज्वला भजे ।।

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य तदुपरि ‘‘ॐ नमो भगवते श्रीरामाय सर्वभूतान्तरात्मने वासुदेवाय सर्वा‘संयोग योग पीठात्मने नमः।

9. भैरव का आवाहन/ध्यान :-

करकलितकपाल: कुण्डलीदण्डपाणि-

स्तरुणतिमिरनीलव्यालयज्ञोपवीती।

क्रतुसमयसपर्याविघ्नविच्छेदहेतु-

र्जयति बटुकनाथ: सिद्धिद: साधकानाम।।

ॐ नहिस्प्पशमविदन्नन्यमस्माद् वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्ने ।

एमेनमवृधन्नमृताऽअमर्त्यं वैश्वानरङ्‌ क्षैत्रजित्याय देवा ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: भैरवाय नम:, साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय सवाहनाय भैरवम् आवाहयामि/ध्यायामि।

तत्पश्चात् प्रधानपीठस्थ देव का षोड़शोपचार/यथोपचार पूजन करे।

आसनम् -

ऊँ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भू तँच्च भाव्व्यम्।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पाद्यम् -

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्याँश्चपूरुष:।

पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) पादप्रक्षालनार्थं पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्यम् -

ऊँ धामन्तेव्विश्वम्भुवनमधिश्रितमन्त: समुद्र्हेहृद्यन्त रायुषि।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्मिम्।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) हस्तयो: अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् -

ऊँ इमम्मेव्वरुणशुधीहवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके ।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् -

ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो

व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) स्नानार्थे जलं समर्पयामि ।।

पञ्चामृत स्नानम् -

ॐ पञ्चनद्य: सरस्वतीमपियन्तसस्रोतस:।

सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् -

ॐ शुद्धवाल: सर्व शुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विना:

श्येत: श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्ण्णामा

अवलिप्ता रौद्द्रानभोरूपा: पार्ज्जन्न्या:।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेक: (गन्धादिभि: सम्पूज्य) -

जिस देवता का पूजन कर रहे है, उसी देव के स्तोत्र/अथर्वशीर्ष आदि का उच्चारण करते हुए दुग्ध अथवा यथोचित पदार्थ से से अभिषेक करे।

ॐ भूर्भुव: स्व: सिद्धि 0 महा0 अभिषेकस्नानं सम0। शुद्धोदकस्नानम्।

वस्त्रोपवस्त्रम् -

ॐ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्व:।

व्वासो ऽ अग्ने विश्वरूप œ सँव्ययस्वव्विभावसो॥

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् -

ॐ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत: सुरुचोव्वेनऽआव:।

सबुद्ध्न्याऽउपमा अस्यव्विष्ठा: सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विव:।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् -

ॐ अ œ शुना ते अ œ शु: पृच्यतां परुषा परु:।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युत:।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षता: -

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्प्रियाऽअधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो व्विप्रा नविष्ठ्ठयामती योजान्विन्द्रते हरी ॥

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्पाणि (पुष्पमालां)-

ॐ ओषधि: प्रतिमोदद्ध्वं पुष्पवती: प्रसूवरी:।

अश्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुध: पारयिष्णव:।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) पुष्पाणि समर्पयामि ।

अथ अङ्गपूजनम्-

जिस देवता का पूजन कर रहे है, उसी देव के अङ्गों का पूजन करे।

दुर्वाङ्कुरम्-

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुष: परुषस्परि।

एवा नो दूर्व्वे प्प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् -

ॐ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च व्वरूथिने च

नम: श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

शमीपत्रम् -

ॐ अग्नेस्तनूरसि व्वाचो व्विसर्ज्जनन्देववीतये त्वा गृह्णामि

बृहद्ग्रावासि व्वानस्पत्य: स ऽ इदन्देवेभ्यो हवि: शमीष्व सुशमि

शमीष्व हविष्कृदेहि हविष्कृदेहि ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) शमीपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम्-

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात् ।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम)सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम्-

ॐ सिन्धोरिव प्प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमिय: पतयन्ति ह्वा:।

घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभि: पिन्वमान:।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि -

ॐ अहिरिव भोगै: पर्येति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमान:।

हस्तग्घ्नो व्विश्वाव्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वत:।।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम्-

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तं योस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वाम:।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्निनतमं पप्प्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।

ॐ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् -

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्नि: स्वाहा सूर्ोज्योतिर्ज्योति: र्सू: स्वाहा।

अग्निर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्च: स्वाहासूर्ोव्वर्च्चोज्योतिर्वर्च्च: स्वाहा।

ज्योति: र्सू: सूर्ोज्योति: स्वाहा।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) दीपकं दर्शयामि। हस्तौ प्रक्षाल्य।

नैवेद्यम् - ऊँ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो द्यौ: समवर्त्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिश: श्रोत्रात्तथा लोकाँ 2ऽ अकल्पयन्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि।

ऋतुफलम् -

ऊँ या: फलीर्नीऽअफलाऽअपुष्पायाश्च पुष्पिणी:।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हस:॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) फलं निवेदयामि। पुन: आचमनीयं निवेदयामि।

ताम्बूलम् -

ऊँ उतस्म्मास्यद्द्रवतस्तुरण्यत: पर्ण्णन्नवेरनुवाति प्प्रगर्द्धिन:।

श्येनस्ये वद्ध्रजतो ऽ अङ्क सम्परिदधिक्राब्ण्ण: सहो तरित्रत: स्वाहा।

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) ताम्बूलं समर्पयामि।

दक्षिणा - ॐ हिरण्यगब्भर समवर्तताग्रे भूतस्य जातइ पतिरेकऽआसीत्।

सदाधार पृथिवीन्द्यामुतेमा ‘स्मै देवाय हविषा व्विधेम॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... (प्रधान देव का नाम) दक्षिणां समर्पयामि।

पुष्पाञ्जलि -

जिस देवता का पूजन कर रहे है, उसी देव के स्तोत्र/ध्यान मन्त्रों का उच्चारण करते हुए पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।

ऊँ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्म्महे। स मे कामान् काम कामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नम:॥

ऊँ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ ịयं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्त पर्यायीस्यात् सार्वभौम: सार्वायुष आन्तादापरार्द्धात्ị पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति। तदप्येष शोकोभिगीतो मरुत: परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे। आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वे देवा: सभासद इति।

ऊँ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्।

सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एक:॥

ऊँ एक दन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात्: ॥

ऊँ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्र: प्रचोदयात् ॥

ऊँ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात् ॥

ऊँ कात्यायिन्यै विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि। तन्नो देवि प्रचोदयात् ॥

ऊँ दशरथाय विद्महे सीतावल्लभा च धीमहि। तन्नो राम् प्रचोदयात् ॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

प्रदक्षिणा - यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ॥

प्रणाम - यो न्न पिता जनिता यो व्विधाता धामानि व्वेदभुवनानि व्विश्श्वा ।

यो देवानान्नामधाऽएकऽएव त सम्प्रश्नम्भुवना यन्त्यन्न्या ॥

क्षमा प्रार्थना -

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।

पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।

तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष मां परमेश्वर॥

मत्समो नास्ति पापिष्ठांïस्त्वत्समो नास्ति पापहा ।

इति मत्वा दयासिन्धो यथेच्छसि तथा कुरू ॥

मन्त्रेणाक्षर हीनेन पुष्पेण विकलेन च ।

पूजितोऽसि महादेव तत्सर्वं क्षम्यतां मम ॥

अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवानेव दाता त्वदन्यं न याचे।

भवद्भक्तिमन्त: स्थिरां देहि मह्यां कृपाशीलशम्भो कृतार्थोऽस्मि यस्मात् ॥

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ क्रियादिषु ।

न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥

अनेन पूजनेन साम्बसदा शिव: प्रीयताम् ।

विसर्जनम् -

यान्तु देवगणा: सर्वे पूजामादाय मामकिम् ।

इष्टां काम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥

तिलकाशीर्वाद :-

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते ।

धान्यं धनं पशुं बहु पुत्र लाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायु:॥

मन्त्रार्था: सफ ला: सन्तु पूर्णा: सन्तु मनोरथा:।

शत्रूणां बुद्धिनाशोस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु,

गोवाजिहस्ति धनधान्य समृद्धिरस्तु।

शत्रुक्षयोऽस्तु निजपक्षमहोदयोऽस्तु

वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु॥

लोकाचार से यजमान का आरता करवाकर ग्रन्थिविसर्जन करावे ।

कार्य समाप्ति के पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन करवाकर दक्षिणा देकर सभी का आशीर्वाद लेवे ।

10.5. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों को प्रत्येक माङ्गलिक कार्य में प्रधान पूजन के विषय विशद् ज्ञान प्राप्त हुआ। साथ ही साथ सर्वतोभद्रमण्ड़ल के देवताओं की पूजनविधि के ज्ञान सहित प्रधान देवता के अर्चन के लिए वरुण कलश का स्थापन तथा प्रधान देवता के मूर्ति, यन्त्रादि के निर्माण समय में अग्नि, तपन, ताड़न, अवघातादि

दोष की निवृत्ति के लिए अग्न्युत्तारण तथा मूर्ति को देवता के रूप में स्थापित करने हेतु उसमें प्राणप्रतिष्ठा तथा शास्त्रीय विधि से उसका अर्चन करने तथा अर्चन से प्राप्त फल को पूर्णतया प्राप्त करने की विधि का ज्ञान प्राप्त हुआ।

10.6. शब्दावली

1. सर्वतोभद्र = सभी देवताओं की पूजन हेतु उपयोगी मण्ड़ल

2. शैव = शिव से सम्बन्धित

3. शाक्त = देवी से सम्बन्धित

4. अग्न्युत्तारण = अग्नि द्वारा शुद्धिकरण

5. पंचपल्लव = पीपल, आम, गूलर, बड़, अशोक

6. सप्तमृत्तिका = हाथी का स्थान, घोड़ा, वल्मीक, दीमक, नदी का संगम, तालाब, गौशाला+राजद्वार।

10.7. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : सर्वतोभद्र मण्ड़ल का निर्माण किस दिशा में किया जाता है ?

उत्तर : सर्वतोभद्र मण्ड़ल का निर्माण पूर्व दिशा में किया जाता है ।

प्रश्न - 2 : सामान्यतया सभी देवताओं के अर्चन में किस मण्ड़ल का पूजन किया जा सकता है ?

उत्तर : सामान्यतया सभी देवताओं के अर्चन में सर्वतोभद्र मण्ड़ल का पूजन किया जा सकता है ।

प्रश्न - 3 : सर्वतोभद्रमण्ड़ल में कितने कोष्ठकों का निर्माण किया जाता है ?

उत्तर : सर्वतोभद्रमण्ड़ल में 324 कोष्ठकों का निर्माण किया जाता है ।

प्रश्न - 4 : सर्वतोभद्रमण्ड़ल में कितने सूर्यो का आवाहन किया जाता है ?

उत्तर : सर्वतोभद्रमण्ड़ल में द्वादश (12) सूर्यो का आवाहन किया जाता है।

प्रश्न - 5 : नवीन मूर्ति का शुद्धिकरण क्यों किया जाता है ?

उत्तर : अग्नितपन, ताड़न, अवघातनादि दोषों को दूर करने के लिए नवीन मूर्ति का शुद्धिकरण किया जाता है।

10.8. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : भद्रमण्ड़ल से आप क्या समझते है ? विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 2 : सर्वतोभद्रमण्ड़ल में देवता के कौन-कौन से आयुधों का पूजन किया जाता है ?

प्रश्न - 3 : सर्वतोभद्रमण्ड़ल पर कलशस्थापन की विधि का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 4 : प्रधान मूर्ति अथवा यन्त्र के अग्न्युत्तारणादि विधि का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 5 : प्रधान पूजन की विधि बताइये ?

10.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।
2. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।
3. कर्मठगुरु: प्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन वाराणसी।
4. मन्त्रमहोदधिलेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्यसम्पादक - श्रीशुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
5. यज्ञमीमांसा सम्पादक - पं. वेणीराम शर्मा, प्रकाशक - चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

इकाई — 11

हवन — प्रकरण

इकाई की रूपरेखा

11.1. प्रस्तावना

11.2. उद्देश्य

11.3. विषय प्रवेश

1.4. सारांश

11.5. शब्दावली

11.6. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

11.7. लघुत्तरीय प्रश्न

11.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

11.1. प्रस्तावना

'यज् धातु से यज-याच-यत-विच्छ-प्रच्छ-रक्षो नङ् (3-3-30)। इस पाणिनीय सूत्र से 'नङ् प्रत्यय करने पर 'यज्ञ शब्द बनता है। 'नङन्त इस पाणिनीय लिङ्गानुशासन से यज्ञ शब्द पुल्लिङ्ग भी होता है। 'नङ् प्रत्यय भाव अर्थ में होता है किन्तु 'कृत्ल्युटो बहुलम् सूत्र पर 'बहुलग्रहणं कृन्मात्रस्यार्थ व्यभिचारार्थम् इस सिद्धान्त से कृदन्त के सभी प्रत्ययों का अर्थ आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है। धातु पाठ में 'यज् धातु का पाठ किया गया है 'धातव: अनेकार्था: इस वैयाकरण सिद्धान्त के अनुसार कतिपय आचार्यों ने 'यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु इस पाणिनीय सूत्र के अनुसार 'यज् धातु का देवपूजा सङ्गतिकरण और दान इन तीनों अर्थों में प्रयोग किया गया है अर्थात् यज्ञ में देवपूजा होती है, देवतुल्य तुष्टि महर्षियों का सङ्गतिकरण होता है।

11.2. उद्देश्य

1. यज्ञ के महत्त्व का ज्ञान प्राप्त करना।

2. यज्ञ के वैदिक मन्त्रों के उच्चारण का ज्ञान प्राप्त करना।

3. यज्ञ को सम्पादित करने की व्यवहारिक विधि का ज्ञान प्राप्त करना।

11.3. विषय प्रवेश

इन्द्रादि देवों का पूजन तथा सत्कार यज्ञ कहा जाता है। जिस कर्म विशेष में देवताओं के लिए अनुष्ठान किया जाए उसे यज्ञ कहते है। पूजा किये जाने वाले अर्थात् भगवान विष्णु को यज्ञ कहते है। जिस कार्य में देवगण पूजित होकर तृप्त हों, उसे यज्ञ कहते है।

धर्म, देश, जाति, वर्णाश्रम की मर्यादा की रक्षा के लिए महापुरुषों को एकत्रित करना यज्ञ कहलाता है। विश्व कल्याण के लिए जगद्भ्रमण करके महापुरुषों द्वारा बड़े-बड़े विद्वान, वैदिक मूर्धन्य व्याख्यानरत्नाकर लोग जहाँ निमन्त्रित हों, उसे यज्ञ कहते है। जिस सदनुष्ठान में अपने बन्धु बान्धव आदि स्नेहियों को परस्पर सम्मिलन के लिए आमन्त्रित किया जावे तो उसे यज्ञ कहते है। यथाशक्ति देशकाल, पात्रादि विचारपुरस्सर द्रव्योत्सर्ग करने को यज्ञ कहते है। जिसमें श्रद्धापूर्वक देवताओं के उद्देश्य से द्रव्य का त्याग किया जाये उसे यज्ञ कहते है। जिस कर्म में याचकों को सन्तुष्ट किया जाये उसे यज्ञ कहते है।

यज्ञ से तात्पर्य :-

1. जिस सदनुष्ठान द्वारा इन्द्रादि देवगण प्रसन्न होकर सुवृष्टि प्रदान करे, उसे यज्ञ कहते है। जिस सदनुष्ठान द्वारा स्वर्गादि की प्राप्ति सुलभ हो, संसार का कल्याण हो, आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक विपत्तियाँ दूर हो, यागाङ्ग समूह के एक फल साधनार्थ अपूर्व से युक्त कर्मविशेष को वैदिक मन्त्रों के द्वारा देवताओं को उद्देश्य करके किये हुए द्रव्य के दान को यज्ञ कहते हैं।

2. जहाँ पर देवताओं को उद्देश्य करके अग्नि में द्रव्य का प्रक्षेप किया जाए उसे यज्ञ कहते है।

3. यज् धातु का अर्थ देवपूजा आदि लोक और वेद में प्रसिद्ध ही है, ऐसा निरुक्त के विद्वान् कहते है अथवा जिस कर्म में लोग यजमान से अन्नादि की याचना करते हैं अथवा यजमान ही देवताओं से वर्षा आदि मनोकामना हेतु प्रार्थना करता है, यजुर्वेद के मन्त्रों की प्रधानता रहती है, उसे यज्ञ कहते है।

4. देवता के प्रति अपने द्रव्य उत्सर्जन करना यज्ञ कहलाता है।

5. जिस कर्म में देवता, हवनीय द्रव्य, वेदमन्त्र, ऋत्विज व दक्षिणा का संयोग हो, उसे यज्ञ कहते हैं।

यज्ञ व महायज्ञ :- यज्ञ के दो भेद होते हैं, एक यज्ञ व दूसरा महायज्ञ। जो अपने ऐहिक व पारलौकिक कल्याण के लिए पुत्रेष्टियाग व विष्णुयाग आदि करते हैं, उसे यज्ञ कहते हैं तथा जो विश्वकल्याणार्थ पाँच महायज्ञ आदि करते हैं, उसे महायज्ञ कहते हैं। यज्ञ और महायज्ञ के स्वरूप तथा इसकी विशेषता का वर्णन महर्षि भारद्वाज ने इस प्रकार किया है। 'यज्ञ: कर्मसु कौशलम् समष्टिसम्बन्धान्महायज्ञ। कुशलतापूर्वक जो अनुष्ठान किया जाये उसे 'यज्ञ कहते है। पश्चात् समष्टि सम्बन्ध होने पर उसी को महायज्ञ कहते है। इसी बात को महर्षि अङ्गिरा ने भी कहा है-'यज्ञमहायज्ञौ व्यष्टिसमष्टिसम्बन्धात्। व्यष्टि समष्टि से यज्ञ महायज्ञ कहे जाते है।

यज्ञ के भेद :- प्रधानतया यज्ञ दो प्रकार के होते हैं, श्रौत व स्मार्त्त। श्रुति प्रतिपादित यज्ञों को श्रौतयज्ञ और स्मृति प्रतिपादित यज्ञों को स्मार्त्त यज्ञ कहते हैं। श्रौतयाग में केवल श्रुति प्रतिपादित मन्त्रों का प्रयोग होता है और स्मार्त्त यज्ञ में वैदिक पौराणिक तान्त्रिक मन्त्रों का प्रयोग होता है। वेदों में अनेक प्रकार के यज्ञों का वर्णन मिलता है।

गौतम धर्मसूत्र (8-98) में यज्ञों का उल्लेख निम्नलिखित है। औपासन होम:, वैश्वदेवम्, पार्वणम्, अष्टका, मासिक श्राद्ध, श्रवण, शलगव इति सप्तपाकयज्ञसंस्था:। अग्निहोत्रम् दशपूर्णमासौ, आग्रगण्यम् चातुर्मास्यानि विरूढ़पशुबन्ध सौत्रामणि पिण्डपितृ यज्ञदयो हर्विहोम इति सप्त हविर्यज्ञसंस्था:। अग्निष्टोम अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य:, षोडशी, बाजपेय:, अतिरात्र:, आप्तोयमि इति सप्त सोम संस्था:। गौतमधर्म सूत्रकार ने पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ, सोमयज्ञ भेद से तीन प्रकार के यज्ञों का भेद बताकर प्रत्येक के सात-सात भेद बताकर 21 प्रकार के यज्ञों का उल्लेख किया है। वर्तमान समय में श्रौत यज्ञों का प्रचार नहीं के बराबर है। गृह्य सूत्रोक्त पाक यज्ञों का प्रचार किसी न किसी रूप में अवश्य प्रचलित है। उपर्युक्त 14 वैदिक यज्ञ व 7 पाकयज्ञों के अतिरिक्त गृह्यसूत्रों और धर्मसूत्रों में पञ्चमहायज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और मनुष्ययज्ञ पञ्चमहायज्ञों के अन्तर्गत ही आते हैं।

यज्ञ की प्राचीनता :- सनातन धर्म (हिन्दू जाति का) प्राचीन धर्मग्रन्थ वेद है। वेदों में कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड व ज्ञानकाण्ड, इन तीन विषयों का मुख्यत: वर्णन मिलता है किन्तु इन तीनों में प्रधान स्थान 'कर्मकाण्ड को ही

प्राप्त है। इसलिए वेदों में यज्ञ यागादि विविध क्रिया कलाप को ही यज्ञस्थान प्राप्त है। वेद मन्त्रों के बिना यज्ञ नहीं हो सकते हैं और यज्ञों के बिना वेदमन्त्रों का ठीक-ठीक सदुपयोग भी नहीं हो सकता है, अत: स्पष्ट है कि वेद है तो यज्ञ है और यज्ञ है तो वेद है। ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र 'अग्निमीले पुरोहितम् में 'यज्ञ पद आया है अत: सिद्ध होता है कि वेद से प्राचीन यज्ञ है। अब अनेक ऋषि महर्षियों के उन वचनों को उद्धृत करते है जिनसे यज्ञ के महत्व का सुन्दर रूप से परिचय हो सकेगा।

"अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भव:।

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञ: कर्मसमुद्भव:॥ (गीता, 3-14)

अर्थात् समस्त प्राणी अन्न से उत्पन्न होते है और अन्न की उत्पत्ति वर्षा से होती है, वर्षा यज्ञ से होती है तथा यज्ञ कर्म से होता है।

"अग्नौ प्रक्षिप्ताहुति: सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।

आदित्याज्जायते वृष्टि: वृष्टेरन्नं तत: प्रजा॥ (मनुस्मृति, 3-17)

अर्थात् अग्नि में विधि-विधान पूर्वक दी गयी आहुति सूर्यदेव को प्राप्त होती है, बाद में उससे वृष्टि होती है। वृष्टि से अन्न होता है तथा अन्न से प्रजा की उत्पत्ति होती है।

यज्ञकर्ता शक्रे लोके वसते शाश्वती समा:।

दानी चान्द्रीमसं प्रतीसौरं वज्रत्यलम्॥

अर्थात् यज्ञ करने वाला व्यक्ति इन्द्रलोक में सैकड़ों, हजारों वर्ष पर्यन्त निवास करता है, दान करने वाला मनुष्य सूर्यलोक को प्राप्त करता है।

यज्ञेन देवा विमलविभान्ति, यज्ञेन देवा अमृतत्वामाप्नुयु:।

यज्ञेन पापैबर्हुभिर्विमुक्त: प्राप्नोति लोकान् परमस्य विष्णो:॥ (महर्षि हारीत)

अर्थात् यज्ञ से सभी लोको में निर्मलता व सुन्दरता को प्राप्त करता है। यज्ञ से देवगण अमरत्व को प्राप्त करते हैं। यज्ञ से अनेक प्रकार के पापों को प्रक्षालन करके प्राणी भगवान विष्णु के परम वैष्णवधाम को प्राप्त करते है ।

यज्ञादिभिर्देवा: शक्तिसुखादिनाम्।। (महर्षि अङ्गिरा) अर्थात् यज्ञ करने से देवगण सन्तुष्ट होते है, उनकी सन्तुष्टता से मनुष्य शक्ति व सुखादि प्राप्त करता है।

कुण्ड व स्थण्ड़िल के अभाव में लौहपात्र में हवन का विधान :-

अथाग्रिकार्यं वक्ष्यामि कुण्ड़े वा स्थण्ड़िलेऽपि वा ।

वेद्यां वाप्यायसे पात्रे मृन्मये वा नवे शुभे।।

यदि हवन के लिए कुण्ड -स्थण्ड़िलादि सम्भव न हो तो लोहे के पात्र में या मिट्टी के नये पात्र में हवन कराने की भी शास्त्रों में सम्मति है।

हवन में अग्रि का विचार :- हवन के कार्य में अरणि से उत्पन्न, सूर्यकान्तमणि से उत्पन्न और श्रोत्रिय के घर की अग्रि उत्तम मानी गयी है, अपने घर की अग्रि मध्यमफलदायी होती है।

देवल के मतानुसार अग्रि प्रज्वलन :- हवन में अग्रि को पत्ता, हाथ, छाजला, कपड़ा और पंखे से प्रज्वलित नहीं करना चाहिए। पत्ते से रोग, हाथ की हवा से मृत्यु, शूर्प से धननाश, वस्त्र से व्यर्थता ओर पंखे से दुःख प्राप्त होता है।

हवन योग्य अग्रि :- छोन्दोग्योपरिशिष्ट के अनुसार ज्वालाहीन और अङ्गारहीन अग्नि में हवन नहीं करना चाहिए। अप्रज्वलित अग्रि में हवन करने से यजमान रोगी और दरिद्र हो जाता है। कापिल स्मृति का भी यही मत है कि प्रदीप्त ज्वालायुक्त अग्रि में ही हवन करना चाहिए ।

स्रुक् से ही आहुति देवे :-

स्रुच् के बिना हाथ से आहुति देने पर होता अपने यजमान को स्वर्गलोक से प्रच्युत कर देता है। अत: स्रुक् से ही हवन करे। अग्रिकुण्ड में हुत किया गया पुरोड़ाश कुण्ड से अन्यत्र नहीं गिरना चाहिए।

अग्निजिह्वाओं के नाम, दिशा एवं उनमें काम्य कर्म :-

अग्निजिह्वा	दिशा	काम्य कर्म
काली	पूर्व	शान्तिक और पौष्टिक कर्म
कराली	अग्निकोण	शान्तिक और पौष्टिक कर्म
मनोजवा	दक्षिण	अभिचारिक कर्म
सुलोहिता	नैऋर्त्य	उच्चाटन
धूम्रवर्णा	पश्चिम	-
स्फुलिङ्गिनी	वायव्य	-
विश्वरुचि	उत्तर	सर्वकार्य सिद्धिदायक
चलायमाना	-	-

अन्य मत से वाचस्पति के अनुसार कराली, धूमिनी, श्वेता, लोहिता, नीललोहिता, सुपर्णा और पद्मरागा ये अग्नि की सात जिह्वायें है।

संग्रहकार के मतानुसार विवाह में पश्चिम की जिह्वा, उपनयन में उत्तरदिशा की जिह्वा, पितृकर्म में दक्षिणदिशा की जिह्वा, सभी कार्यो में अग्निकोण की और उग्र अनुष्ठानों में ईशानकोण की अग्निजिह्वा का उपयोग प्रशस्त है।

यज्ञ में ग्राह्य घृत :-

गाय का घृत यज्ञ में उत्तम माना गया है, भैंस का मध्यम तथा बकरी का घृत निकृष्ट बताया गया है।

आज्य के अभाव में अन्य (पिङ्गल के मत से) :-

भरद्वाज ऋषि का मत है कि सर्वत्र घृत ही काम में लेना चाहिए, तैल कभी नहीं तथापि कार्यविशेष के अनुसार आज्य के अभाव में तिलों का तैल लेना चाहिए। यदि यह भी नहीं मिले तो यव, व्रीहि या श्यामक धान्य के

आटे को जल में मिलाकर उससे काम निकाल लेना चाहिए। वृक्षों के भी तैल लिए जा सकते है, किन्तु पुन्नाग, अरीठा व एरण्ड़ का तैल निषिद्ध है।

पूर्णपात्र :- भोजन पर्याप्त मात्रा में जिस पात्र में हो जाये, उसके समान पात्र को पूर्णपात्र के रूप में ग्रहण करना चाहिए। यह पूर्णपात्र यव या व्रीहि से भरना चाहिए । सामान्यत: यज्ञ की पूर्णता हेतु चार पूर्णपात्रों का उपयोग होता है, घृत-चावल-बूरा-तिल से पूरित चार पूर्णपात्र जो कि आचार्य, ब्रह्मा आदि को दिये जाते हैं।

यज्ञ सामग्री लाने हेतु नियम :- शङ्खस्मृति के अनुसार यज्ञ की समिधायें, पुष्प-कुशा आदि को ब्राह्मण स्वयं ही लावे, अन्य (क्षत्रिय,वैश्य के अतिरिक्त - पूर्वकाल में जाति का निर्धारण कर्म से होता था, न कि जन्म से) के लाने पर कर्मफल नष्ट हो जाता है। यदि कोई अन्य जाति का व्यक्ति ले भी आता है, तो उन दर्भा-समिधा आदि वस्तुओं का वेदोक्त पवमान सूक्त से प्रोक्षण करना चाहिए।

बिना दर्भाधारण किये हुए सन्ध्या करना, बिना जल लिये हुए दान-सङ्कल्प करना और बिना गिनती किये हुए जप करना निष्फल हो जाता है।

श्रौत-स्मार्त यज्ञों में हरे रंग की दर्भा, किन्तु पञ्चमहायज्ञों में पीतवर्ण वाली दर्भा, वैश्वदेव कर्म में कल्माष दर्भायें और पितृकर्म में जड़वाली दर्भायें लेनी चाहिए। दर्भा के अभाव में दूर्वा

दर्भा, कृष्णमृगचर्म, मन्त्र, ब्राह्मण, हवि, यज्ञाग्रियाँ सदैव पवित्र रहते है, इन्हें बारम्बार काम में ले सकते है।

जिन दर्भाओं में से अन्य अंकुर न निकले हो, वे दर्भा कहलाती है, जिनमें से अन्य अंकुर निकल गये हो, वे कुशा मानी गयी है। जड़ सहित को कुतपा कहते है और जिनकी नोकें टूट गयी हो, वे घास के समान है।

कुशनिर्मित ब्रह्मा, विष्टर और पवित्र का प्रमाण :-

पचास (50) कुशा का ब्रह्मा बनाया जाता है और पच्चीस (25) कुशा का विष्टर होता है। दक्षिणावर्त वाला ब्रह्मा बनता है और वामावर्त्त वाला विष्टर। अनन्तगर्भ वाला, साग्रभागवाला तथा द्विदलवाला प्रादेशमात्र का कुशनिर्मित पवित्र बनता है।

यज्ञायुध :-

स्रुवा, स्रुची, उपयमन कुशा, स्फ्य, प्रणीता, प्रोक्षणी, अग्निहोत्रहवनी, शूर्प, कृष्णचर्म, शम्या, ऊखल, मूसल, दृषत् और उपल, अरणि, मन्था, ओबली, रज्जु, दण्ड, बर्हि, कूर्च, धरमासन्दी, सम्भरणी, शङ्कु, यूप, चमस, अभ्री, ऊखल, मुसल, इड़ापात्री आदि श्रौतयज्ञों में काम में आने वाले पात्रविशेष यज्ञायुध है।

1. स्रुक् अथवा स्रुव :- खैर या वरना की लकड़ी का स्रुव, बनाना चाहिए। इसके 24 अङ्गुलों में छ: देवताओं (अग्नि, रुद्र, यम, विष्णु, शक्र और प्रजापति) का प्रमाण है।

संग्रहकार के अनुसार शमी (सफेद कीकर) का स्रुव होना चाहिए। इसके अभाव में अन्य वृक्ष का बनाया जाये, किन्तु खैर का स्रुव सर्वसिद्धिदायक होता है। शौनकऋषि के अनुसार स्रुव खैर की लकड़ी का और जुहू पलाश की लकड़ी की होती हे। स्रुव के अभाव में पलाश से भी हवन कर सकते है और यदि पलाश (छीला) का भी पत्ता न मिले तो पीपल के पत्तें से भी हवन कर सकते है।

स्रुव के 24 अङ्गुलों में नीचे से चार-चार अङ्गुल में क्रमश: अग्नि, रुद्र, यम, विष्णु, शक्र और प्रजापति का स्थान माना गया है। इन सभी में विष्णु का स्थान ही सर्वकर्मों में श्रेष्ठफलदायी माना गया है।

2. स्रुची :- यह 36 अङ्गुल लम्बी होती है, इसका मुख इसका गौमुख के समान पुष्कल होता है। स्रुची के अग्रभाग के छठे हिस्से के माप के बराबर स्रुचीमुख की गहराई होती है। खैर की लकड़ी की स्रुची बनानी चाहिए। खदिर के अभाव में पलाश, पीपल या अन्य हवनीय समिधा के वृक्ष की काष्ठ से स्रुची का निर्माण किया जा सकता है। स्रुची से हवनान्त में पूर्णाहुति में गोलागिरि/बताश/सुपारी को स्थापित करके अग्नि में स्रुचि की सहायता से घृतसहित समर्पित किया जाता है।

4. प्रणीता :- बारह (12) अङ्गुल लम्बा व चौकार प्रणीता पात्र होता है और उसको गहराई इतनी ही होनी चाहिए कि जिसमें एक प्रस्थ जल भर जाये।

5. प्रोक्षणीपात्र :- वरण लकड़ी का बना हुआ बारह (12) अङ्गुल विस्तृत कमलाकार प्रोक्षणी पात्र होता है। वरण वृक्ष को वरुण (वरना/विलि/वायवरणा/भाटवरणा/वरणी) कहते हैं।

6. आज्यस्थाली :- यह कांस्य की होनी चाहिए तथापि उसके विकल्प में मिट्टी के पात्र का भी विधान (अति आवश्यकता में) बताया गया है।

7. चरुस्थाली :- चरुस्थाली मिट्टी या उदुम्बर की बनानी चाहिए। एक भाष्यकार ने उदुम्बर की स्थाली को ताम्र की बताई है।

हविष्यान्न :- भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में अनेक हविष्यान्न बताये गये है, जिनमें कई जगह विरोध भी प्रतीत होता है किन्तु पय, यवागू, घृत, ओदन, दही, तण्डुल, मधु, व्रीहि, यव हविष्यान्न के रूप में ग्राह्य है। हविष्यान्न में व्रीहि उत्तम माना गया है, उनके अभाव में दही या दूध से हवन का उल्लेख मिलता है।

हवि के जितने द्रव्य पदार्थ है, उन्हें स्रुवे से तथा कठोर द्रव्यों का हाथ से हवन करना चाहिए।

भूख, प्यास या क्रोध से आक्रान्त होकर या मन्त्ररहित तथा अप्रज्ज्वलित एवं अत्यधिक धुआँ वाली अग्नि में हवन करना निषेध है। कम रुखी चिन्गारियाँ जिस अग्नि में से निकल रही हो, बायीं ओर जिसकी लपटें जा रही हो, देखने पर भयावह प्रतीत होती हो, देखने पर काली लपटे, दुर्गन्ध युक्त अग्नि में हवन करना भी निषेध है।

शाकल्य निर्माण (उदाहरणतया) :-

सामग्री	**मात्रा**
तिल (कृष्ण/श्वेत)	1000 ग्राम
चावल	500 ग्राम
यव	250 ग्राम
बूरा	500 ग्राम अथवा तिल के समान मात्रा तक

अन्य द्रव्य गुग्गुल, अगर, तगर, इन्द्रजौ, कर्पूर काचरी, सफेद व लाल चन्दन का बुरादा, चन्दन, दशाङ्ग धूप, मरोड़फली, बिल्वगिरि, पञ्चमेवा, जटामांसी, भोजपत्र, नागरमोथा, कमलगट्टा इत्यादि।

नोट :- प्रधान पूजन के हवन के अनुसार सामग्री का चयन करे।

हवन की मुद्रायें :- सामान्यतया हवन के समय मृगीमुद्रा द्वारा आहुति देनी चाहिए।

मुद्रायें	कर्म	संज्ञा
1. मिली हुई अनामिका-मध्यमा-अङ्गुष्ठ से	शान्तिकार्य में	मृगी
2. तर्जनी रहित न्युब्ज हाथ से	फलमूल हवन में	मयूरी
3. अङ्गुष्ठष्यन्त्रित उत्तान अङ्गुलियों से	पत्रपुष्प-हवन,	जारण-मारण-कर्म कुक्कुटी
4. कनिष्ठिका रहित हाथ से	यव-तिल हवन, पौष्टिक कर्म	हंसी
5. पाँचों अङ्गुलियों को एक साथ मिलाकर	वशीकरण-उच्चाटन	सूकरी

पंचभूसंस्कारा: (कुण्ड अथवा स्थण्ड़िल में अग्नि प्रज्ज्वलित करने से पूर्व पञ्च संस्कार करने चाहिए- 1. परिसमूहन, 2. उपलेपन, 3. उल्लेखन, 4. उद्धरण, 5. अभ्युक्षण) -

गौरसर्षपान् विकिरयेत् (बायें हाथ में पीली सरसों लेकर दायें हाथ से कुण्ड /स्थण्ड़िल में विकिरण करे।) -

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा: सर्वतो दिशम्।

सर्वेषामवरोधेन हवनकर्म समारभे ।।

पवित्रीकरणम् (कुण्ड /स्थण्ड़िल में जल से छिंटा लगावे) :-

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तान ऽऊर्ज्जेदधातन .... 0 ।।

1. परिसमूहनम् (दर्भा लेकर तीन बार कुण्ड /स्थण्ड़िल पर अन्योन्य सामग्रियों को ईशान की ओर हटा देवे तथा उस कुशा को ईशान में त्याग देवे) - कनिष्ठाङ्गुष्ठमध्यत: मूलधृतैस्त्रिभिर्दर्भाग्रै: दक्षिणत: उदक्संस्थं त्रि: परिसमुह्य।। तान्कुशानैशान्यां परित्यजेत्।

2. गोमयोदकेन उपलेपनम् (गाय का गोबर व गोमूत्र से कुण्ड /स्थण्ड़िल का लेपन करे) - दक्षिणत: उदक्संस्थं गोमयो-दकेन त्रिरुपलेपयेत्।

3. उल्लेखनम् (स्रुव के मूलभाग से कुण्ड /स्थण्ड़िल में प्रादेशमात्र तीन रेखायें खींचे) - स्रुवमूलेन द्वादशाङ्गुला प्रागग्रा तिस्रो रेखा: उल्लेखयेत्।

4. उद्धरणम् (प्रत्येक रेखा पर अनामिका अङ्गुष्ठ से किञ्चित् मिट्टी को पृथक्-पृथक् उठाकर ईशान की ओर त्याग देवे) - प्रतिरेखात: अंगुष्ठानामिकाभ्यां अंगुष्ठात् अनामिकापर्यन्तं त्रिवारं पांसूनुद्धृत्य ऐशान्यां परित्यजेत्।

5. अभ्युक्षणम् (हाथ में जल लेकर प्रत्येक रेखा पर उल्टे हाथ से जल डाले) - प्रतिरेखां न्युब्जमुष्ठिना प्राजापत्यतीर्थेन उदकेन त्रिरभ्युक्षेत ।

कुशकण्डिका

दक्षिणतो ब्रह्मासनम् । (वेदी/स्थण्ड़िल के दक्षिण दिशा की ओर ब्रह्मासन पर कुशा से निर्मित ब्रह्माजी की स्थापना करते हुए ब्रह्माजी का "ब्रह्मज्ञानं ... इत्यादि मन्त्र से पूजन करे)

ब्रह्माणम् स्थापयेत्। पूजयेत्।

प्रार्थयेत् :- यावत्कर्म समाप्ति: स्यात् तावत्त्वं ब्रह्मा भव ।

उत्तरत: प्रणीतासनम (उत्तर दिशा की ओर प्रणीता-प्रोक्षणी की स्थापना करे) - मृण्मयं वा प्रणीतापात्रं त्रिवारं वारिणापूर्य्य ।

ऊँ प्रणय ऊँ प्रणय ऊँ प्रणय (बोलते हुए पात्र में जल डाले)

परिस्तरणादि कर्म -

पहले चौसठ कुशापात्र ले । इनमें से सोलह कुशापात्र लेकर अग्निकोण से ईशानकोण तक वेदी के पास रखे । फिर सोलह कुशाएँ नैऋत्यकोण से वायव्यकोण तक फैला देवे। इसके पश्चात् अग्नि के उत्तरभाग से पश्चिम दिशा में तीन कुशा और दो कुशा पवित्री के लिए स्थापित करे। अब प्रोक्षणीपात्र, घी के लिए कांस्यपात्र (भगोनी अथवा कचौला) रखे। फिर स्रुवा, पोंछने के लिए तीन कुशाएँ, हाथ में रखने के लिए तीन कुशाएँ, तीन समिधाएँ, घी, चावलों के पूर्ण पात्र पूर्व पूर्व क्रम से रखे। पवित्री के लिए रखे गये दो कुशापात्रों को आगे से आठ अङ्गुल

नाप कर तीन कुशाओं से तोड़ लेवे और आगे के कुशापात्रों से पवित्री बनाकर धारण करके इसी पवित्री से युक्त हाथ से प्रणीता के जल को तीन बार प्रोक्षणीपात्र में डालें। फिर अनामिका एवम् अङ्गुष्ठ से पवित्री ग्रहण करके जल को तीन बार ऊपर की ओर उछालें। फिर प्रणीता का जल प्रोक्षणी में मिलावे। इसके बाद प्रोक्षणी पात्र स्थापित करके घृत के पात्र में घृत डाले । घी के पात्र को अग्नि पर गर्म करे। फिर कुशा को जलाकर घी ऊपर घुमाकर अग्नि में छोड़ देवे। इसके बाद अधोमुख स्रुवा को अग्नि पर गर्मकरके सम्मार्जन हेतु रखे। फिर तीन कुशाओं को लेकर उन के अग्रभाग से स्रुवा के भीतरी एवं मूल भाग से स्रुवा के मूल में बाहर से पोंछकर प्रणीता के जल से स्रुवा को सींचे। पुन: स्रुवा को तपावें और उसे दक्षि ण की तरफ रख देवे, तत्पश्चात् घी के पात्र को अग्नि के ऊपर से हटाकर जैसे प्रोक्षणी में से उछाला गया था वैसे ही कुशा से उछालकर उसमें यदि तृण, लोम, कीट आदि कोई वस्तु यदि गिर गयी हो तो उसे निकाल कर प्रोक्षणी के समान घी उछाले। फिर उपयमन हेतु रखे हुए तीन कुशा लेकर खड़े होकर ब्रह्मा का मन में स्मरण करते हुए घी युक्त तीन समिधाओं को अग्नि में छोड़े, फिर बैठकर अग्नि के चारों ओर तीन बार जलसिञ्चन करे, तत्पश्चात् दाहिना घुटना मोड़कर ब्रह्मा से अपने तक कुशा रखकर प्रज्वलित अग्नि में स्रुवा से घी की आहुति दे तथा स्वाहा कहते ही अग्नि में आहुति देव और इदम् कहते ही प्रोक्षणी पात्र में शेष घी डाल देवे।

तत: बर्हिष चतुरोभागान्विधायैकैकभागेन चतुर्दिक्षु अग्रेण मूलमाच्छाद्य वारत्रयं परिस्तरेत्

1. आग्नेयादीशान्तम् 2.ब्रह्मणोऽग्निं पर्यन्तं

3. नैऋत्याद्ः वायव्यान्तं 4. अग्नित: प्रणीतापर्यन्तम् ।

पात्रसादनम् -

अग्नेरुत्तरत: पश्चिमदिशि कुशोपरि पवित्रच्छेदनानि त्रीणि तृणानि, पवित्रे द्वे, प्रोक्षणीपात्रम्ः आज्यस्थाली, चरुस्थाली, सम्मार्जनकुशा पञ्च त्रीणि वा उपमयन कुशा: सप्त, समिध: तिस्र:, स्रुव:, स्रुक्, आज्यं, तण्डुला:, पूर्णपात्रम्, तिल-यव, ग्रहसमिध अन्यद् हवनीयं च आसादयेत् - तत: कुशद्वयं प्रादेशमात्रं वामहस्ते धृत्वा तत्र कुशत्रयं दक्षिणहस्तेन कुशद्वयोपरि निधाय, कुशद्वयं कुशत्रयोपरि प्रदक्षिणीकृत्य छिन्द्यात् । कुशपत्रद्वयं ग्राह्यम्, कुशत्रयमुत्तरत: क्षिपेत् ।

प्रोक्षणीसंस्कार: -

प्रणीतासन्निधौ प्रोक्षणीपात्रं निधाय, सपवित्रहस्तेन त्रि: प्रणितोदकमासिच्य अनामिकाङ्गष्ठाभ्यामुत्तराग्रे पवित्रे धृत्वा त्रिरुत्पवनम् । तत: प्रोक्षणीपात्रं सव्यहस्ते कृत्वा अनामिकाङ्गष्ठाभ्यां सपवित्रं हस्तेन त्रिरुदिङ्गनम् (जलोच्छालनम्) । आसादितद्रव्याणि प्रोक्षणं कृत्वा अग्निप्रणीतयोर्मध्ये प्रोक्षणीपात्रं निदध्यात्।

अधिश्रयणम्ं - आज्यस्थाल्यामाज्यं निर्वाप्य, चरुस्थाल्यां तण्डुलान् त्रि: प्रक्षाल्य, प्रणीतोदकेनआसिंच्य, अग्निमध्ये चरुं दक्षिणे आज्यं च निदध्यात्।

स्रुव-संस्कार: - अधोमुखस्रुवं त्रि: प्रतप्य वामकरे उत्तानं कृत्वा, दक्षिणकरेण संमार्जनकुशाग्रैर्मूलतोऽग्रपर्यन्तं, मूलैर्बाह्यत: संमृज्य, प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्य, पुन: प्रतप्य दक्षिणत: कुशोपरि निदध्यात्ं। तत: आज्यं चरो: पूर्वेणानीय अग्रे धृत्वा, आज्य पश्चिमेन चरुमानीय, आज्यस्योत्तरतो निदध्यात्। पवित्राभ्यामाज्योत्पवनम् । अपद्रव्यनिरसनम् । पुरतो निदध्यात् । पवित्रयो: प्रोक्षणी पात्रे निधानम्। उपमयनकुशान् वामकरे गृहीत्वा तिस्रो घृताक्ता: पालाश्य: समिधादाय प्रजापतिं मनसा ध्यात्वा उत्थाय ऊँ समिधोऽभ्याधाय स्वाहा इत्यग्नौ क्षिपेत् । तत: उपविश्य दक्षिण चुलुकगृहीतेन सपवित्रेण प्रोक्षण्युदकेन अग्रे ईशानादारभ्य ईशानपर्यन्तं प्रदक्षिणाक्रमेण पर्युक्षणम् इतरथावृत्ति:। पवित्रे प्रणीतापात्रे निधाय संश्रवधारणार्थं प्रोक्षणीपात्रं प्रणीताग्न्योर्मध्ये वायव्ये वा संस्थाप्य।

सङ्कल्प - हाथ में अक्षत पुष्प दर्वा लेकर संकल्प करें

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु:श्रीमद्ंभगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयो: पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मंणानां सन्निधौ ब्रह्मंणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्र: (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मन: श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य

समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशे: नामराशे: वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्ठमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तै: सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं हवनकर्म कर्माङ्गिभूतं आवाहितदेवतानां ग्रहमण्डलस्थ देवानां गौर्यादिमातृका सप्तघृतमातृका वास्तु-मण्डलस्थदेवतानां योगिनी-मण्डलस्थ-देवतानां क्षेत्रपाल-मण्डलस्थ-देवानां भद्रमण्डलस्थदेवानां प्रधानहवनं श्रीसूक्त होम: स्विष्टकृद्धोम: दिग्पालपूजनबलिदानञ्च पूर्णाहुति: सहित वसोर्द्धारासहित दक्षिणादानादिसङ्कल्पादि च कर्मञ्च अहं करिष्ये।

अग्निस्थापन -कांस्यपात्रस्थं निर्धूमवह्निं द्वितीयपात्रेण पिहितं कुण्डे/स्थण्डिले वा (स्थण्डिलाद्‌बहिराग्नेयां दिशि निधाय। क्रव्यादांशं नैऋत्यां दिशि परित्यज्य।

अग्निं संस्थाप्य-

ऊँ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽस्यपादा द्वेशीर्षे सप्तहस्तासो ऽ अस्य।

त्रिधावद्धो वृषभोरोरवीति महोदेवो मर्त्यां 2 आविवेश॥

अग्नि से प्रार्थना करे :- अग्नि के सात हाथ है, चार सींग है, सात जिह्वाये है, दो सिर है, तीन पैर है, प्रसन्न मुख है, सुखासन से बैठी है, उसमें से ऊपर की ओर देदीप्यमान ज्वालायें निकल रही है। दाहिनी ओर स्वाहा और बाईं और स्वधा देवी विराजित है, दाहिने हाथ में शक्ति, अन्न, स्रुवा औश्र स्रुग् लिए हुए है तथा बायें हाथ में तोमर, व्यजन और घृतपात्र धारण किये हुए है, वृषभ पर सवार है, जटाधारी है, गौरवर्ण है, धूम्रवर्ण की उसके ध्वजा है, नेत्र लाल है, सप्तार्चि है और अपनी ओर मुख करके मानो बैठा है - ऐसे अग्निदेव का नमस्कार है।

अथ दक्षिणजानुं पातयित्वोपविष्टो, हृदि सव्यहस्तं दत्त्वा ब्रह्मणान्वारब्ध: स्रुवेणाज्यं जुहुयात् (दक्षिण घुटना झुकाकर तथा बायाँ घुटना ऊपर करके बैठे तथा ब्रह्माजी का अन्वारब्ध करके स्रुवे से घृत की आहुति देवे)।

1. ऊँ प्रजापतये स्वाहा (मनसा) इदं प्रजापतये न मम।

2. ऊँ इन्द्राय स्वाहा इदं इन्द्राय न मम।

3. ऊँ अग्नये स्वाहा इदं अग्नये न मम।

4. ऊँ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम।

किंचित्घृत प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेप (अग्नि में घृत की आहुति देने के पश्चात् वायव्यकोण में स्थित प्रोक्षणीपात्र में आहुति पश्चात् स्रुवे में शेष घी का त्याग करे।) :-

अग्निपूजनम् :- ऊँ अग्निन्दूतम्पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवा 2ऽ आसाद-यादिह ॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: .... अग्नये नम:।। गन्धादिभि: सम्पूज्य ।

वरुणाहुति: (वरुणदेव के के लिए केवल घृत की आहुतियाँ देवे) :-

1. ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि स्वाहा।

2. ऊँ व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्थो स्वाहा।

3. ऊँ व्वरुणस्य ऽऋतसदन्यसि स्वाहा।

4. ऊँ व्वरुणस्य ऽऋतसदनमसि स्वाहा।

5. ऊँ व्वरुणस्य ऽऋतसदनमासीद स्वाहा। अनेन हवनेन वरुण: प्रीयताम्।

आवाहितांदेवतानां स्वाहाकारः - (आवाहित देवताओंकास्वाहाकार)

गणेशादिपञ्चदेवानां हवनम(गणेश सहित पांच देवताओंका हवन)

1. ऊँ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा

निधिपति हवामहे व्वसोमम। आहम जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्॥

ऊँ भूर्भुव: स्व: गणपतये स्वाहा। गणपतये न मम।

2. ऊँ आयङ्गौ: पृश्निरक्क्रमीदसदन्मातरम्पुर:। पितरञ्चप्प्रयन्त्स्व:।।

ऊँ भूर्भुव: स्व: गौर्य्यै स्वाहा। गौर्य्यै न मम्।

3. ॐ स्य कूर्मो ....0।। ॐ भूर्भुव: स्व: कूर्मायै स्वाहा। कूर्मायै न मम।

4. ॐ नमोस्तु ...0।। ॐ भूर्भुव: स्व: अनन्तायै स्वाहा। अनन्ताय न मम्।

5. ॐ स्योना ....0।। ॐ भूर्भुव: स्व: पृथिव्यै स्वाहा पृथ्वीं न मम ।

अनेन हवनेन गणपत्यादि देवा: प्रीयन्तां न मम।

ग्रहमण्डलस्थ देवानां स्वाहाकार: (ग्रहमण्डल देवताओं का स्वाहाका)

नवग्रहाणां स्वाहाकार: (नवग्रहों का स्वाहाकार)

1. ॐ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।। - ॐ सूर्याय स्वाहा। (अर्क-समिधा की आहुति देवे)

2. ॐ इमन्देवा ऽ असपत्न œ सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इमममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ठं0 राजा।। - ॐ चन्द्रमसे स्वाहा। (पलाश-समिधा की आहुति देवे)

3. ॐ अग्निर्मूर्द्धादिव: ककुत्पति: पृथिव्या ऽ अयम्। अपा œ रेता œ सिजिन्वति।। - ॐ भौमाय स्वाहा। (खदिर-समिधा की आहुति देवे)

4. ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स œ सृजेथामयञ्च । अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत। - ॐ बुधाय स्वाहा। (अपामार्ग-समिधा की आहुति देवे)

5. ॐ बृहस्पते ऽ अतियर्दोऽअर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु । द्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ।। - ॐ गुरवे स्वाहा। (पीपल-समिधा की आहुति देवे)

6. ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पय: सोमं प्रजापति:। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपान œ शुक्क्रमन्धस ऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतम्मधु ।। - ॐ शुक्राय स्वाहा। (उदुम्बर -समिधा की आहुति देवे)

7. ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्यऽआपोभवन्तु पीतये । शँयोरभिस्रवन्तुन:।। - ऊँ शनैश्चराय स्वाहा । (शमी-समिधा की आहुति देवे)

8. ऊँ कयानश्चित्रऽआभुवदूती सदावृध: सखा । कयाशचिष्ठ्या व्वृता ॥ - ऊँ राहवे स्वाहा । (दूर्वा की आहुति देवे)

9. ऊँ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्याऽअपेशसे। समुषद्भिरजायथा:।। - ऊँ केतवे स्वाहा। (कुशा की आहुति देवे)

अधिपति देवानां स्वाहाकार: (अधिपति का स्वाहाकार)

01. ऊँ ईश्वराय स्वाहा । 02. ऊँ उमायै स्वाहा । 03. ऊँ स्कन्दाय स्वाहा ।

04. ऊँ विष्णवे स्वाहा । 05. ऊँ ब्रह्मांणे स्वाहा । 06. ऊँ इन्द्राय स्वाहा ।

07. ऊँ यमाय स्वाहा। 08. ऊँ कालाय स्वाहा। 09. ऊँ चित्रगुप्ताय स्वाहा।

प्रत्याधिपति देवानां स्वाहाकार: (प्रत्याधिपति का स्वाहाकार)

01. ऊँ अग्नये स्वाहा। 02. ऊँ अद्भ्य: स्वाहा। 03. ऊँ धरायै स्वाहा।

04. ऊँ विष्णवे स्वाहा। 05. ऊँ इन्द्राय स्वाहा। 06. ऊँ इन्द्राण्यै स्वाहा।

07. ऊँ प्रजापतये स्वाहा। 08. ऊँ नागेभ्य: स्वाहा। 09. ऊँ ब्रह्मणे स्वाहा।

दिक्पालानां स्वाहाकार: :- (दिकपालों का स्वाहाकार)

01. ऊँ इन्द्राय स्वाहा । 02. ऊँ अग्नये स्वाहा । 03. ऊँ यमाय स्वाहा ।

04. ऊँ निऋर्तये स्वाहा । 05. ऊँ वरुणाय स्वाहा । 06. ऊँ वायवे स्वाहा ।

07. ऊँ सोमाय स्वाहा । 08. ऊँ ईशानाय स्वाहा । 09 ऊँ ब्रह्मांणे स्वाहा ।

10. अनन्ताय स्वाहा। ऊँ असंख्यातरुद्रेभ्य: स्वाहा।

अनेन हवनेन ग्रहमण्डलस्थदेवताभि: सह असंख्यातरुद्रा: प्रीयन्ताम् न मम।

गौर्यादिमातृका-स्वाहाकार: (गौरी आदि मातृकाओं का स्वाहाकार)

1. ऊँ गणपतये स्वाहा। 2. ऊँ गौर्यै स्वाहा। 3. ऊँ पद्मायै स्वाहा।

4. ऊँ शच्यै स्वाहा। 5. ऊँ मेधायै स्वाहा। 6. ऊँ सावित्र्यै स्वाहा।

7. ऊँ विजयायै स्वाहा। 8. ऊँ जयायै स्वाहा। 9. ऊँ देवसेनायै स्वाहा।

10. ऊँ स्वधायै स्वाहा। 11. ऊँ स्वाहायै स्वाहा। 12. ऊँ मातृभ्य: स्वाहा।

13. ऊँ लोकमातृभ्य: स्वाहा। 14. ऊँ धृत्यै स्वाहा। 15. ऊँ पुष्टïï्यै स्वाहा।

16. ऊँ तुष्ट्यै स्वाहा। 17. ऊँ आत्मकुलदेव्यै स्वाहा।

सप्तघृतमातृका स्वाहाकार: - (सप्तघृत मातृकाओं का स्वाहाकार)

1. ऊँ श्रियै स्वाहा। 2. ऊँ लक्ष्म्यै स्वाहा। 3. ऊँ धृत्यै स्वाहा।

4. ऊँ मेधायै स्वाहा। 5. ऊँ स्वाहायै स्वाहा। 6. ऊँ प्रज्ञायै स्वाहा।

7. ऊँ सरस्वत्यै स्वाहा।

अनेन हवनेन सगणेशगौर्यादिषोड़शसप्तमातृका सहिता प्रीयन्ताम् न मम।

वास्तु-मण्डलस्थदेवतानां स्वाहाकार: (वास्तु मण्डल देवताओं का स्वाहाकार)

1. ऊँ शिखिने स्वाहा। 2. ऊँ पर्ज्जन्याय स्वाहा। 3.ऊँ जयन्ताय स्वाहा।

4. ऊँ कुलिशायुधाय स्वाहा। 5. ऊँ सूर्याय स्वाहा। 6. ऊँ सत्याय स्वाहा।

7. ऊँ भृशाय स्वाहा।
8. ऊँ आकाशाय स्वाहा।
9. ऊँ वायवे स्वाहा।
10. ऊँ पूष्णे स्वाहा।
11. ऊँ वितथाय स्वाहा।
12. ऊँ गृहक्षताय स्वाहा।
13. ऊँ यमाय स्वाहा।
14. ऊँ गन्धर्वाय स्वाहा।
15. ऊँ भृङ्गा़राजाय स्वाहा।
16. ऊँ मृगाय स्वाहा।
17. ऊँ पितृभ्य: स्वाहा।
18. ऊँ दौवारिकाय स्वाहा।
19. ऊँ सुग्रीवाय स्वाहा।
20. ऊँ पुष्पदन्ताय स्वाहा।
21. ऊँ वरुणाय स्वाहा।
22. ऊँ असुराय स्वाहा।
23. ऊँ शोषाय स्वाहा।
24 ऊँ पापाय स्वाहा।
25. ऊँ रोगाय स्वाहा।
26. ऊँ अहिर्बुध्न्याय स्वाहा।
27. ऊँ मुख्याय स्वाहा।
28. ऊँ भल्लाटाय स्वाहा।
29. ऊँ सोमाय स्वाहा।
30. ऊँ नागेभ्य: स्वाहा।
31. ऊँ अदितये स्वाहा।
32. ऊँ दितये स्वाहा।
33. ऊँ अदा्भ्य: स्वाहा।
34. सवित्रे स्वाहा।
35. ऊँ जयाय स्वाहा।
36. ऊँ रुद्राय स्वाहा।
37. ऊँ अर्यम्णे स्वाहा।
38. ऊँ सवित्रे स्वाहा।
39. ऊँ विवस्वते स्वाहा।
40. ऊँ विबुधाधिपाय स्वाहा।
41. ऊँ मित्राय स्वाहा।
42. ऊँ राजयक्ष्मणे स्वाहा।
43. ऊँ पृथ्वीधराय स्वाहा।
44. ऊँ आपवत्साय स्वाहा।
45. ऊँ ब्रह्मा़णे स्वाहा।
46. ऊँ चरक्यै स्वाहा।
47. ऊँ विदार्यै स्वाहा।
48. ऊँ पूतनायै स्वाहा।
49. ऊँ पापराक्षस्यै स्वाहा।
50. ऊँ स्कन्दाय स्वाहा।
51. ऊँ अर्यम्णे स्वाहा।
52. ऊँ जृम्भकाय स्वाहा।
53. ऊँ पिलिपिच्छाय स्वाहा।
54. ऊँ इन्द्राय स्वाहा।
55. ऊँ अग्नये स्वाहा।
56. ऊँ यमाय स्वाहा।
57. ऊँ निऋत्यै स्वाहा।

58. ऊँ वरुणाय स्वाहा। 59. ऊँ वायवे स्वाहा। 60. ऊँ सोमाय स्वाहा।

61. ऊँ ईश्वराय स्वाहा। 6 1. ऊँ ब्रह्मांणे स्वाहा। 62. ऊँ अनन्ताय स्वाहा।

ऊँ वास्तोष्पते प्रतिजानी ह्यस्मान्स्वावेशोऽअनमीवो भवान:। यत्त्वे महे प्प्रतितन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। ऊँ वास्तोष्पतये स्वाहा। अनेन हवनेन वास्तुमण्डलस्थदेवता: प्रीयन्ताम।

योगिनी-मण्डलस्थ-देवतानां स्वाहाकार: (योगिनी-मण्डलस्थ देवताओं का स्वाहाकार)

1. ऊँ महाकाल्यै स्वाहा। 2. ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा। 3. ऊँ महासरस्वत्यै स्वाहा।

4. ऊँ दिव्ययोगिन्यै स्वाहा। 5. ऊँ महायोगिन्यै स्वाहा। 6. ऊँ सिद्धयोगिन्यै स्वाहा।

7. ऊँ माहेश्वर्यै स्वाहा। 8. ऊँ प्रेताक्ष्यै स्वाहा। 9. ऊँ डाकिन्यै स्वाहा।

10. ऊँ काल्यै स्वाहा। 11. ऊँ कालरात्र्यै स्वाहा। 12. ऊँ निशाकर्यै स्वाहा।

13. ऊँ हँकार्यै स्वाहा। 14. ऊँ सिद्धिवैतालिकायै स्वाहा। 15. ऊँ ह्रींकार्यै स्वाहा।

16. ऊँ भूतडामरायै स्वाहा। 17. ऊँ ऊर्ध्वकेश्यै स्वाहा। 18. ऊँ विरूपाक्ष्यै स्वाहा।

19. ऊँ शुष्कांग्यै स्वाहा। 20. ऊँ नरभोजन्यै स्वाहा। 21. ऊँ फेत्कार्यै स्वाहा।

22. ऊँ वीरभद्रायै स्वाहा। 23. ऊँ धूम्राक्ष्यै स्वाहा। 24. ऊँ कलहप्रियायै स्वाहा।

25. ऊँ राक्षस्यै स्वाहा। 26. ऊँ घोररक्ताक्ष्यै स्वाहा। 27. ऊँ विशालाक्ष्यै स्वाहा।

28. ऊँ कौमार्यै स्वाहा। 29. ऊँ चण्ड्यै स्वाहा। 30. ऊँ वाराह्यै स्वाहा।

31. ऊँ मुण्डधारिण्यै स्वाहा। 32. ऊँ भैरव्यै स्वाहा। 33. ऊँ वीरायै स्वाहा।

34. ऊँ भयङ्कार्यै स्वाहा। 35. ऊँ वज्रधारिण्यै स्वाहा। 36. ऊँ क्रोधायै स्वाहा।

37. ऊँ दुर्मुख्यै स्वाहा। 38. ऊँ प्रेतवाहिन्यै स्वाहा। 39. ऊँ कर्कटायै स्वाहा।

40. ऊँ दीर्घलम्बोष्ठ्यै स्वाहा।	41. ऊँ मालिन्यै स्वाहा।	42. ऊँ मंत्रयोगिन्यै स्वाहा।
43. ऊँ कालाग्न्यै स्वाहा।	44. ऊँ मोहिन्यै स्वाहा।	45. ऊँ चक्रायै स्वाहा।
46. ऊँ कुण्डलिन्यै स्वाहा।	47. ऊँ बालुकायै स्वाहा।	48. ऊँ कौबेर्यै स्वाहा।
49. ऊँ यमदूत्यै स्वाहा।	50. ऊँ करालिन्यै स्वाहा।	51. ऊँ कौशिक्यै स्वाहा।
52. ऊँ यक्षिण्यै स्वाहा।	53. ऊँ भक्षिण्यै स्वाहा।	54. ऊँ कौमार्यै स्वाहा।
55. ऊँ मंत्रवाहिन्यै स्वाहा।	56. ऊँ विशालायै स्वाहा।	57. ऊँ कार्मुक्यै स्वाहा।
58. ऊँ व्याघ्र्यै स्वाहा।	59. ऊँ महाराक्षस्यै स्वाहा।	60. ऊँ प्रेतभक्षिण्यै स्वाहा।
61. ऊँ धूर्जटîृयै स्वाहा।	62. ऊँ विकटायै स्वाहा।	63. ऊँ घोररूपायै स्वाहा।
64. ऊँ कपालिकायै स्वाहा।	65. ऊँ निकलायै स्वाहा।	66. ऊँ अमलायै स्वाहा।
67. ऊँ सिद्धिप्रदायै स्वाहा।	68. ऊँ जयायै स्वाहा।	69. ऊँ विजयायै स्वाहा।
70. ऊँ अजितायै स्वाहा।	71. ऊँ अपराजितायै स्वाहा।	72. ऊँ क्षेमकर्यै स्वाहा।
73. ऊँ लक्ष्म्यै स्वाहा।	74. ऊँ वैष्णव्यै स्वाहा।	75. ऊँ पार्वत्यै स्वाहा।

ऊँ योगेयोगे तवस्तरं व्वाजे वाजे हवामहे। सखाय ऽ इन्द्रमूर्तये ॥

अनेन हवनेन महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती सहिता दिव्यादिचतु:षष्ठियोगिन्य: प्रीयन्ताम ॥

क्षेत्रपाल-मण्डलस्थ-देवानां स्वाहाकार: (क्षेत्रपाल-मण्डलस्थ देवताओं का स्वाहाकार)

1. ऊँ अजराय स्वाहा।	2. ऊँ व्यापकाय स्वाहा।	3. ऊँ इन्द्रचौराय स्वाहा।

4. ऊँ इन्द्रमूर्त्तये स्वाहा। 5. ऊँ उक्षाय स्वाहा। 6. ऊँ कूष्माण्डाय स्वाहा।

7. ऊँ वरुणाय स्वाहा। 8. ऊँ बटुकाय स्वाहा। 9. ऊँ विमुक्ताय स्वाहा।

10. ऊँ लूप्तकाय स्वाहा। 11. ऊँ लीलाकाय स्वाहा। 12. ऊँ एकदंष्ट्राय स्वाहा।

13. ऊँ ऐरावताय स्वाहा। 14. ऊँ ओषधीघ्राय स्वाहा। 15. ऊँ बन्धनाय स्वाहा।

16. ऊँ दिव्यकायाय स्वाहा। 17. ऊँ क म्बलाय स्वाहा। 18. ऊँ भीषणाय स्वाहा।

19. ऊँ गवये स्वाहा। 20. ऊँ घण्टाभिधाय स्वाहा। 21. ऊँ व्यालाय स्वाहा।

22. ऊँ अणुस्वरूपाय स्वाहा। 23. ऊँ चन्द्रवारुणाय स्वाहा। 24. ऊँ पटाटोपाय स्वाहा।

25. ऊँ जटालाय स्वाहा। 26. ऊँ क्रतवे स्वाहा। 27. ऊँ घण्टेश्वराय स्वाहा।

28. ऊँ विटङ्काय स्वाहा। 29. ऊँ मणिमानाय स्वाहा। 30. ऊँ गणबन्धाय स्वाहा।

1. ऊँ डामराय स्वाहा। 32. ऊँ ढुण्ढिकर्णाय स्वाहा। 33. ऊँ स्थविराय स्वाहा।

34. ऊँ दन्तुराय स्वाहा। 35. ऊँ धनदाय स्वाहा। 36. ऊँ नागकर्णाय स्वाहा।

37. ऊँ महाबलाय स्वाहा। 38. ऊँ फेत्काराय स्वाहा। 39. ऊँ चीकराय स्वाहा।

40. ऊँ सिंहाय स्वाहा। 41. ऊँ मृगाय स्वाहा। 42. ऊँ यक्षप्रियाय स्वाहा।

43. ऊँ मेघवाहनाय स्वाहा। 44. ऊँ तीक्ष्णोष्ठाय स्वाहा। 45. ऊँ अनलाय स्वाहा।

46. ऊँ शुक्लतुण्डाय स्वाहा। 47. ऊँ सुधालापाय स्वाहा। 48. ऊँ बर्बरकाय स्वाहा।

49. ऊँ पवनाय स्वाहा। 50. ऊँ पावनाय स्वाहा।

ऊँ नहिस्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेः।

एमेनमवृधन्नमृता ऽअमर्त्यंव्वैश्वानरक्षैत्रजित्त्यायदेवा:। ॐ क्षेत्राधिशायस्वाहा।

अनेन हवनेन क्षेत्रपालमण्डलस्थदेवता: प्रीयन्ताम न मम।

अथ भद्रमण्डलस्थदेवानां स्वाहाकार: (भद्रमण्डलस्थ देवताओं का स्वाहाकार)

1. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा।	2. ॐ सोमाय स्वाहा।	3. ॐ ईशानाय स्वाहा।
4. ॐ इन्द्राय स्वाहा।	5. ॐ अग्नये स्वाहा।	6. ॐ यमाय स्वाहा।
7. ॐ निऋर्तये स्वाहा।	8. ॐ वरुणाय स्वाहा।	9. ॐ वायवे स्वाहा।
10. ॐ अष्टवसुभ्य: स्वाहा।	11. ॐ एकादशरुद्रेभ्य: स्वाहा।	12. ॐ द्वादशादित्येभ्य: स्वाहा।
13. ॐ अश्विभ्यां स्वाहा।	14. ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्य: स्वाहा।	15. ॐ सप्तयक्षेभ्य: स्वाहा।
16. ॐ अष्टकुलनागेभ्य: स्वाहा।	17. ॐ गंधर्वाप्सरोभ्य: स्वाहा।	18. ॐ स्कन्दाय स्वाहा।
19. ॐ नन्दिने स्वाहा।	20. ॐ शूलकालाभ्यां स्वाहा।	21. ॐ दक्षादिसप्तगणेभ्य: स्वाहा।
22. ॐ दुर्गायै स्वाहा।	23. ॐ विष्णवे स्वाहा।	24. ॐ स्वधायै स्वाहा।
25. ॐ मृत्युरोगाभ्यां स्वाहा।	26. ॐ गणपतये स्वाहा।	27. ॐ अद्भ्य: स्वाहा।
28. ॐ मरुद्भ्य: स्वाहा।	29. ॐ पृथिव्यै स्वाहा।	30. ॐ गंगादिनदीभ्य: स्वाहा।
31. ॐ सप्तसागरेभ्य: स्वाहा।	32. ॐ मेरवे स्वाहा।	33. ॐ गदायै स्वाहा।
34. ॐ त्रिशूलाय स्वाहा।	35. ॐ वज्राय स्वाहा।	36. ॐ शक्तये स्वाहा।
37. ॐ दण्डाय स्वाहा।	38. ॐ खड्गाय स्वाहा।	39. ॐ पाशाय स्वाहा।
40. ॐ अंकुशाय स्वाहा।	41. ॐ गौतमाय स्वाहा।	42. ॐ भरद्वाजाय स्वाहा।

43. ऊँ विश्वामित्राय स्वाहा।	44. ऊँ कश्यपाय स्वाहा।	45. ऊँ जगदग्रये स्वाहा।
46. ऊँ वशिष्ठाय स्वाहा।	47. ऊँ अत्रये स्वाहा।	48. ऊँ अरुन्धत्यै स्वाहा।
49. ऊँ ऐन्द्रयै स्वाहा।	50. ऊँ कौमार्यै स्वाहा।	51. ऊँ ब्राह्महत्यायै स्वाहा।
52. ऊँ वाराह्यै स्वाहा।	53. ऊँ चामुण्डायै स्वाहा।	54. ऊँ वैष्णव्यै स्वाहा।
55. ऊँ माहेश्वर्यै स्वाहा।	56. ऊँ वैनायक्यै स्वाहा।	

नोट :- तत्पश्चात् प्रधानपीठस्थ देवता की यथोचित संख्यात्मक (108, 1008 इत्यादि) आहुतियाँ मूलमन्त्र या नामावलि से करवानी चाहिए।

श्रीसूक्त होम: (चावल व दूध से निर्मित खीर अथवा पायसनिर्मित मिष्ठान्न से लक्ष्मीहोम करवायें) -

ऊँ हिरण्यवर्णामिति पञ्चदशर्चस्य सूक्तस्य आनन्दकर्दम- चिक्लीतेन्दिरासुता: ऋषय: श्रीर्देवता आद्यास्तिस्रोऽनुष्टुभ: चतुर्थी बृहती पंचमीषष्ठ्यौ त्रिष्टुभौ ततोऽअष्टावनुष्टभ: अन्त्या प्रस्तारप–पंक्ति: श्रीर्देवताप्रीत्यर्थे पायस-घृतद्रव्यै: होमे विनियोग:।

ऊँ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्।

चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदोम आवह॥1॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥2॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम्।

श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम्॥3॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।

पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वयेश्रियम् ॥4॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।

तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे॥5॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्व:।

तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मी:॥6॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ उपैतु मां देवसख: कीर्तिश्च मणिना सह।

प्रादुर्भूतो ऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे॥7॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।

अभूतिमसमृद्धिञ्च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् ॥8॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपाये श्रियम् ॥9॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ मनस: काममाकूतिं वाच: सत्यमशीमहि।

पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्री: श्रयतां यश:॥10॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भव कर्दम।

श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्॥11॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ आप: सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।

नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले॥12॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम्।

चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥13॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ आर्द्रां यष्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।

सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥14॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्यो ऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम्॥15॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

ऊँ य: शुचि: प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।

सूक्तं पञ्चदशर्चञ्च श्रीकाम: सततं जपेत्॥16॥ ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा।

"ऊँ श्रीं हीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं हीं श्रीं ऊँ महालक्ष्म्यै स्वाहा ॥" इति मन्त्रेण अष्टोत्तशतं 108 यथासंख्यात्मकं वा जुहुयात्। अनने हवनेन श्रीमहालक्ष्मीदेवता प्रीयतां न मम॥ जलमुत्सृजेत्॥

अनेन हवनेन श्रीमहालक्ष्मीदेवता प्रीयतां न मम॥ जलमुत्सृजेत।

स्विष्टकृद्धोम:

प्रधान यजमान अवशिष्ट हवन-सामग्री (शाकल्य) को खड़े होकर अग्नि में ऊँ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा मन्त्र से समर्पित करे। आज्येन नवाहुतय: ब्रह्मणाऽन्वारब्ध: (तत्पश्चात् दाहिना घुटना झुकाकर घृत की आहुति देकर स्रुवे में स्थित अवशिष्ट घृत को प्रोक्षणीपात्र में त्यागे)।

1. ऊँ भू: स्वाहा। इदं अग्नये न मम।

2. ऊँ भुव: स्वाहा। इदं वायवे न मम।

3. ऊँ स्व: स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।

4. ऊँ त्वन्नोऽअग्रेव्वरुणस्यव्विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठा:।

यजिष्ठो व्वह्निहुतम: शोशुचानो व्विश्वाद्वेषा सिप्प्रमुमुग्ध्य स्म्मत् स्वाहा। इदं अग्रिवरुणाभ्यां न मम।

5. ऊँ सत्त्वन्नो अग्रे ऽ वमोभवोतीनेदिष्ठोऽअस्याऽउषसोव्युष्टौ।

अवयक्ष्वनो व्वरुण द्ध रराणो वीहि मृडीक द्ध सुहवोनऽएधि स्वाहा। इदं अग्रिवरुणाभ्यां न मम।

6. ऊँ अयाश्चाग्रेस्य नभिशस्कितपाश्च सत्यमित्वमयाऽअसि।

अयानो यज्ञं वहस्यया नो धेहि भेषज द्ध स्वाहा। इदं अग्नये अयसे न मम।

7. ऊँ ये ते शतं व्वरुणये सहस्रं यज्ञिया: पाशावितता महान्त:।

तेभिर्नोऽअद्य सवितोतविष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुत: स्वर्क्का: स्वाहा।

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे, विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्य: स्वर्केभ्यश्च न मम।

8. ऊँ उदुत्तमं व्वरुणपाशमस्म्मदवाधमं व्विमद्ध्यम द्ध श्रथाय।

अथाव्वयमादित्त्यव्रतेतवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा।

इदं वरुणाय आदित्याय अदितये च न मम॥

9. ऊँ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम॥ होमान्ते ग्रहपूजनम्।

दिग्पालपूजनबलिदानञ्च (दश — दिशाओं में स्थित दिग्पालों के पूजन और बलिदान)

वेदी/स्थण्ड़िल के पूर्वादि दश दिशाओं में स्थित दिग्पालों के लिए दधि-माषादि पदार्थों से सदीप बलिदान करना चाहिए।

1. पूर्वे - ऊँ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ठ. हवे हवे सुहव ठं. शूरमिन्द्रम्।

ह्वयामिशकंर पुरुहूतमिन्द्रœस्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्र:। इन्द्राय नम:।

2. आग्रेयां - ॐ अग्निन्दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपव्ब्रुवे। देवा 2ऽआसादयादिह ॥

सूर्यवामपार्श्वे ॐ भूर्भुव: स्व: सूर्यवामपार्श्वे अग्नये नम:। अग्न्ये नम:।

3. दक्षिणे - ॐ मायत्वाङ्गिïïरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म: पित्रे ।

शनि दक्षिण पार्श्वे ॐ भूर्भुव स्व: शनिदक्षिणपार्श्वे यमाय नम:। यमाय नम:।

4. नैऋत्यां - ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य।

अन्यमस्मदिच्छसात ऽ इत्यानमो देविनिऋर्ते तुभ्यमस्तु॥ नैऋर्ति नम:।

5. पश्चिमे - ॐ तत्त्वायामि ब्ब्रह्मïणाव्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्भि:।

अहेडमानो व्वरुणेहवोध्युरुश ठे. समान ऽ आयु: प्रमोषी:॥ वरुणाय नम:।

6. वायव्यां - ॐ आनो नियुद्भि: शतिनीभिरध्वर ठे. सहस्रिणीभि-रुपयाहि ज्ञम् ।

व्वायो ऽ अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयम्पात स्वस्तिभि: सदा न:॥ वायवे नम:।

7. उत्तरे - ॐ व्वय ठे. सोमव्व्रते तवमनस्तनूषु बिभ्रत:। प्रजावन्त: सचेमहि ।

उत्तरे ॐ भूर्भुव: स्व: सोमाय नम:। कुबेराय नम:।

8. ईशाने - ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्।

पूषा नो था व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्ध: स्वस्तये ॥ शंकराय नम:।

9. ऊर्ध्वं (ईशानपूर्वयोर्मध्ये) -

ॐ ब्रह्म ज्ञानम्प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत: सुरुचोव्वेनऽआव:।

सबुध्न्या ऽ उपमा ऽ अस्यविष्ठा: सतच्चोनिमसतच्च व्विव:॥ ब्रह्मणे नम:।

10. अध: (निऋर्तिपश्चिमयोर्मध्ये) -

ॐ स्योना पृथिविनोभवा नृक्षरा निवेशनी। च्छा न: शर्म सप्प्रथा:॥

अनन्ताय नम:।

इन्द्रादिदशदिक्पाला: गन्धादिभि: सम्पूज्य। (गन्धाक्षत से पूजन करे)

भो इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्य: एतान्सदीपान् दधिमाषान्नभक्तबलीन् समर्पयामि। जलमुत्सृजेत्।

प्रार्थयेत् - भो इन्द्रादिदशदिक्पाला: दिशं रक्षत बलिं भक्षत मम गृहे आयु: कर्तार: क्षेमकर्तार: शान्तिकर्तार: पुष्टिकर्तार: फलदो वरदो भव:। एभिर्बलिदानै: इन्द्रादयो दशदिक्पाला: प्रीयन्ताम्। जलमुत्सृजेत्।

स्थानक्षेत्रपाल: (वेदी/स्थण्ड़िल के नैऋत्र्यकोण में पत्तल अथवा पात्र में सिन्दूर से बिन्दु षट्कोणयुक्त यन्त्र बनाकर यथोचित बलिदान सामग्री (यथा - कचौरी, पकौड़ी, नमकीन, दही, उड़द, मालपुयें, कंगन, मिष्ठान्न आदि) तिल के तेल से पूरित चौमुखा वाला दीपक लगाकर उसे चौराहे पर पूजन करके रख देवे ।) -

मन्त्र :- ॐ नहिस्प्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्त्पुरऽएतारमग्नेड्ड ।

एमेनमवृधन्नमत्र्यं वैश्यानरङ्क्षैत्रजित्त्याय देवा:।ॐ भूर्भुव: स्व: क्षेत्राधीशाय नम:।

प्रार्थयेत् -

कौलीरे चित्रकूटे हिमगिरिशिखरे, कान्तजालन्धरे वा,

सौराष्ट्रे सिन्धुदेश मगधपुरवरे कौशले वा कलिङ्गे ॥

कर्णाटे कौङ्कणे वा भृगुषुपुरवरे कान्यकुब्जे स्थिता वा ॥

ते सर्वे यज्ञरक्षाकरणकृतधिय: पान्तु व: क्षेत्रपाला:॥

भो क्षेत्रपाल! इमं चतुर्वर्तिकासहितं सदीपदधिमाषान्नबलिं गृहाण। मम गृहे आयुकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता फलदो वरदो भव:। अनेन बलिदानेन क्षेत्रपाल: प्रीयताम। बलिं चतुष्पदे गच्छेत।

पूर्णाहुति: (बताशा/सुपारी/गोलागिरि से यथोचित घी-बूरा भरकर नागरबेल के पान के पत्ते को ऊपर लगाकर स्रुचि में रखकर घी डालते हुए मन्त्रोच्चारपूर्वक पूर्णाहुति करवाये) -

ऊँ अग्रभ्नयसभ्पथाराभ्ये ऽअभ्स्म्मान्विश्वानि देवव्वभ्युनानि व्विभ्द्वान्

भ्योद्घ्य स्म्मजुहुराभ्णमेनाभ् भूयिष्ट्ं ंठान्तभ् नमऽउक्तिंव्विधेम ।

ऊँ भूर्भुव: स्व: पूर्णाहुत्यां मृडनाम्रे वैश्वानराय नम: गंधादिभि: संपूजयेत्।

स्रुवेण चतुर्वारमाज्यं स्रुचि गृहीत्वा । तस्यां नारिकेलफलं (साज्य गोलागिरि:) ताम्बूलं पूगीफलं वा निधाय पुष्पमालां रक्तवस्त्रेणवेष्टिंतं स्रुचोऽपरि अधोमुखस्रुवच्छन्नं ।

एकोनपञ्चाशत् मरुद्गणेभ्यो नम: गंधादिभि: संपूज्य, पाणिद्वयेन शंखमुद्रया सुरवंसुरचमादाय उत्थाय एवं पूर्णाहुतिं जुहुयात् । घृतेनाविच्छिन्नधारामग्रौ पातयेत्।

ऊँ मूर्द्धानन्दिवोऽअरतिं पृथिव्या व्वैश्वानरमृतऽआजातमग्निम् । कवि द्ध सम्म्राजमतिथिञ्जनानामासन्ना पात्रञ्जनयन्त देवाड्ड ॥1॥ पूर्णा दर्व्विपरापत सुपूर्णा पुनरापत। व्वस्न्नेव व्विक्रीणावहा ऽ इषमूर्ज्ज द्ध शतक्रतो स्वाहा॥2॥ चित्तिं जुहोमि मनसा घृतेन यथा देवा इहा गमन्विति।

होत्राऽऋतावृध: पत्येविश्वस्य भूमनो विश्वकर्मणो व्विश्वाहा: दाभ्य द्ध हवि:॥3॥ ऊँ सभ्प्तेऽअग्रेसभ्मिधभ् सभ्प्तजिभ्ह्वाड्ड सभ्प्तऽऋषयड्ढ सभ्प्त धाम प्रिभ्याणि । सभ्प्तहोत्राड्ढ सप्तभ्धात्वा जन्ति सभ्प्तोनीभ् रापृणस्व घभ्तेनभ् स्वाहा ॥ शभ्क्रज्ज्योतिश्च चिभ्त्रज्ज्योतिश्च सभ्त्यज्ज्योतिश्चभ् ज्योतिष्माँश्च। शभ्क्रश्च ऋतभ्पाश्चात्त्य द्धहाड्ढ॥4॥ इभ्दृड्न्याभ्दृड् च सभ्दृड् चभ् प्रतिसदृड् च । मिभ्तश्चभ् सम्मिÞतश्चभ् सभराड्ढ ॥5॥ ऋभ्तश्च सभ्त्यश्च धभ्रवश्च धभ्रुणश्च। धभ्र्त्ता चव्विधभ्र्त्ता च व्विधारभ्यड्ड ॥6॥ ऋभ्तभ्जिच्च सत्यभ्जिच्च सेनभ्जिच्च सभ्षेणश्च। अन्तिमित्रश्चदभ्ऽअमित्रश्च गभ्णड्ड ॥7॥ इभर्दृक्षासऽ एताभ्दृक्षासऽऊभ्षुणभ् सभ्दृक्षासभ्ड्ढ प्रतिसदृक्षासभ्ऽएतन। मिभ्तासश्चभ् सम्मिÞतासोनो अभ्द्यसभरसोमरुतो यभ्ज्ञेऽअभ्स्मिन्॥8॥ स्वतवाँश्च प्रघाभ्सी च सान्तपभ्नश्च गृहमभ्धी च। क्रीभ्डी चशाभ्कीचोज्जभ्षी ॥ 9॥ उभ्ग्रश्च्च भीभ्मश्च्चभ् द्ध्वष्ट्वष्ट्वान्तश्च्चभ् धुनिश्च्च। साभ्सभ्ह्वाँश्चाभियभ्ग्वा चÞ व्विभ्क्षिपभ् स्वाहा ॥ 10॥ पुनस्त्वादित्या रुद्रा व्वसव: समिन्धताम्पुनर्ब्रह्माणो व्वसुनीथ ज्ञै:। घृतेन त्वन्तन्वं व्वर्द्धयस्व सत्या: सन्तु जमानस्य कामा:॥11॥ नारिकेलफलं (साज्य गोलागिरि:) ताम्बूलं पूगीफलं अग्रौ समर्पयेत्। संस्रवप्रक्षेप:॥ इदमग्रये वैश्वानराय न मम।

वसोर्द्धारा-होम: (पूर्णाहुति के पश्चात् स्रुक् को हटाकर स्रुचि से शेष बचे घृत से वसोर्द्धारा हवन करवाये) -

स्रुचौ घृतधारां पातयेत् :- ऊँ व्वसोड्ढ पभ्वित्रमसि शभ्तधारभ् व्वसोड्ढ पभ्वित्रमसि सभ्हस्रधारम् ।

दभ्वस्त्वा सविभ्ता पुनातुभ्व्वसोड्ढ पभ्वित्रेण शभ्तधारेण सभ्प्व कामधुक्षड्ढ ॥1॥स्वाहा॥ रुद्रकलशे किञ्चित् घृतं प्रक्षेप:।

भस्मधारणम् (ऐशान्यां स्रुवेण भस्मानीय) (ऐशान कोण से सुवा के द्वारा भष्म लेर मंत्र के द्वारा यजमान को लगावें।)

1. ऊँ त्र्यायुषं जमदग्नेरिति ललाटे। (ललाट में भष्म लगावे)

2. ऊँ कश्पस्यत्र्यायुषमिति ग्रीवायाम्। (ग्रीवा में भष्म लगावे)

3. ऊँ देवेषुत्र्यायुषमिति दक्षवामबाहूमूले । (दाहिने हाथ में भष्म लगावे)

4. ऊँ तन्नोऽस्तुत्र्यायुषमिति हृदि। (हृदय में लगावे)

ततोऽअग्न्युपस्थानम्ं (हस्तयो: अक्षतपुष्पकदलीफलं दक्षिणा-सहितेन गृहीत्वा प्रार्थयेत्) -

चत्वारि श्रद्वा त्रयोंऽस्यपादा द्वेशीर्षे सप्तहस्तासोऽअस्ये त्रिधावद्वो वृषभोरोरवीति महोदेवो मत्र्या 2॥ आविवेक॥

चभ्त्वारिभ् शृङ्गाभ् त्रयोऽस्यभ्पादाभ् द्वेशीभ्र्षे सभ्प्तहस्तासोऽअस्य।

त्रिधावभ्द्धो वृषभ्भोरोरवीति मभ्होदेभ्वो मत्याभर् 2॥ आविवेश॥2॥

चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पंचभिरेव च।

हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नम:॥

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि मन्त्रकर्मक्रियाविधि:।

सम्पूर्णं कुरुयज्ञेश गार्हपत्य नमोऽस्तु ते॥

यथा शस्त्रप्रहाराणां कवचं भवति वारणम्।

तद्वद्देवापघातानां शान्तिर्भवति वारणम्॥

स्वस्ति श्रद्धां यश: प्रज्ञां विद्यां बुद्धिं श्रियं बलम्।

आयुष्यं तेजआरोग्यं देहि मे वाञ्छितं फलम्॥ **यज्ञपुरुषाय नम: समर्पयेत्।**

संकल्प: (हाथ में अक्षत, जल, सुपाडी, पुष्प , दुर्वा लेकर संकल्प बोले**)**

आज्यकांस्यपात्रे जलं दुग्धं च पातयेत् स्रुवेण आलोड़येत् ;- (स्रुवे जलं दुग्धं च आदाय)

ऊँ देशकालौ संकीर्त्य तत्सदद्य मया आघारादिपूर्णाहुतिपर्यन्तं यद्यद्द्रव्यं यावद्यावत्संख्याकेन येन येन मंत्रेण यया यया कामनया यस्यै यस्यै देवतायै हुतं सा सा देवता प्रीयन्ताम्। ते देवा: शान्तिदा: पुष्टिदास्तुष्टिदा वरदा भवन्तु।

संस्रवप्राशनम् - प्रोक्षणीपात्रे स्थित आज्यस्य सपत्नीकयजमान: प्राशनं कुर्यात्। तत: आचमनम्।। हस्तौ प्रक्षाल्य।

प्रणीतापात्रे स्थितजलेन यजमानस्यशिरसि सम्प्रोक्षयेत्।

ऊँ सुमित्रायानऽआप ओषधयस्सन्तु॥ (पवित्रे अग्नौ प्रक्षिपेत्)

ऊँ दुर्म्मित्रियास्तस्मै सन्तुस्मान् द्वेष्टियं च वयं द्विष्म:॥ (प्रणीताया ऐशान्यां न्युब्जीकरणम्)

ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम् -

ऊँ तत्सदद्य अस्मिन्...... कर्मणि कृताकृतावेक्षणरुपब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्तये च इदं तण्डुल1घृत2-शर्करा3तिल4पूरितं पूर्णपात्रं सदक्षिणां अमुकामुक गोत्र अमुकामुकशर्मणे ब्राह्मणाय आचार्यब्रह्मासहितेन ब्रह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

ब्रह्मग्रन्थि-विमोक :-

ऊँ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयं तस्त्वे महे।

उपप्प्रयन्तु मरुत: सुदानवऽ इन्द्रप्राशूर्भवा स चा ॥

बर्हिहोम :-

ऊँ देवा गातु विदोगातुं वित्वागातुमित।

मनसस्पत इमं देव यज्ञ ठे. स्वाहा वातेधाड्ढ स्वाहा॥

संकल्प: :- संकल्प बोले

ऊँ तत्सदद्य कृतैतत् .... (कर्म का नाम) कर्मण: साङ्गातासिद्ध्यर्थं आचार्याय आचार्यदक्षिणा: ब्रह्मणे ब्रह्मदक्षिणां अन्यवृतेभ्य: ब्राह्मणेभ्य: सम्प्रददे।

तत्सदद्य अस्य .... (कर्म का नाम) कर्मण: साङ्गात्वसिद्धयर्थं न्यूनाति रिक्तदोषपरिहारार्थं गोभ्य: तृणं कपोतेभ्य: अन्नं वानरेभ्य: फलं दीनानाथेभ्य: भूयसीं दक्षिणामहं सम्प्रददे।

तत्सदद्य अस्य .... (कर्म का नाम) कर्मण: साङ्गात्वसिद्धयर्थं ब्राह्मणान् ब्राह्मणी स्वजाति अन्यजाति बटुकान् कन्यान यथा अन्नेन् भोजयिष्ये।

तेन श्री: कर्माङ्गदेवता: .... (कर्म के प्रधान देवता) प्रीयन्तां न मम्।

कायेन वाचा मनसेन्द्रियेर्वा, बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावात्।

करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयेत्।।

यस्या स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिभि:।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।।

प्रमादात् पूर्वतां कर्म प्रच्यवेदात् ध्वरेषु यत्।

स्मरणात् देव तद्विष्णु: सम्पूर्णं स्यादिति श्रुति:।।

देवविसर्जनम् :- यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।

इष्टकाम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥

अग्निविसर्जनम् :- गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वरः।

यावत्ब्रह्म तयो देवः तत्र गच्छ हुताशनः॥

लोकाचारात् :- सुहासिनीं ब्राह्मणैर्वा सपत्नीकयजमानस्य आरार्तिक्यं (आरता) कुर्यात ्। ग्रन्थिबन्धनं च विमोकः। (विवाहिता स्त्री यजमान का आरता करने के पश्चात् ग्रन्थिबन्ध को मङ्गल (खोल) कर देवे।)

आशीर्वाद :-

ऊँ श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धान्यं धनं पशुं बहुपुत्र लाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः॥

मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः।

शत्रूणां बुद्धिनाशोस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु।

गोवाजिहस्ति धनधान्य समृद्धिरस्तु।

शत्रुक्षयोऽस्तु निजपक्षमहोदयोऽस्तु।

वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु॥

तत्पश्चात् यजमान सभी देवताओं को प्रणाम करके सभी का आशीर्वाद ग्रहण करे।

11.4. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्रों का यज्ञादि की समुचित विधि का ज्ञान प्राप्त होगा। यज्ञ के अन्तर्गत सर्वप्रथम कुण्ड के पञ्चभूसंस्कार - परिसमूहन, उपलेपन, उल्लेखन, उद्धरण व अभ्युक्षण की विधि अग्नि स्थापन तथा दक्षिण दिशा की ओर ब्रह्मा का आसन तथा उत्तर की ओर प्रणीता व प्रोक्षणी का स्थापन, परिस्तरण, हवनीय द्रव्यों का पवित्रीकरण, संग्रहण करते हुए ब्रह्माजी का पूजन करते हुए यथोचित अग्नि का अर्चन सङ्कल्प के साथ पूजनप्रकरण में आवाहित देवताओं के लिए शाकल्य (हवन-सामग्री) से सर्वप्रथम गणेशाम्बिका, नवग्रह, गौय्यादिमातृका, वास्तुमण्ड़ल, योगिनीमण्ड़ल, क्षेत्रपाल, भद्रमण्ड़ल के देवताओं, विष्णु एवं शिव का यथोचित मन्त्रों से हवन के साथ श्रीसूक्त द्वारा लक्ष्मी का हवन् स्विष्टिकृद्धोम, दिग्पालादि पूजन व बलिदान, क्षेत्रपाल पूजन करने के साथ ही पूर्णाहुति, वसोर्द्धारा सहित आरती व भस्मधारण की विधि का ज्ञान प्राप्त हुआ।

11.5. शब्दावली

1. यज्ञ	=	(यजन्) देवताओं को हवनीय द्रव्य देने की विधि ।
2. चतुर्वेद	=	ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अर्थवेद ।
3. स्रुक्	=	(स्रुव) हवन में घी डालने का उपकरण।
4. ब्रह्मा	=	50 कुशाओं का ग्रन्थियुक्त ब्रह्मा का प्रतीक।
5. स्रुची	=	36 अङ्गुलात्मक काष्ठनिर्मित उपकरण
6. स्फ्य	=	हवन करते समय वामहस्त में धारण करने हेतु खडा्गरूपी काष्ठनिर्मित उपकरण
7. शाकल्य	=	हवनीय द्रव्य
8. आज्यस्थाली	=	आहुति हेतु घी का काँस्यपात्र

9. प्रणीतापात्र	=	कुण्ड अथवा वेदी के उत्तरदिशा में रखा जाने वाला काष्ठपात्र
10. हवनीय मुद्रा	=	आहुति देते समय हाथ की अङ्गुलियों की मुद्राविशेष

11.6. अतिलघुत्तरी प्रश्न

प्रश्न - 1 : यज्ञ शब्द से क्या तात्पर्य है?

उत्तर : जहाँ पर देवताओं को उद्देश्य करके अग्नि में द्रव्य का प्रक्षेप किया जाए उसे यज्ञ कहते है।

प्रश्न - 2 : स्रुक् (स्रुव) की लम्बाई कितने अङ्गुल की होनी चाहिए ?

उत्तर : स्रुक् (स्रुव) की लम्बाई चौबीस (24) अङ्गुल की होनी चाहिए।

प्रश्न - 3 : सामान्यतया हवन के समय किस मुद्रा से आहुति देनी चाहिए?

उत्तर : सामान्यतया हवन के समय मृगी मुद्रा से आहुति देनी चाहिए।

प्रश्न - 4 : पञ्चभूसंस्कारों के नाम बताइये ?

उत्तर : पञ्चभूसंस्कार - 1. परिसमूहन, 2. उपलेपन, 3. उल्लेखन, 4. उद्धरण व 5. अभ्युक्षण।

प्रश्न - 5 : पूर्णाहुति के पश्चात् भस्मधारण हेतु भस्म किस कोण से ली जाती है?

उत्तर : पूर्णाहुति के पश्चात् भस्मधारण हेतु भस्म ईशानकोण से ली जाती है।

11.7. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : यज्ञ शब्द की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 2 : यज्ञ में प्रयुक्त उपकरणों (आयुध) का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 3 : श्रीसूक्त के अन्तर्गत किन-किन मन्त्रों से आहुति दी जाती है ?

प्रश्न - 4 : स्विष्टकृद्धोम के पश्चात् दी जाने वाली घी की नवाहुतियों की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 5 : पूर्णाहुति की विधि का विस्तार से विवेचन कीजिये ?

11.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशतीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर ।

2. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायीसम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

3. कर्मठगुरु: सम्पादक - श्री शुकदेव चतुर्वेदी प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी ।

4. मन्त्र महोदधि लेखक - मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्यप्रकाशक - प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी ।

इकाई — 12

आरती का महत्त्व

इकाई की रूपरेखा

12.1. प्रस्तावना

12.2. उद्देश्य

12.3. विषय प्रवेश

12.4. मन्त्रपुष्पाञ्जलि

12.5. सारांश

12.6. शब्दावली

12.7. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

12.8. लघुत्तरीय प्रश्न

12.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

12.1. प्रस्तावना

आरती को "आरार्तिक अथवा "नीराजन भी कहते है। पूजा के अन्त में आरती की जाती है । पूजन में जो भी त्रुटियाँ (मन्त्रहीन/क्रियाहीन/अशुद्धि आदि) रह जाती है, उनकी पूर्ति आरती के द्वारा की जाती है। स्कन्दपुराण के अनुसार :-

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं यत् कृतं पूजनं हरे:। सर्वं सम्पूर्णतामेति कृते नीराजनं शिवे।।

भगवान् श्री नारायण चक्रधारी विष्णु की आरती को देखने मात्र से ही परमपुण्य मिलता है तथा वह जातक अन्य सात जन्मों तक केवल ब्राह्मण योनि में ही जन्म लेता है। यथा -

नीराजनं च य: पश्येद देवदेवस्य चक्रिण:। सप्तजन्मनि विप्र: स्यादन्ते च परमं पदम।।

जो सदा धूप और आरती को देखता है और दोनों हाथों से आरती लेता है, वह अपने वंश का उद्धार करता है। आरती में मूलमन्त्र (जिस देवता का जिस मन्त्र से पूजन किया हो) के द्वारा तीन बार पुष्पाञ्जलि देनी चाहिए और मृदङ्ग, शङ्ख, घड़ियाल आदि वाद्ययन्त्रों सहित जयकार के उच्चशब्द व मधुर शब्द से शुभपात्र में घी या कर्पूर से विषम संख्या की अनेक बत्तियों से आरती करनी चाहिए।

ततश्च मूलमन्त्रेण दत्त्वा पुष्पाञ्जलित्रयम्। महानीराजनं कुर्यान्महावाद्यजयस्वनै:।।

प्रज्वलयेत् तदर्थं च कर्पूरेण घृतेन वा। आरार्तिकं शुभे पात्रे विषमानेकवर्तिकम्।।

सामान्यतया पाँच बत्तियों से आरती की जाती है, इसे "पञ्चप्रदीप भी कहते है। एक, सात या उससे भी अधिक बत्तियों से भी आरती की जाती है। केवलमात्र कर्पूर से भी आरती की जाती है।

कुङ्कुमागुरुकर्पूरघृतचन्दननिर्मिता:। वर्तिका: सप्त वा पञ्च कृत्वा वा दीपवर्तिकाम्।।

कुर्यात् सप्तप्रदीपेन शङ्खघण्टादिवाद्यकै:।

कुंकुमां, अगर, कर्पूर, घृत, चन्दन अथवा रुई की सात या पाँच वर्तिका बनाकर शङ्ख-घण्टा आदि मधुर व उच्च ध्वनियों से आरती करनी चाहिए।

आरती पूजन के अन्त इष्टदेव की प्रसन्नता हेतु की जाती है। इसमें इष्टदेव को दीपक दिखाने के साथ ही उनका स्तवन तथा गुणगान किया जाता है।

मुख्यत: आरतियों का समयानुसार विभाजन :-

1. मङ्गला 2. धूप 3. शृङ्गार 4. राजभोग

5. ग्वाल 6. सन्ध्या 7. शयन

आरती के दो भाव है जो "नीराजन और "आरती से व्यक्त हुये है। नीराजन (नि:शेषेण राजनम् प्रकाशनम्) का अर्थ है - "श्वशेषरुप से प्रकाशित करना। अनेक दीपवर्तिका प्रज्ज्वलित करके विग्रह के चारों ओर घुमाने का अभिप्राय यही है कि सम्पूर्ण विग्रह नख से शिख तक प्रकाशित हो उठे, अङ्गप्रत्यङ्ग स्पष्टरूप से उद्धाषित हो जाये, जिसमें दर्शक या उपासक भलीभाँति देवता का स्वरुप निहार सके, हृदयङ्गम कर सके।

आरती शब्द संस्कृत के आर्तिक का प्राकृतरूप है, जिसका अर्थ है अरिष्ट। आरती का अर्थ है - आर्तिनिवारण, अनिष्ट से अपने प्रियतम प्रभु को बचाना, इस रूप में यह एक तान्त्रिक क्रिया है, जिससे प्रज्ज्वलित दीपक अपने इष्टदेव के चारों ओर घुमाकर सारी विघ्र-बाधा शान्त की जाती है। आरती लेने से भी यही तात्पर्य है कि उनकी "आर्ति (कष्ट) को अपने ऊपर लेना। बलैया लेना, बलिहारी जाना, न्यौछावर होना आदि सभी प्रयोग इसी भाव के द्योतक है। इसी रूप में आज भी प्रत्येक धार्मिक संस्कार में यजमान का भी आरता किया जाता है।

12.2. उद्देश्य

1. आरती से सम्बन्धित विषयों का ज्ञान प्राप्त करना।

2. प्रमुख देवताओं की वैदिक व लौकिक आरतियों का अभ्यास करना।

3. पूजन में होने वाली त्रुटियों की पूर्ति करना।

4. पूजन का सम्पूर्ण फल प्राप्त करना ।

12.3. विषय प्रवेश

आरती के पाँच अङ्ग होते है :-

पञ्च नीराजनं कुर्यात् प्रथमं दीपमालया। द्वितीयं सोदकाब्जेन तृतीयं धौतवाससा।।

चतुताश्वत्थादिपत्रैश्च चतुर्थ परिकीर्तितम्। पञ्चमं प्रणिपातेन साष्टाङ्गेन यथाविधि।।

आरती करने का विधान :-

1. दीपमाला के द्वारा, 2. जलयुक्त शङ्ख से,

3. धुले हुए वस्त्र से, 4. आम व पीपल के पत्तों से,

5. साष्टाङ्ग दण्डवत् से आरती करे।

दीपमाला से आरती उतारते समय :-

आदौ चतु: पादतले च विष्णो-

द्वौं नाभिदेशे मुखबिम्ब एकम् ।

सर्वेषु चाङ्गेषु च सप्तवारा-

नारात्रिकं भक्तजनस्तु कुर्यात्।।

1. सर्वप्रथम भगवान् की प्रतिमा के चरणों में उसे चार बार घुमाये,

2. दो बार नाभिदेश में,

3. एकबार मुखमण्ड़ल पर,

4. सात बार समस्त अङ्गों पर घुमायें ।

12.3.1. वैदिक आरतियाँ

(1)

ऊँ ये देवासो दिव्व्येकादशस्त्थ पृथिव्व्यामद्ध्येकादशस्त्थ ।

अप्प्सु क्षितो महिनैका दशस्त्थते देवासो यज्ञमिमञ्जुषद्ध्वम् ॥

(2)

ऊँ आ रात्रि पार्त्थिव रज़ पितुरप्प्रायि धामभि।

दिव सदाœ सि बृहती व्वितिष्सऽआ त्त्वेषँव्वर्त्तते तम्र ॥

(3)

ऊँ अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्द्रा

देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो

देवता व्वरुणो देवता ॥

(4)

ऊँ द्यौ: शान्तिरन्तरिक्ष ठँ. शान्ति: पृथिवीशन्तिराप: शान्ति- रोषधय: शान्ति:।

वनस्पतय: शान्तिर्विश्वेदेवा: शान्ति- ब्रह्मःशान्ति:।

सर्व ठँ. शान्ति: शान्तिरेवशान्ति सामाशान्तिरेधि द्विपदे चतुष्पदेभ्य: शुभशान्तिर्भवतु॥

लौकिक आरतियाँ

1. गणेश जी की आरती

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय, लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय , गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।

माता जाकी पार्वती पिता महादेवा॥

लड्डुअन को भोग लगे सन्त करे सेवा।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ॥

एकदन्त दयावन्त चारभुजाधारी।

मस्तक सिन्दूर सोहे मूसे की सवा री ॥ जय गणेश0॥

अन्धन को आँख देत कोढ़िन को काया ।

बाँझन को पुत्र देत निर्धन को माया॥ जय गणेश0॥

पान चढ़े फूलचढ़े और चढ़े मेवा।

सभी कार्य सिद्ध करे श्री गणेश देवा ॥ जय गणेश0॥

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।

विघ्नविनाशक स्वामी सुख सम्पत्ति देवा॥ जय गणेश0॥

पार्वती के पुत्र कहावो शङ्करसुत स्वामी ।

गजानन्द गणनायक भक्तन के स्वामी ॥ जय गणेश0॥

ऋद्धि सिद्धि के मालिक मूषक असवारी।

करजोड़े विनती करे आनन्द उरभारी ॥ जय गणेश0॥

दीनन की लाज रखो शम्भुसुतवारी।

कामना को पूरी करो जग बलिहारी ॥ जय गणेश0॥

गणपतिजी की आरती जो कोई नर गावे ।

तब बैकुण्ठ परमपद निश्चय ही पावै ॥ जय गणेश0॥

2 माता महालक्ष्मी की आरती

या श्री: स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मी:

पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धि:।

श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा

तां त्वां नता: स्म परिपालय देवि विश्वम्।।

ॐ जय लक्ष्मीमाता, (मैय्या) जय लक्ष्मी माता।

तुमको निशिदिन ध्यावत, हर विष्णु धाता ॥ ॐ जय ॥

उमा, रमा, ब्रह्माणी, तुम ही जग-माता।

सूर्य-चन्द्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता ॥ ॐ जय ॥

दुर्गारूप निरञ्जनी, सुख-सम्पत्ति-दाता।

जो कोई तुमको ध्यावत, ऋद्धि-सिद्धि धन पाता ॥ ॐ जय ॥

तुम पाताल-निवासिनी, तुम ही शुभदाता।

कर्म-प्रभाव-प्रकाशिनी, भवनिधि की त्राता।। ॐ जय।।

जिस घर तुम रहती, तहँ सब सद्गुण आता।

सब सम्भव हो जाता, मन नहीं घबराता ॥ ॐ जय ॥

तुमबिन यज्ञ न होते, वस्त्र न हो पाता।

खान-पान का वैभव सब तुमसे आता।। ॐ जय ॥

शुभ-गुण-मन्दिर सुन्दर, क्षीरोदधि-जाता।

रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहीं पाता॥ॐ जय ॥

या आरती लक्ष्मीजी की जो कोई नर गाता,

उर आनन्द अति उमगे पाप उतर जाता॥ ॐ जय॥

3. अम्बे मैय्या की आरती

मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा

दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा ।

श्री: कैटभारिहृदयैककृताधिवासा

गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥

जय अम्बे गौरी, मैय्या जय श्यामा गौरी।

तुमको निशिदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिवजी॥

माँग सिन्दूर विराजत, टीको मृगमद को।

उज्ज्वल से दोऊ नैना, चन्द्रवदन नीको ॥

कनकसमान कलेवर, रक्ताम्बर राजै।

रक्तपुष्पगले माला, कण्ठन पर साजै ॥

केहरिवाहन राजत, खडग खप्परधारी।

सुर-नर-मुनिजन सेवत, तिनके दुःखहारी ॥

कानन कुण्ड लशोभित, नासाग्रेमोती।

कोटिकचन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति ॥

शुम्भनिशुम्भ विड़ारे , महिषासुरघाती।

धूम्रविलोचन नैना, निशिदिन मदमाती ॥

चण्ड़मुण्ड़ संहारे, शोणितबीज हरे ।

मधुकैटभ दोऊ मारे, सुरभयहीन करे॥

ब्रह्माणी रु द्राणी, तुम कमलारानी।

आगमनिगम बखानी, तुमशिव पटरानी॥

चौंसठयोगिनी गावत, नृत्यकरत भैरों ।

बाजत तालमृदङ्गा अरू बाजत डमरू ॥

तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता।

भक्तन की दुःख हरता , सुख सम्पत्ति करता॥

भुजाचार अतिशोभित, वरमुद्राधारी ।

मनवाञ्छित फलपावै, सेवत नरनारी ॥

कञ्चनथाल विराजत, अगर कर्पूरबाती ।

श्रीमालकेतु में राजत कोटिरतन ज्योति॥

माँ अम्बेभवानी की आरती, जो कोई नर गावे ।

कहत शिवानन्दस्वामी, सुखसम्पत्ति पावै॥

4. आरती श्रीदुर्गा जी

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तो:

स्वस्थै: स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।

दारिद्र्यदुःख भयहारिणि का त्वदन्या

सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता॥

जगजननी जय! जय!! (मा! जगजननी जय! जय!!)

भयहारिण, भवतारिणी, भवभामिनी

जय! जय!! जग0 तू ही सत-चित-सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा।

सत्य सनातन सुन्दर पर-शिव-सुर-भूपा ॥1॥ ॥ जग0॥

आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी।

अमल अनन्त अगोचर अज आनँदराशी ॥2॥ ॥ जग0॥

अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी।

कर्ता विधि, भत्र्ता हरि, हर सँहारकारी ॥3॥ ॥ जग0॥

तू विधिवधू, रमा, तू उमा, महामाया।

मूल प्रकृति विद्या तू, तू जननी, जाया ॥4Ÿ॥ ॥ जग0॥

राम, कृष्ण तू, सीता, ब्रजरानी राधा।

तू वाञ्छाकल्पद्रुम हारिणि सब बाधा ॥5॥ ॥ जग0॥

दश विद्या, नव दुर्गा, नानाशस्त्रकरा।

अष्टमातृका, योगिनी, नव नव रूप धरा ॥6॥ ॥ जग0॥

तू परधामनिवासिनी, महाविलासिनी तू।

तू ही श्मशानविहारिणी, ताण्डवलासिनी तू ॥7॥ ॥ जग0॥

सुर-मुनि-मोहिनी सौम्या तू शोभाऽऽधारा।

विवसन विकट-सरूपा, प्रलयमयी धारा ॥8॥ ॥ जग0॥

तू ही स्नेह-सुधामयि, तू अति गरलमना ।

रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि-तना ॥9॥ ॥ जग0॥

मूलाधारनिवासिनि, इह-पर-सिद्धिप्रदे।

कालातीता काली, कमला तू वरदे।।10॥ ॥ जग0॥

शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभेदमयी।

भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी ॥11॥ ॥ जग0॥

हम अति दीन दुखी मा! विपत-जाल घेरे।

हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे।12॥ ॥ जग0 ॥

निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।

करुणा कर करुणामयि! चरण-शरण दीजै॥13॥ ॥ जग0॥

अथ जगदम्बा जयवादः

जय जगदम्बकदम्बविहारिणि! म‘लकारिणि! कामकले!

जय तनुशोभाकम्पितशम्पे! लसदनुकम्पे कान्तिनिधे!

जय जितकामेऽपि जनितकामे! धूर्जटिवामे। वामगते!

जय जालन्धरपीठविलासिनि! दुःख विनाशिनि! भक्तिवशे ॥1।

नानालङ्कृतिझङ्कृतिशालिनि! मौक्तिकमालिनि! केलिपरे।

मुनिजन हृदयागार निवासिनि! विद्यास्वामिनि! बोधघने!

सान्द्रानन्दसुधारसभासिनि! वीणावादिनि! वेदनुते

जय जालन्धरपीठविलासिनि! दुःख विनाशिनि Ÿ भक्तिवशे ।2।

आपत्तूलमहानलकीले! पालनशीले! भूतिखने!

द्युतिजितचम्पकदामकलापे! मधुरालापे! हंसगते!

विभ्रमरञ्जितश‘रहृदये! कृतजगदुदये! शैलसुते!

जय जालन्धरपीठ विलासिनि! दुःखविनाशिनि! भक्तिवशे ॥3॥

मूले दीपककलिकाकारे! विद्यासारे! भवसि परा!

तस्मादपसृतिकलनावृद्धे! मणिपुर मध्ये पश्यन्ती!

स्वान्ते मध्यमभावाकूता कण्ठे वितता वैखरिका!

जय जालन्धरपीठविलासिनि! दुःख विनाशिनि। भक्तिवशे ॥4॥

पश्चादाविर्भवदनवद्ये ! श्रेयः पद्ये! यत्तदिदम्!

शब्दब्रह्मतया खलु गेयं खमिवामेयं किमपिघनम्

पञ्चाशल्लिपिभेदविचित्रं वाङ्मयमात्रं त्वमसि परे!

जय जालन्धरपीठ विलासिनि! दुःख विनाशिनि! भक्तिवशे ।।5।।

भवभवविभवप राभवहेतो! गिरिकुलकेतो! भक्तहिते!

नानाविधवृजिनोत्करवारिणि! करुणासारिणिाशान्ततरे!

सहसोत्सादितसाधक विघ्ने! श्रद्धानिघ्ने! सुखकलिके!

जय जालन्धरपीठ विलासिनि! दुःख विनाशिनि! भक्तिवशे ।।6

सिन्दूद्रव चुम्बितभाले ! सेवितहाले ! प्रेमभरे!

मातश्चिन्तामणिभवनान्तोनिर्भरकान्ते । विततततम्।

सोत्कं गायसि किन्नरदारैः साकमुदारैः पति चरितम्!

जय जालन्धरपीठविलासिनि! दुःखविनाशिनि! भक्तिवशे ।7।

क्लेशं भञ्जय रञ्जयचित्तं वित्तं स्फारी कुरु वरदे

शत्रुं मर्दय वर्धय शक्तिं भक्तिं सान्द्रीकुरु सरले!

नास्ति कृपानिधिरम्ब! त्वत्तो मत्तो मत्ततमो न शिवे!

जय जालन्धरपीठ विलासिनि! दुःखविनाशिनि भक्तिवशे ।।8।

वज्राल‘रणायाः वज्रातटिनी विहारशीलायाः!

वज्रेश्याः स्तवमेतं पठतां स’च्छतां श्रेयः।।9।।

शिवजी की आरती

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्रहारम्।

सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि॥

ऊँ जय शिव ओङ्कारा हो शिव पार्वती प्यारा

ब्रह्मा विष्णु सदा शिव अर्द्धाङ्गी धारा ॥ 1॥ ऊँ हर हर हर महादेव ॥

एकानन चतुरानन पञ्चानन राजै।

हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै॥ 2॥ ऊँ हर0॥

दोयभुज चार चतुर्भुज दशभुज ते सोहै।

तीनो रुप निरखता त्रिभुवनजन मोहै॥ 3॥ ऊँ हर0॥

अक्षमाला वनमाला रुण्डमाला धारी।

चन्दन मृगमद चन्दा भाले शुभकारी ॥4॥ ऊँ हर0॥

श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे।

सनकादिक प्रभुतादिक भूतादिक संगे॥ 5॥ ऊँ हर0॥

कर मध्ये कमण्डलु चक्र त्रिशूल धरता।

जगकर्ता जगहर्ता जगपालनकर्ता ॥ 6॥ ऊँ हर0॥

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका।

प्रणवाक्षर ऊँ मध्ये ये तीनों एका ॥ 7॥ ऊँ हर0॥

काशी मे विश्वनाथ विराजत नन्दी ब्रह्मंचारी।

नित उठ भोग लगावत महिमा अतिभारी॥ 8॥ ऊँ हर0॥

त्रिगुण स्वामी की आरती जो कोई नर गावे।

भणत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित फ ल पावै॥ 9॥ ऊँ हर0॥

ऊँ जै शिव ओङ्कारा, हो मन भज शिव ऊँकारा, हो मन रट शिव ओङ्कारा, हो शिव गलरुण्डन माला, हो शिव ओढ़त मृगछाला, हो शिव पीते भंग प्याला, हो शिव रहते मतवाला, हो शिव पार्वतीप्यारा, हो शिव ऊपर जलधारा, जटा में गङ्ग विराजत, मस्तक पे चन्द्र विराजत रहते मतवाला ॥ ऊँ हर.॥

7. शिव—आरार्तिक्यम्

ऊँ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम्

रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।

पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्

विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

ऊँ जय गङ्गाधर हर जय गिरिजाधीशा,

शिव जय गिरिजा धीशा

त्वं मां पालय नित्यं2 कृ पया जगदीशा,

ऊँ हर हर हर महादेव ॥

कैलाशे गिरि शिखरे कल्पद्रु म विपिने ।

गुञ्जति मधुकर पुञ्जे -2 कुञ्जवने गहने ॥ ऊँ हर हर हर महादेव॥

कोकिल कूजति खेलति हंसावन ललिता ।

रचयति कला कलापं नृत्यति मुद सहिता ॥ ऊँ हर हर हर महादेव ॥

तस्मिंल्ललित सुदेशे शाला मणि रचिता।

तन्मध्ये हर निकटे गौरी मदु सहिता ॥ ऊँ हर हर हर महादेव ॥

क्रीडा रचयति भूषा रञ्जित निजमीशम् ।

ब्रह्मादिक सुर सेवित प्रणमति ते शीर्षम्॥ ऊँ हर हर हर महादेव ॥

बिबुधवधूर्बहुनृत्यति हृदये मुद सहिता ।

किन्नर गानं कुरुते सप्तस्वर सहिता ॥ऊँ हर हर हर महादेव ॥

धिनकत थै थै धिनकत मृदङ्ग वादयते।

क्वण क्वण ललिता वेणु मधुरं नादयते ॥ ऊँ हर हर हर महादेव॥

रुणु रुणु चरणे रचयति नूपुर मुज्वलिता।

चक्रावर्ते भ्रमयतिभ्रमयति कुरुतेतां धिक् ताम् ॥ ऊँ हर0॥

तां तां लुपचुप तां तां डमरू वादयते।

अङ्गुष्ठाङ्गलि नादं लास्यकतां कुरुते ॥ऊँ हर हर हर महादेव॥

कर्पूरद्युति गौरं पञ्चानन सहितम्।

त्रिनयन शशिधर मौलिं विषधर कण्ठयुतम्॥ ऊँ हर हर हर महादेव॥

सुन्दर जटा कलापं पावक युत भालम्।

डमरु त्रिशूल पिनाकं करधृत नृकपालम्॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥

शंख निनादं कृत्वा झल्लरी नादयते।

नीराजयते ब्रह्मा वेद ऋचां पठते ॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥

इति मृदु चरण सरोजं हृदि कमले धृत्वा ।

अवलोकयति महेशं ईशं अभिनत्वा ॥ॐ हर हर हर महादेव ॥

खण्ड रचित उरमाला पन्नगमुपवीतम्।

वामविभागे गिरिजा रूपं अति ललितम्॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥

सुन्दर सकल शरीरे कृत भस्माभरणम्।

इति वृषभध्वज रूपं तापत्रय हरणम्॥ ॐ हर हर हर महादेव ॥

ध्यानं आरति समये हृदये इति कृत्वा।

रामं त्रिजटानाथं ईशं अभिनत्वा ॥ॐ हर हर हर महादेव ॥

संगितमेवं प्रतिदिन पठनं य: कुरुते ।

शिव सायुज्यं गच्छति भक्त्या य: श्रृणुते ॥ ॐ हर हर हर महादेव॥

8- श्री जगदीश स्वामी की आरती

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्

विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम।

लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्

वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।।

ऊँ जय जगदीश हरे प्रभु! जय जगदीश हरे।

भक्तजनों के सङ्कट क्षण में दूर करे।। ऊँ।।

जो ध्यावे फलपावै, दुःख विनसै मनका।। प्रभु।।

सुख सम्पत्तिघर आवे, कष्टमिटे तन का।। ऊँ।।

मात-पिता तुम मेरे, शरणगहूँ किसकी ।। प्रभु ।।

तुमबिन और न दूजा, आस करु किसकी ।। ऊँ ।।

तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।। प्रभु ।।

पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ऊँ ।।

तुम करूणा के सागर, तुम पालनकर्त्ता।। प्रभु ।।

मैं मूरख खलकामी, कृपाकरो भर्त्ता ।। ऊँ ।।

तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति ।। प्रभु ।।

किसविधि मिलूँ दयामय! तुमको मै कुमति ।। ऊँ।।

दीनबन्धु दुःखहर्त्ता तुम ठाकुर मेरे ।। प्रभु।।

अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे ।। ऊँ।।

विषय विकार मिटाओ, पापहरो देवा ।। प्रभु ।।

श्रद्धाभक्ति बढ़ाओ, सन्तनपद सेवा ।। ऊँ।।

तन, मन, धन सबकुछ है तेरा।

तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा ॥ ॐ ॥

श्रीजगदीशस्वामीकी आरती जो कोई नर गावे,

कहत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित फलपावै ॥ ॐ ॥

9 आरती कुञ्जबिहारी की

आरती कुञ्जबिहारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारि की ॥ टेक॥

गले मे वैजयन्तीमाला, बजावे मुरलि मधुर बाला ।

श्रवन में कुण्डल झलकाला, नन्द के आनँद नँदलाला ॥ श्रीगिरधर 0॥

गगन सम अङ्ग कान्ति काली, राधिका चमक रही आली, लतन में ठाढ़े बनमाली,

भ्रमर-सी अलक, कस्तूरी-तिलक, चन्द्र-सी झलक,

ललित छब स्यामा प्यारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारि की॥

कनकमय मोर मुकुट बिलसै, देवता दरसन को तरसै,

गगन सों सुमन रासि बरसै,

बजे मुरचङ्ग, मधुर मिरदङ्ग, ग्वालिनी सँग,

अतुल रति गोपकुमारी की। श्रीगिरधर कुष्णमुरारी की॥

जहाँ ते प्रगट भई गङ्गा, सकल-मल-हारिणी श्रीगङ्गा,

स्मरन ते होत मोह-भङ्गा,

बसी सिव सीस, जटा के बीच, हरै अघ कीच,

चरन छबि श्रीबनवारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारी की ।।

चमकती उज्ज्वल तट रेनू, बज रही बृन्दावन बेनू,

चहूँ दिसि गोपि ग्वाल धेनू,

हँसत मृदु मन्द, चाँदनी चन्द, कटत भव-फन्द,

टेर सुनु दीन दुखारि की । श्रीगिरधर कृष्णमुरारि की ।।

आरती कुञ्जबिहारी की। श्रीगिरधर कृष्णमुरारिकी ।।

10 भगवान् सत्यनारायण की आरती

नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादाक्षिशिरोरु बाहवे ।

सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नम:।।

जय लक्ष्मीरमणा, श्रीलक्ष्मीरमणा ।

सत्यनारायण स्वामी जन-पातक-हरणा ।। जय0।। टेक।।

रत्नजटित सिंहासन अद्भुत छबि राजै।

नारद करत निराजन घण्टा ध्वनि बाजै।। जय0।।

प्रकट भये कलि कारण, द्विजको दरस दियो।

बूढ़े ब्राह्मण बनकर कञ्चन महल कियो।। जय0।।

दुर्बल भील कठारो, जिनकी विपत्ति हरी।। जय0।।

वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।

सो फल भोग्यो प्रभुजी फिर अस्तुति कीन्हीं।। जय0।।

भाव-भक्ति के कारण छिन छिन रूप धर्यो।

श्रद्धा धारण कीनी, तिनको काज सर्यो ।। जय0।।

ग्वाल-बाल सँग राजा, वन में भक्ति करी ।

मनवाञ्छित फल दीन्हों दीनदयालु हरी ।। जय0।।

चढ़त प्रसाद सवायो कदलीफल, मेवा ।

धूप-दीप-तुलसी से राजी सत्यदेवा ।। जय0।।

सत्यनारायणजी की आरती जो कोई नर गावै ।

तन-मन-धन सम्पति मन-वाञ्छित फल पावै ।। जय0।।

11- जानकी जी की आरती -

आरती कीजै जनक-ललीकी । राममधुपमन कमल-कलीकी ।।

रामचन्द्र मुखचन्द्र चकोरी । अन्तर साँवर बाहर गोरी ।

सकल सुमङ्गल सुफल फलीकी।।

पिय दृगमग जुग बन्धन डोरी। पीय प्रेम रस-राशि किशोरी ।

पिय मन गति विश्राम थलीकी ।।

रूप-रास-गुननिधि जग स्वामिनी। प्रेम प्रबीन राम अभिरामिनी ।

सरबस धन हरिचन्द अलीकी ॥

12. भगवान् जानकीनाथजी की आरती -

जय जानकिनाथा, जय श्रीरघुनाथा।

दोउ कर जोरें बिनवौ प्रभु! सुनिये बाता॥ टेक॥

तुम रघुनाथ हमारे प्रान, पिता-माता।

तुम ही सज्जन सङ्गी भक्ति-मुक्ति दाता ॥ जय0॥

लख चौरासी काटो मेटो यम-त्रासा।

निसिदिन प्रभु मोहि राखिये अपने ही पासा ॥ जय0॥

राम भरत लछिमन सँग शत्रुहन भैया।

जगमग ज्योति विराजै, सोभा अति लहिया॥ जय0॥

हनुमत नाद बजावत, नेवर झमकाता।

स्वर्णथाल कर आरती कौसल्या माता॥ जय0॥

सुभग मुकुट सिर, धनु सर कर सोभा भारी।

मनीराम दर्शन करि पल-पल बलिहारी॥ जय0॥

13 श्रीरामचन्द्रजी की आरती

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।

लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्॥

रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।

रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः।।

ॐ जय जानकी नाथा, स्वामी जय श्री रघुनाथा।

दोउ कर जोरे विनवौ, प्रभु सुनिये बाता।। टेक।।

तुम रघुनाथ हमारे, प्राणपिता माता।

तुम ही सज्जन संगी, भक्ति-मुक्ति दाता।। टेक।।

लख चौरासी काटो, मेटो यम त्रासा।

निसदिन प्रभु मोहि रखियो, अपने ही पासा।। टेक।।

राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न, संग चारों भ्राता

जगमग ज्योति विराजत, शोभा अति भाता।। टेक।।

हनुमत ताल बजावत, नेवर ठुमकाता।

स्वर्णथाल भर आरति, करत कौसल्या माता।। टेक।।

सुभग मुकुट सिर धनु, सर-कर शोभाकारी।

राजाराम दर्शन कर, होवे बलिहारी।।

जानकीनाथ की आरति, जो कोई नर गाता।

मनोवांछित फल पाता, पाप उतर जाता।। टेक।।

14. श्रीहनुमानजी की आरती

उल्लङ्कय सिन्धोः सलिलं सलीलं

यः शोकवङ्घि जनकात्मजायाः।

आदाय तेनैव ददाहलंकां,

नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम्।।

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्टदलन रघुनाथ कला की।। टेक।।

जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग-दोष जाके निकट न झाँपै।।1।।

अंजनि पुत्र महा बलदाई। संतन के प्रभु सदा सहाईŸ।।2।।

दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सीय सुधि लाये।।3।।

लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।4।।

लंका जारि असुर संहारे। सियारामजी के काज सँवारे।।5।।

लक्ष्मण मूर्छित प‹डे सकारे। आनि सजीवन प्रान उबारे।।6।।

पैठि पताल तोरि जम-कारे। अहिरावन की भुजा उखारे।। 7।।

बायें भुजा असुर दल मारे। दाहिने भुजा संतजन तारे।।8।।

सुर-नर-मुनि जन आरती उतारे। जै जै जै हनुमान उचारे।।9।।

कंचन थार कपूर लौ छाई। आरति करत अंजना माई।।10।।

जो हनुमानजी की आरती गावै। बसि बैकुण्ठ परमपद पावै।। 11।।

13. भगवान् सूर्य की आरती

जय कश्यप-नन्दन, ऊँ जय कश्यप नन्दन।

त्रिभुवन-तिमिर-निकन्दन भक्त-हृदय-चन्दन ।। टेक।।

सप्त-अश्वरथ राजित एक चक्रधारी ।

दुखहारी , सुखकारी, मानस-मल-हारी । । जय0।।

सुर-मुनि-भूसुर-वन्दित, विमल विभवशाली ।

अघ-दल-दलन दिवाकर दिव्य किरण माली ।। जय0।।

सकल-सुकर्म-प्रसविता सविता शुभकारी ।

विश्व-विलोचन मोचन भव-बन्धन भारी ।। जय0।।

कमल-समूह-विकासक, नाशक त्रय तापा ।

सेवत सहज हरत अति मनसिज संतापा ।। जय0।।

नेत्र-व्याधि-हर सुरवर भू-पीड़ा-हारी।

वृष्टि-विमोचन सन्तत परहित-व्रतधारी ।। जय0।।

सूर्यदेव करुणाकर अब करुणा कीजै।

हर अज्ञान-मोह सब तत्त्वज्ञान दीजै ।। जय0।।

14. गङ्गा मैया की आरती

जय गङ्गा मैया-माँ जय सुरसरि मैया।

भव-वारिधि उद्धारिणि अतिहि सुदृढ़ नैया।।

हरि-पद-पद्म-प्रसूता विमल वारिधारा।

ब्रह्मद्रव भागीरथि शुचि पुण्यागारा ॥

शङ्कर-जटा बिहारिणी हारिणी सकल पापा ॥

गङ्गा-गङ्गा जो जन उच्चारत मुखसों ।

दूर देश में स्थित भी तुरत तरत सुखसों॥

मृतकी अस्थि तनिक तुव जल-धारा पावै ।

सो जन पावन होकर परमधाम जावै ॥

तव तटबासी तरुवर, जल-थल-चरप्राणी ।

पक्षी-पशु-पतङ्ग गति पावैं निर्वाणी ॥

मातु! दयामयि कीजै दीननपर दया।

प्रभु-पद-पद्म मिलाकर हरि लीजै माया ॥

15. गौ माता की आरती

आरती श्रीगैया-मैया की। आरती-हरनि विश्वधैया की ॥ टेक ॥

अर्थकाम-सद्धर्म-प्रदायिनी, अविचल अमल मुक्तिपददायिनी।

सुर-मानव सौभाग्यविधायिनी, प्यारी पूज्य नन्द-छैयाकी ॥ आरति0॥

अखिल विश्व प्रतिपालिनि माता, रोग-शोक-सङ्कट परित्राता,

भवसागर हित दृढ़ नैया की ॥ आरति0॥

आयु-ओज-आरोग्यविकाशिनि, दुःख-दैन्य-दारिद्र्य-विनाशिनी।

सुषमा-सौख्य-समृद्धि-प्रकाशिनी, विमल विवेक-बुद्धि-दैयाकी ।। आरति0।।

सेवक हो, चाहे दुखदाई, सम पय-सुधा पियावति माई।

शत्रु-मित्र सबको सुखदाई, स्नेह-स्वभाव-विश्व-जैया की ।। आरति0।।

16- श्रीमद्धागवत् की आरती

आरति अतिपावन पुरानकी, धर्म-भक्ति-विज्ञान-खान की ।। टेक।।

महापुराण भागवत निर्मल। शुक-मुख-विगलित निगम-कल्प-फल।

परमानन्दसुधा-रसमय कल। लीला-रति-रस-रसनिधान की ।। आरति 0।।

कलिमल-मथनि त्रिताप-निवारिणि। जन्ममृत्यु भव-भयहारिणि।

सेवत सतत सकल सुखकारिणि। सुमहौषधि हरिचरित गानकी ।। आरति 0।।

विषय-विलास-विमोह-विनाशिनी। विमल विराग विवेक विकाशिनी।

भगवतांॅ-तत्त्व-रहस्य-प्रकाशिनी। परम ज्योति परमात्मज्ञानकी ।। आरति 0।।

परमहंस-मुनि-मन-उल्लासिनी। रसिक-हृदय रस-रास-विलासिनी।

भुक्ति-मुक्ति-रति-प्रेम-सुदासिनी। कथा अकिञ्चन प्रिय सुजानकी ।। आरति 0।।

17. श्रीमद्भगद्गीताजी की आरती

यत्र योगेश्वर: कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धर:।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ।।

जय भगवद्गीते, माँ जय भगवद्गीते।

हरि-हिय-कमल-विहारिणी सुन्दर सुपुनीते।। टेक।।

कर्म-सुमर्म-प्रकाशिनी कामासक्तिहरा।

तत्त्व-ज्ञान-विकाशिनी विद्या ब्रह्म-परा ।। जय0।।

निश्चल-भक्ति-विधायिनी निर्मल मलहारी।

शरण-रहस्य-प्रदायिनी सब विधि सुखकारी।। जय0।।

राग-द्वेष-विदारिणी कारिणी मोद सदा।

भव-भय-हारिणि तारिणि परमानन्दप्रदा।। जय0।।

आसुर-भाव-विनाशिनी नाशिनि तम-रजनी।

दैवी-सद्गुणदायिनी हरि-रसिका सजनी।। जय0।।

समता त्याग-सिखावनि, हरिमुखकी बानी।

सकलशास्त्रकी स्वामिनी, श्रुतियों की रानी ।। जय0।।

दया-सुधा-बरसावनि मातु! कृपा कीजै।

हरि-पद-प्रेम दानकर अपनो कर लीजै ।। जय0।।

20. आरती श्रीरामायणजी की

आदौ रामतपोवनाधिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनं

वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसम्भाषणम्।।

वालीनिर्मथनं समुद्रतरणं लंकापुरीदाहनं,

पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननं चैतद्धि रामायणम्॥

आरती श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की ॥

गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद, बाल्मीक बिग्यान बिसारद।

सुक सनकादि सेष अरु सारद, बरनि पवनसुत कीरति नीकी॥

गावत बेद पुरान अष्टदस, छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।

मुनि जन धन संतन को सरबस, सार अंस संमत सबही की।

गावत संतत संभु भवानी, अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी ॥

ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी, कागभुसुण्डि गरुड के ही की ॥

कलिमल हरनि बिषय रस फीकी, सुभग qसगार मुक्ति जुबती की ॥

दलन रोग भव मूरि मुक्ति अमी की । तात मात सब विधि तुलसी की ॥

21. आरती श्रीबटुकभैरव

ॐ चण्डं प्रतिचण्डं करधृतदण्डं कृतरिपुखण्डं सौख्यकरं,

लोकं सुखयन्तं विलसितसन्तं प्रकटितदन्तं नृत्यकरम्।

डमरुध्वनिमन्तं तरलतरं तं मधुरहसन्तं लोकभरं,

भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम्॥

जय भैरव देवा प्रभु जय भैरव देवा ।

जय काली और गौरा देवी कृत सेवा ।। जय0।।

तुम्ही पाप उद्धारक दुःखसिन्धुतारक ।

भक्तों के सुखकारक भीषण वपुधारक ।। जय0।।

वाहनश्वान विराजत कर त्रिशूलधारी ।

महिमा अमित तुम्हारी जय जय भयहारी ।। जय0।।

तुम बिन देवा सेवा सफल नही होवे।

चौमुख दीपक दर्शन दुःख नहीं होवे ।। जय0।।

तेल चटकि दधि मिश्रित माषाबलि तेरी।

कृपा कीजिए भैरव करिए नही देरी ।। जय0।।

पाँव घुंघरु बाजत अरु डमरु डमकावत।

बटुक नाथ बन बालकजन मन हरषावत ।। जय0।।

बटुकनाथ की आरती जो कोई नर गावे।

कहे धरणीधर नर मनवाञ्छित फल पावे ।। जय0।।

12.4. मन्त्रपुष्पाञ्जलि

यजमान की हस्ताञ्जली में पुष्पादि देकर सभी ब्राह्मण निम्र मन्त्रों का जाप करे :-

ॐ यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्प्रथमान्यासन।

तेहनाकम्महिमान: सचन्तयत्रपूर्वेसाध्या: सन्तिदेवा:।।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्म्महे।

स मे कामान् काम कामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु।

कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नम:॥

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं

महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायीस्यात् सार्वभौम: सार्वायुष

आन्तादापरार्द्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ता या एकराड़िती।

तदप्येष श्लोकोभिगीतो मरु त: परिवेष्टारो मरु तस्यावसन् गृहे।

आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वे देवा: सभासद इति॥

ॐ विश्वतश्चक्षुरु तविश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्।

सम्बाहुभ्यां धमति सम्पत्त्रैर्द्यावा भूमी जनयन्देव एक:॥

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ति: प्रचोदयात्॥

ॐ तत्पुरु षायविद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रु द्र: प्रचोदयात्॥

ॐ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्॥

सेवन्तिका बकुलचम्पक पाटलाब्जैर्पुनागजातिकरवीररसालपुष्पै:।

बिल्वप्रवाल तुलसीदलमञ्जरीभिस्त्वां पूजयामि जगदीश्वर! मे प्रसीद॥

मन्दारमालाकुलितालकायै कपालमालाङ्कितशेखराय।

दिव्याम्बरायै च दिगम्बराय, नम: शिवायै च नम: शिवाय॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

पत्रं पुष्पं फलं तोयं, रत्नानिविविधानि च।

गृहाणार्घ्यं मयादत्तं देहि मे वाञ्छितं फलं॥

रूपं देहि जयं देहि भाग्यं भगवन् देहि मे।

पुत्रान देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे॥

फलेन फलितं सर्वं त्रैलाक्यं सचराचरम्।

फलस्यार्घ्यप्रदानेन सफला: सन्तु मनोरथा:॥

ॐ साङ्गाय सायुधाय सावाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय।

ॐ नमो .... नम:। मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

प्रदक्षिणा (चण्डी की एक परिक्रमा, सूर्य की सात परिक्रमा, गणेश की तीन, विष्णु की चार तथा भगवान शिव की आधी प्रदक्षिण करनी चाहिए।) :-

एकस्मै स्वाहा द्व्वाभ्यास्वाहा शताय स्वाहैकशताय

स्वाहा व्व्युष्टयै स्वाहा स्वर्ग्गाय स्वाहा ॥

यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

प्रणाम :-

यो नप्तपिता जनिता यो व्विधाता धामानि व्वेदभुवनानि व्विश्श्वा।

यो देवानान्नामधाऽएकऽएव तश् सम्प्रश्नम्भुवना यन्त्यन्या॥

विसर्जन :-

यान्तु देवगणा: सर्वे पूजामादाय मामकीम् ।

इष्टकाम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥

तिलकाशीर्वाद (आचार्य यजमान को सपरिवार आशीर्वाद देवे) :-

ऊँ श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते।

धान्यं धनं पशुं बहुपुत्र लाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायु:॥

मन्त्रार्था: सफला: सन्तु पूर्णा: सन्तु मनोरथा:।

शत्रूणां बुद्धिनाशोस्तु मित्राणामुदयस्तव॥

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु।

गोवाजिहस्ति धनधान्य समृद्धिरस्तु।

शत्रुक्षयोऽस्तु निजपक्षमहोदयोऽस्तु।

वंशे सदैव भवतां हरिभक्तिरस्तु॥

आरती के पश्चात् देवताओं को प्रणाम करके सभी का आशीर्वाद ग्रहण करे।

12.5. सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत छात्रों को पूर्व में की गयी विविध देवताओं की पूजा में मन-क्रम-वचन-धन व सामग्री के अभाव में अथवा ज्ञात-अज्ञात त्रुटियों की पूर्ति को पूर्ण करने अथवा क्षमा याचना के रूप में देवता की विविधि प्रकार से आरती का ज्ञान प्राप्त हुआ। इस इकाई के माध्यम से दीपक, जल, शुद्ध वस्त्र, विविध पल्लव, प्रणाम के

रूप में मङ्गला, धूप, शृङ्गार, राजभोग, ग्वाल, सन्ध्या एवं शयन के समय में देवताओं को प्रसन्न करने के लिए एवं अपने कष्टों के निवारण हेतु देवप्रतिमा के चरणों पर चार बार, नाभिप्रदेश में दो बार, मुखमण्ड़ल पर एक बार तथा समस्त अङ्गों पर सात बार आरती करने की विधि सहित लौकिक एवं वैदिक आरतियों के अभ्यास का ज्ञान प्राप्त हुआ।

12.6. शब्दावली

1. आरती	=	पूजन की त्रुटियों को दूर करने की विधि
2. कर्पूर	=	ज्वलनशील पदार्थ
3. मङ्गला आरती	=	ब्रह्ममुहूर्त्त में की जाने वाली मङ्गल आरती
4. ग्वाल आरती	=	गोधुलि के समय की जाने वाली आरती
5. वर्तिका	=	रुई से बनी हुई बत्ती
6. वाद्ययन्त्र	=	आरती के समय बजाने योग्य यन्त्र (मृदङ्ग, शङ्ख, घड़ियाल, घण्टा आदि)
7. आर्तनिवारण	=	कष्टों से मुक्ति

12.7. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : आरती क्यों की जाती है ?

उत्तर : पूजन में जो भी त्रुटियाँ रह जाती है, उनकी पूर्ति के लिए आरती की जाती हैं।

प्रश्न - 2 : आरती के समय बजाने जाने वाले मुख्य वाद्ययन्त्र कौन-कौन से हैं?

उत्तर : आरती के समय बजाने जाने वाले मुख्य वाद्ययन्त्र - मृदङ्ग, शङ्ख, घड़ियाल, घण्टा, नगाड़ा आदि।

प्रश्न - 3 : आरती के पाँच अङ्ग कौन-कौन से है ?

उत्तर : आरती के पाँच अङ्ग - 1. दीपमाला, 2. जलयुक्त शङ्ख, 3. धुले हुए वस्त्र, 4. आम व पीपल के पत्ते, 5. साष्टाङ्ग दण्डवत् ।

प्रश्न - 4 : देवताओं के समस्त अङ्गों पर कितनी बार आरती करनी चाहिए ?

उत्तर : देवताओं के समस्त अङ्गों पर सात (7) बार आरती करनी चाहिए।

प्रश्न - 4 : भगवान्गणेश की आरती के पश्चात् कितनी प्रदक्षिणा करनी चाहिए ?

उत्तर : भगवान गणेश की आरती के पश्चात् तीन (3) प्रदक्षिणा करनी चाहिए।

12.8. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : आरती शब्द की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 2 : किस-किस समय में आरती किस प्रकार की जाती है ? विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 3 : वैदिक आरतियाँ बताईये ?

प्रश्न - 4 : किसी भी एक देवता की लौकिक आरती का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 5 : मन्त्रपुष्पाञ्जलि की विवेचना कीजिये ?

12.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हवनात्मक दुर्गासप्तशती सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

2. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी सम्पादक - डॉ. रवि शर्मा प्रकाशक - अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर ।

3. आरती संग्रह प्रकाशक - कर्मसिंह अमरसिंह, हरिद्वार ।

4. आरती संग्रह - संग्रहग्रन्थसंग्रह - हनुमान प्रसाद पोद्दार प्रकाशक - गीताप्रेस, गोरखपुर।

इकाई — 13

श्राद्ध परिचय

इकाई की रूपरेखा

13.1. प्रस्तावना

13.2. उद्देश्य

13.3. विषय प्रवेश

13.5. सारांश

13.6. शब्दावली

13.7. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

13.8. लघुत्तरीय प्रश्न

13.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

13.1. प्रस्तावना

पितरों का ऋण श्राद्ध द्वारा चुकाया जाता है, आश्विनमास के कृष्णपक्ष एवं मृत्युतिथि को श्राद्ध किया जाता है। श्राद्ध का अर्थ है - श्रद्धया दीयते यत् तत् श्राद्धम् अर्थात् जो भी श्रद्धा से दिया जाये। पितृपक्ष में श्राद्ध तो मृत्यु तिथि को ही होता है, किन्तु तर्पण प्रतिदिन किया जाता है। देवताओं तथा ऋषियों को जल देने के पश्चात् पितरों को जल देकर तृप्त किया जाता है। यद्यपि प्रत्येक अमावस्या पितरों की पुण्यतिथि है तथापित आश्विन की अमावस्या पितरों के लिए परम फलदायी है। इसी प्रकार पितृपक्ष की नवमी को माता के श्राद्ध के लिए पुण्यदायी माना गया है। श्राद्ध के लिए गयातीर्थ सर्वोत्तम तीर्थ माना गया है। श्राद्ध संस्कार न होकर एक आवश्यक कर्म है। श्राद्ध पितरों के प्रति हमारी निष्ठा को प्रकट करता है। आश्विन मास का कृष्णपक्ष पितृपक्ष के नाम से प्रसिद्ध है, पितृपक्ष में होने वाले श्राद्ध पार्वण एवं महालय श्राद्ध के नाम से जाने जाते है। जब कन्या के सूर्य भाद्रपद

शुक्लपक्ष में पूर्णिमा से अमावस्या तक सोलह दिन तक जो श्रद्धा से पूर्वजों के प्रति कर्म किया जाता है, उसे श्राद्ध कहते है। पितृपक्ष में तिल-कुश-जल-भोजन इत्यादि जो भी दान में दिया जाता है, वह अमृतरूप होकर पितरों को प्राप्त होता है। पूर्णिमा से अमावस्या तक पितृपक्ष के सोलह दिन श्राद्धपक्ष के नाम से जाने जाते है, इनमें पितृतर्पण व श्राद्ध करने से सुख एवं समृद्धि कर्मकर्ता को प्राप्त होती है।

आश्विन में सूर्य दक्षिणायन के मध्य में स्थित होता है, इसी कारण श्राद्ध के लिए आश्विनकृष्णपक्ष को विशेष माना गया है। इस पक्ष में सूर्य कन्या राशि में होने से कन्यागत अथवा कनागत भी इसका एक अपर नाम है। पितरलोक में कृष्णपक्ष की अष्टमी को सूर्योदय, शुक्लपक्ष की अष्टमी को सूर्यास्त, अमावस्या को मध्याह्न तथा पूर्णिमा को अर्द्धरात्रि होती है।

1. कन्यागत श्राद्ध :- पूर्णिमा से अमावस्या तक 16 श्राद्ध।

1. सौभाग्यवती मृतक का श्राद्ध
2. मृतक सन्यासियों का श्राद्ध
3. विष-शस्त्रादि से मृतक का श्राद्ध
4. सर्वपितृ श्राद्ध
5. नक्षत्र के अनुसार श्राद्ध यथा भरणी-कृतिका व मघा का श्राद्ध

2. पार्वण श्राद्ध :- महालय व अमावस्या विधान से जो श्राद्ध किया जाता है, उसे पार्वण श्राद्ध कहते है।

3. वृद्धि श्राद्ध :- विवाह, सन्तान आदि माङ्गलिक कार्यों में जो श्राद्ध किया जाता है, उसे वृद्धि श्राद्ध कहते है।

4. सपिण्ड़न श्राद्ध :- प्रेत को पितरों के साथ मिलाने के लिए जो श्राद्ध किया जाता है, उसे सपिण्ड़न श्राद्ध कहते है।

5. नित्य श्राद्ध :- प्रतिदिन जो श्राद्ध किया जाता है, उसे नित्य श्राद्ध कहते है।

6. नैमित्तिक श्राद्ध :- किसी विशेष उद्देश्य से जो एकोद्दिष्ट श्राद्ध किया जाता है, उसे नैमित्तिक श्राद्ध कहते है।

7. काम्य श्राद्ध :- विशेष कामना के लिए जो श्राद्ध किया जाता है, उसे काम्य श्राद्ध कहते है।

13.2. उद्देश्य

1. श्राद्ध विधि-विधान का परिचय।

2. श्राद्ध से सम्बन्धित भ्रान्तियों का निराकरण।

3. श्राद्ध में श्रद्धा का महत्त्व।

13.3. विषय प्रवेश

पित्र्ये रात्र्यहनी मास: प्रविभागस्तु पक्षयो:।

कर्मचेष्टास्वह: कृष्ण: शुक्लं स्वप्राय शर्वरी।।

मनुष्यों का एक मास पितरों का एक दिन-रात होता है। कृष्णपक्ष पितरों के कार्य के लिए होता है, अत: वह पितरों का एक दिन होता है और शुक्लपक्ष सोने के लिए है, अत: वह पितरों की रात होती है। यह सनातन धर्म का सिद्धान्त वैज्ञानिक होने से मान्य एवं सत्य सिद्ध हुआ है। इस लोक से मरकर गये हमारे पितरों की अवस्थिति पितृलोक में होती है। हमे उनके मध्याह्न काल में उन्हे भोजन पहुँचना है। उसमे दो प्रकार है-एक तो यह कि हमें उनके नाम से अग्नि में हविका हवन करना चाहिए, क्योंकि अथर्ववेद संहिता में मृत पितरों के खिलाने के लिए अग्नि से प्रार्थना की गई है :-

ये निखाता ये परोप्ता ये दग्धा ये चेर्द्दिता:।

सर्वास्तानग्र आ वह पितृन हविषे अत्तवे।।

अर्थात्-अग्निदेव! जो पृथ्वी में गाडे गये है, जो जल में प्रवाहित किए गए है जो चिता मे जलाए गए है अथवा अन्तरिक्ष में नष्ट हो गए है, उन सभी पितरों को आप इस श्राद्ध कार्य मे बुला कर लायें। महाभारत आदि पर्व मे अग्नि की उक्ति है :-

वेदोक्तेन विधानेन मयि यद् हूयते हवि:।

देवता: पितरश्चैव तेन तृप्ता भवन्ति च ।।

देवानो पितृणां च मुखमेतद्हं स्मृतम्

अमावस्या हि पितर: पौर्णमास्यां हि देवता।

मन्मुखेन हूयन्ते भुञ्जन्ते न हुतं हवि:।।

(वेदाक्त विधान से मुझ अग्नि में जिस हविका हवन होता है, उससे देवता तथा पितर तृप्त हो जाते है। देवताओं तथा पितरो का मुख मैं (अग्नि) हूँ। अमावस्या में पितर तथा पूर्णिमा में देवता मेरे मुख से ही हवि खाते है।) दूसरा प्रकार यह है कि- अग्नि के सहोदर ब्राह्मण की जठराग्नि में ब्राह्मण के मुख द्वारा उन देव एवं पितरो के नाम से हव्य-कव्य समर्पित किया जावे। यथा - विद्यातप: समृद्धेषु हुतं विप्रतुखाग्रिषु ।(विद्या एवं तप से समृद्ध ब्राह्मण के मुख वा अग्नि में आहुति डाली जाए।) अग्नि और ब्राह्मण की सहोदरता में प्रमाण यह है कि ब्राह्मण तथा अग्नि दोनो की विराट् पुरूष के मुख से उत्पत्ति वेदादि शास्त्रों में कही गयी है, जैसा कि -

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्य्‌ कृत।

ऊरू तदस्य यद्वैश्श्य्‌ पद्भ्याœ शूद्रोऽअजायत।।

'ब्राह्मणोऽस्यमुखमाद् (यजु0 माध्यं0 सं0 31/11)

'मुखादग्रिरजायत (माध्यं0 11/12)

इसलिए शास्त्रों में ब्राह्मणो का आग्रेय वा अग्नि कहा गया है, तभी मीमांसा दर्शन के 3/4/24 सूत्र के श्री शंकराचार्य भाष्य में 'आग्रेयो वै ब्राह्मणम् श्रुति पर प्रकाश डालते हुए इस प्रकार प्रश्नोत्तर प्रक्रिया आई है। (प्रश्न) अनाग्नेय ब्राह्मणो में आग्नेय आदि शब्द किस सम्बन्ध से कहे जाते है ? (उत्तर) वे दोनो एक जाति वाले है, जैसे कि कृष्णयजुर्वेद संहिता मे है कि प्रजापति ने प्रजाओ की सृष्टि सोची, उसमें अग्नि ने योग दिया, मनुष्यो में ब्राह्मण की एक जातीयता स्पष्ट शब्दों मे कही गई है, क्योंकि दोनो की उत्पत्ति मुख से हुई है।

कुछ अन्य प्रमाण भी देख लेने चाहिए। मनुस्मृति में कहा गया है-

- अग्नि न हो, तो (पितृदान) ब्राह्मण को ही दे दे।

'अग्रयभावे तु विप्रस्य पाणौ एवोपपादयेत् यह कहकर वहाँ हेतु दिया गया है-

यो ह्यग्नि: स द्विजो विप्रैर्मन्त्रदर्शिभिरूच्यते यहाँ मन्त्र द्रष्टाओं द्वारा अग्नि को ब्राह्मण माना गया है। कठोपनिषद् में कहा है- वैश्वानर: प्रविशति अतिथिर्ब्राह्मणो गृहान्।

यहां पर ब्राह्मणों को वैश्वानर अग्नि माना गया है। यहां स्वामी श्री शंकराचार्य ने भाष्य में कहा है-

वैश्वानरोऽग्निरेव साक्षात् प्रविशति अतिथि:

सन् ब्राह्मणो गृहान् भविष्य पुराण मे भी कहा है- 'ब्राह्मणा ह्यग्निदेवास्तु निष्कर्ष यह कि प्रथम प्रकार से साक्षात् अग्नि और दूसरे प्रकार से ब्राह्मणस्थ वैश्वानर अग्नि कव्य को सूक्ष्म करके पितरों को पहुँचाते है। वे पितर उस सूक्ष्म कव्य से तृप्त हो जाते है, क्योकि - वे स्वयं सूक्ष्म शरीरात्मक होते है। इसी कारण उनके लिए स्थूल से सूक्ष्मभूत भोजन की आवश्यकता होती है। उसी से उनकी तृप्ति होती है, जिसे इस प्रकार समझना चाहिए - हम अपने मुखद्वारा स्थूल भोजन को अपने पेट में भेजते है, परंतु हमारी आत्मा सूक्ष्म है उसके लिए सूक्ष्म भोजन अपेक्षित है। उस समय उस स्थूल भोजन को हमारी जठराग्नि सूक्ष्म करके हमारी सूक्ष्म आत्मा को सौंप देती है। उस सूक्ष्म तत्त्व से हमारी सूक्ष्म अन्तरात्मा तृप्त हो जाती है। यहाँ पर वह स्वयं ही यह कार्य करती रहती है हमे वहाँ कोई चिन्ता नहीं करनी पडती। इस प्रकार सूक्ष्म पितर भी हमारे दिए हुए स्थूल भोजन के अग्नि एवं ब्राह्मणाग्नि द्वारा किए गए सूक्ष्म तत्व को प्राप्त करके तृप्त हो जाया करते है। यहाँ पर ब्राह्मण की अग्नि व्यापक-महाग्नि के साथ मिलकर स्वयं ही उस कार्य को करती जाती है। वहाँ पर उसके लिए ब्राह्मण को कोई चिन्ता नही करनी पडती। यज्ञ से प्रसन्न हुए देवता वृष्टि करते है, जैसा कि श्रीमनुजी ने कहा है-

'अग्नौ प्रास्ताहुति सम्यगादित्यतुपतिष्ठते: आदित्याज्जायते वृष्टि:।

इसी प्रकार श्राद्ध-अन्न (पितृहवि) को अग्नि का सहोदर ब्राह्मण एवं अग्नि प्राप्त करते है, तब ब्राह्मण की अग्नि उस कव्य को सूक्ष्म करके स्वयं भी सूक्ष्म हो कर व्यापक महाग्नि के साथ मिलकर आकाशाभिमुख चन्द्रलोकस्थ पितरो को सौप देती है। इससे वे पितर तृप्त होकर अपने माहात्म्य से श्राद्ध करने वाले के धान्य, सन्तानादि को देते है।

जैसे देवताओं को 'सोमाय स्वाहा, 'वरूणाय स्वाहा आदि मन्त्रों से दी हुई हवि को सूर्य खींचते हैं, वैसे ही पितरों के उद्देश्य से दी हुई हवि को सूर्य खींचकर अपनी सुषुम्णा रश्मि से प्रकाशित चन्द्रलोक में भेज देते है, वह चन्द्र अपने मे स्थित पितरों को उक्त हवि पहुँचा देता है। उस श्राद्ध भोग को ब्राह्मण की अग्नि मन्द न पड जाए, जिससे महाग्नि से उसका मेल न हो सके, इसलिए शास्त्रों ने उस दिन कई विभिषिकाएँ देकर उसे पूर्व रात्रि में संयमी रहने

के लिए आदिष्ट किया है- यही उसमें रहस्य है। शेष ब्राह्मणों को भस्मीभूत कहा गया है । इसलिए पितृश्राद्ध मे दोषहीन विशिष्ट ब्राह्मण को बुलाने को मनुस्मृति आदि में कहा है। कई लोग देवताओं को जड़ मानते है, तब सूर्य चन्द्रादि किरणों के भी जड होने से वे उस पितर को दिया हुआ कव्य कैसे पहुँचा सकते है- यह प्रश्न होता है, इस पर उत्तर यह है- हमलोगो के कर्म भी तो जड हुआ करते है? जैसे कर्मों के अधिष्ठाता परमात्मा जड नही है, किंतु सर्वव्यापक एवं चेतन है, वे ही देव और पितरों के कर्मों के भी व्यवस्थापक है। वे ही सब व्यवस्थाएँ पूरी करा दिया करते है। जैसे हजारों गौओ मे बछड़ा अपनी माता को प्राप्त कर लिया करता है, वैसे ही पुत्रकृत श्राद्ध भी पितरों के पास उपस्थित हो जाता है । यही मृतक श्राद्ध का रहस्य है, अग्नि पितृलोकस्थ पितरों को सूक्ष्म कव्य समर्पित करती है- इसमे कई वेद-मन्त्रों की साक्षी भी है, यथा -

ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा मध्ये दिव: स्वधा मादयन्ते।

त्वं तान् वेत्थ यदि ते जातवेद: स्वधया यज्ञे स्वधितिं जुषन्तम्।।

इससे सिद्ध है कि वेद में श्राद्ध के प्रसङ्ग में प्रयुक्त 'पितृ शब्द मातृ पितृवाचक होता है । इसीलिए वेद मे कहा है- पितृणां लोकमपि गच्छन्तु ये मृता: अस्त्वधा मृता: पितृषु सं भवन्तु इस प्रकार मृतक श्राद्ध की वैदिकता सिद्ध हो गई। मृतक के मासिक श्राद्ध करने का यही रहस्य है। शारदिक वार्षिक श्राद्ध तो विशिष्ट होता है। भाद्रपद पूर्णिमा से प्रारम्भ होकर आश्विन की अमावस्या तक सब तिथियों मे भिन्न-भिन्न पितर भोजन पाते है। जैसे हम कभी विवाहादि विशेष भोजन प्राप्त करते है, जन्माष्टमी आदि के अवसर पर भक्तगण आधी रात के समय भी पारण करते है, उसी प्रकार अपवाद होने से पितरों के विषय मे शुक्ल पक्षीय क्षयादि तिथि मे जान लेना चाहिए। वे पितर उस तिथि मे उस मार्ग में होते है। तिथियों का सम्बन्ध चन्द्रमा से होता है, शारदिक श्राद्ध भी पार्वण होने से विशेष पितरों का विशेष पर्व ही समझना चाहिए ।श्राद्ध में ब्राह्मण-भोजन का उल्लेख आपस्तम्बधर्म बोधनीय पितृमेध एवं बोधनीय गृह्यसूत्र और हिरण्यकेशीय गृह्यसूत्र में तो आया ही है मानवगृह्य सूत्र में भी कहा गया है कि 'श्राद्धमपरपक्षेपितृभ्यो द्द्यात् अनुगुप्तमन्ने ब्राह्मणान् भोजयेत्। नावेदविद् भुञ्जीत् इति श्रुति इ त्यादि। इसी प्रकार-यां ते धेनुं विपूरणामि यमुते क्षीरमोदनम् इत्यादि से मृतक के निमित्त गोदान तथा खीर का विधान है- इममोदनं निद्धे ब्राह्मणेषु महाभारत के वन पर्व मे भी कहां है- **ब्राह्मणा एव सम्पूज्या: पुण्यस्वर्गमभीप्सता।।**

श्राद्धकाले तु यत्नेन भोक्तव्या ह्यजुगुप्सिता:।

इस प्रकार मृतक श्राद्ध और ब्राह्मण भोजन जहाँ वेदादिशास्त्र सम्मत हुआ, वहाँ पर वैज्ञानिक सिद्ध हुआ। अग्निष्वता: पितर एह (आइह) गच्छत सद:-सद: सुप्रणीतय:। अत्ता हर्वांषि प्रयतानि यहा मृतको को ही पितर और हवि के भक्षणार्थ बुलाकर मृतक पितृ-श्राद्ध को वैदिक सिद्ध किया गया है। 'यान् अग्रिरेव दहन् स्वदयति ते पितरो अग्रिष्वाता: जीवित पितर अग्रिदध नहीं होते। त्वमग्न ईडित: कव्यवाहनवाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वी। प्रादा: पितृभ्य: ते स्वधया अक्षन्नद्धि। इस मन्त्र में कहा गया है कि पितरों ने उस अन्न को ग्रहण किया और खा लिया। श्राद्ध भोक्ता जन्म से ब्राह्मण, वेद-विद्वान् और सदाचारी होना चाहिए। पितृलोक चन्द्रलोक के ऊपर होता है। 'सिद्धान्तशिरोमणि-मे लिखा है -

विधूध्वभागे पितरो वसन्त: स्वाध: सुधादीधितिमामनन्ति।

पश्यन्ति तेऽर्के निजमस्तकोर्ध्वे दर्शे यतोऽस्माद् तदैषाम्।।

इससे पितृलोक चन्द्रलोक के ऊपर सिद्ध होता है। जब चन्द्रमा शुक्लपक्ष में इस लोक में अपना प्रकाश करते रहते है, तब वे सूर्य से दूसरे कोने मे होते है, तब पितृ लोक मे 15 दिन तक निरन्तर एक रात्रि होती है। जब कृष्ण पक्ष होता है, तब इस लोक में रात को चाँदनी नही होती। उस समय चन्द्रलोक सूर्य के निकट होता है, तब पितृलोक की प्रजा निरन्तर (कृष्ण अष्टमी से शुक्ल अष्टमी तक) सूर्य को देखता है। इस प्रकार निरन्तर उसका एक दिन प्रात: 6 से सायं 6 तक होता है। अमावस्या जब सूर्य-चन्द्र एक राशि मे होते है, तब हमारे अपराह्व काल में सूर्य के चन्द्रलोक के सिर पर होने से चन्द्रलोक के उर्ध्वस्थ पितरों का भोजन काल (मध्याह्व) होता है। हमारी जब पूर्णिमा होती है, तब सूर्य चन्द्रलोक 6 राशि के अन्तर से बहुत दूरी होते है। तब चन्द्रलोक में रात्रि होती है। हमारा 30 दिन का एक मास होता है। परंतु चन्द्रलोक के ऊपर रहते हुए पितरों का वह24 घंटे का दिन-रात होता है। इस गणना से हमारी तिथि पितरों की मध्यमान से 48 मिनटों का समय होता है। इससे अमावस्या पितरों का मध्याह्व है। इसलिए अमावस्या के श्राद्ध का अधिक महत्व माना गया है। श्राद्ध शास्त्रीय अवश्यकरणीय कर्तव्य और पूर्वजो मे श्रद्धा का परिचायक अनुष्ठेय कर्तव्य है। पितृपक्ष में तर्पण करना तथा श्राद्ध करना प्रत्येक आस्तिक धार्मिक का पावन कर्तव्य है।

महालया (पितृविसर्जनी अमावस्या) :-

आश्विन कृष्ण अमावस्या को पितृविसर्जनी अमावस्या को महालया कहते है। जो व्यक्ति पितृपक्ष के पन्द्रह दिनों तक श्राद्ध-तर्पण नहीं करते है, वे अमावस्या को ही अपने पितरों के निमित्त श्राद्धादि सम्पन्न करते है, जिन पितरों

की मृत्युतिथि याद न रहे, उनके निमित्त, श्राद्ध, तर्पण, दान आदि इसी अमावस्या को किया जाता है। इसी दिन पितर अपने पुत्रादिकों के द्वार पर पिण्ड़दान एवं श्राद्धादि की आशा में आते है, यदि वहाँ उन्हें पिण्ड़दान या तिलाञ्जलि नहीं मिलती है तो वे शाप देकर चले जाते है। अतएव एकदम श्राद्ध का परित्याग नहीं करे, पितरों को यथाशक्ति सन्तुष्ट अवश्य करे।

श्राद्ध में ग्राह्य पुष्प :-

श्राद्ध में मुख्यरूप से सफेद पुष्प ग्राह्य है, सफेद में सुगन्धित पुष्प की विशेष महिमा है। मालती, जूही, चम्पा- प्राय: सभी सुगन्धित श्वेत पुष्प, कमल तथा तुलसी और भृङ्गराज आदि पुष्प प्रशस्त है। स्मृतिसार के अनुसार अगस्त्यपुष्प, भृङ्गराज, तुलसी, शतपत्रिका, चम्पा, तिलपुष्प - ये छ: पितरों को प्रिय होते है।

श्राद्ध हेतु स्थान :- गया, पुष्कर, कुशावर्त (हरिद्वार) आदि तीर्थों में श्राद्ध की विशेष महिमा है। सामान्यत: घर में, गौशाला में, देवालय, यमुना, नर्मदा आदि पवित्र नदियों के तट पर श्राद्ध करने का अत्यधिक महत्त्व है। श्राद्ध स्थान को गोमय मिट्टी से लेपन करके शुद्ध कर लेना चाहिए। दक्षिण दिशा की ओर ढाल वाली भूमि प्रशस्त मानी गयी है।

श्राद्ध में योग्य ब्राह्मण :- समस्त लक्षणों से सम्पन्न, विद्या, शील एवं सद्गुणों से सम्पन्न तीन पीढ़ियों से विख्यात, प्रज्ञा से युक्त सदाचारी, सन्ध्यावन्दन एवं गायत्री-मन्त्र का जप करनेवाले श्रोत्रिय ब्राह्मणों के द्वारा श्राद्ध सम्पन्न करना चाहिए। तप, धर्म, दया, दान, सत्य, ज्ञान, वेदज्ञान, कारुण्य, विद्या, विनय तथा अस्तेय (अचौर्य) आदि गुणों से युक्त ब्राह्मण इसका अधिकारी है।

श्राद्ध में प्रशस्त आसन :- रेशमी, नेपाली कम्बल, ऊन, काष्ठ, तृण, पर्ण, कुश आदि के आसन श्रेष्ठ है। काष्ठासनों में भी शमी, काश्मरी, शल्ल, कदम्ब, जामुन, आम, मौलसिरी एवं वरुण के आसन श्रेष्ठ है। ये सभी आसन लोहे की कील से युक्त नहीं होने चाहिए।

भोजन के समय आचरण :- श्राद्ध में भोजन के समय मौन रहना चाहिए, माँगने या प्रतिषेध का संकेत हाथों से ही करना चाहिए। भोजन करते समय ब्राह्मण से अन्न की प्रशंसा अथवा निन्दा के विषय में चर्चा नहीं करनी चाहिए।

पिण्ड़ का प्रमाण (अन्न, तिल, जल, दूध, घी, मधु, धूप और दीप का सम्मिश्रण) :- एकोद्दिष्ट तथा सपिण्ड़न श्राद्ध में कैथ (कपित्थ) के फल के समान, मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध में नारियल के समान, तीर्थ एवं दर्शश्राद्ध में मुर्गी के अण्ड़े के समान तथा गया एवं पितृपक्ष में आँवल के प्रमाण के समान पिण्ड़निर्माण करना चाहिए।

श्राद्ध में वर्जित ब्राह्मण व परीक्षा का निषेध :- लंगड़ा, काना, दाता का दास, चोर, पतित, नास्तिक, मूर्ख, धूर्त, मांसविक्रयी, व्यापारी, कुनखी, काले दाँतयुक्त, गुरुद्वेषी, शूद्रापति, शुल्क लेकर पढ़ाने या पढ़ने वाला, जुआरी, अन्धा, कुश्ती सिखाने वाला, नपुंसक, अङ्गहीन एवं अधिक अङ्गवाला ब्राह्मण श्राद्ध में वर्जित है। देवकार्य, पूजा-पाठ आदि में ब्राह्मणों की परीक्षा न करे, किन्तु पितृकार्य में अवश्य करे।

श्राद्ध में प्रशस्त अन्न :- श्राद्ध में गाय का दूध, दही और घी काम में लेना चाहिए। जौ, धान, तिल, मूँग, साँवां, सरसों का तेल, तिन्नी का चावल, कँगनी आदि से पितरों को तृप्त करना चाहिए। आम, अमड़ा, बेल, अनार, बिजौरा, पुराना आँवला, खीर, नारियल, फालसा, नारंगी, खजूर, अंगूर, नीलकैथ, परवल, चिरौंजी, बेर, जंगली बेर, इन्द्रजौ और भतुआ - ये सभी श्राद्ध में प्रशस्त माने गये है।

अन्य मत से जौ, कङ्गनी, मूँग, गेहूँ, धान, तिल, मटर, कचनार और सरसों भी श्रेष्ठ है।

श्राद्ध में वर्जित अन्न :- जिस में बाल, कीड़े पड़ गये हो, जिसे कुत्तों ने देख लिया हो, जो बासी एवं दुर्गन्धित हो, ऐसी वस्तुओं का श्राद्ध में उपयोग न करे। बैंगन और शराब को भी त्याग करे। जिस अन्न पर पहने हुए वस्त्रों की हवा लग जाये, वह भी निषिद्ध है। राजमाष, मसूर, अरहर, गाजर, कुम्हड़ा, गोल लौकी, बैंगन, शलजम, हींग, प्याज, लहसुन, काला नमक, काला जीरा, सिंघाड़ा, जामुन, पिप्पली, कुलथी, कैथ, महुआ, अलसी, चना ये सभी वर्जित है।

श्राद्धकर्ता के लिए वर्जित कार्य :- जो श्राद्ध करने के अधिकारी है, उन्हें पन्द्रह दिन तक क्षौरकर्म नहीं करना चाहिए। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। प्रतिदिन स्नान के बाद तर्पण करना चाहिए। तेल, उबटन आदि का उपयोग नहीं करना चाहिए। दातुन करना, पान का सेवन, तेल लगाना, उपवास, स्त्री-विहार, औषधि सेवन, अन्य का अन्न खाना आदि भी श्राद्धकर्ता के लिए वर्जित है।

श्राद्ध में पवित्र :- दौहित्र (पुत्री का पुत्र), कुतप (मध्याह्न का समय) और तिल श्राद्ध में अत्यन्त पवित्र होते है। क्रोध, अध्वगमन एवं आतुरता श्राद्धकर्म में वर्जित है

श्राद्ध नहीं करने का फल तथा श्राद्ध करने के अधिकारी :- जिस देश में श्राद्धक्रिया का सम्पादन नहीं होता हैं वहाँ वीरपुरुष, रोगरहित मनुष्य तथा शतायु मनुष्य उत्पन्न नहीं होते है और न ही किसी का कल्याण होता है। अत: विद्वान पुरुषों का चाहिए कि श्राद्धों का सम्पादन श्रद्धा पूर्वक करना/करवाना चाहिए ।

पुत्र, पत्नी, सहोदर भाई आदि श्राद्ध करने के अधिकारी होते है अर्थात् सबसे पूर्व मृतक का पुत्र श्राद्ध करे, यदि पुत्र नहीं हो तो पत्नी श्राद्ध करे। पत्नी के भी न होने पर सहोदर भाई आदि क्रमश: श्राद्ध करे। पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, पुत्री का पुत्र, पत्नी का भाई, भाई का पुत्र, पिता, माता, बहू, बहिन सपिण्ड सोदक इनमें पूर्व के न होने से पिछले-पिछले पिण्ड के दाता कहे गये है।

बालकों के श्राद्ध की व्यवस्था :-

1. दो वर्ष के पूर्व बालक का कोई श्राद्ध तथा जलाञ्जलि आदि क्रिया करने की आवश्यकता नही होती है।
2. दो वर्ष पूर्ण हो जाने पर छ: वर्ष के पूर्व तक केवल श्राद्ध की पूर्वक्रिया अर्थात् मलिनषोड़शी तक की क्रिया करनी चाहिए। इसके बाद की एकादशाह तथा द्वादशाह की क्रिया करने की आवश्यकता नही है।
3. छ: वर्ष के बाद श्राद्ध की सम्पूर्ण क्रिया अर्थात् मलिनषोड़शी, एकादशाह तथा सपिण्ड़न आदि क्रियाएँ करनी चाहिए।
4. कन्या का दो वर्ष से लेकर दस वर्ष (अथवा रजोधर्म से पूर्व) तक पूर्वक्रिया अर्थात् मलिनषोड़शी की क्रिया करनी चाहिए तथा विवाह के अनन्तर दस वर्ष के बाद सम्पूर्ण क्रिया मलिनषोड़शी, एकादशाह तथा सपिण्ड़न करना चाहिए।

श्राद्ध में महादान :-श्राद्ध में पितरों के निमित्त दस/आठ महादान अवश्य करने चाहिए :-

वस्तु	**अधिष्ठाता देवता**	**वस्तु**	**अधिष्ठाता देवता**
1. सवत्सा गाय	रुद्र	1. सवत्सा गाय	रुद्र
2. भूमि	विष्णु	2. भूमि	विष्णु
3. तिल	प्रजापति	3. तिल	प्रजापति

4. लवण	भैरव	4. लोहा	भैरव
5. स्वर्ण	अग्नि	5. स्वर्ण	अग्नि
6. घी	मृत्युञ्जय	6. कपास	वनस्पति
7. वस्त्र	बृहस्पति	7. लवण	सोम
8. सप्तधान्य	प्रजापति	8. सप्तधान्य	प्रजापति
9. गुड़	सोम		
10. रजत	चन्द्रमा		

धर्मशास्त्रों के अनुसार श्राद्धों में तर्पण का निर्देश (किन-किन का तर्पण श्राद्ध में किया जाना चाहिए) :-

1. पिता	2. पितामह (दादा)	3. प्रपितामह (परदादा)
4. माता	5. पितामही (दादी)	6. प्रपितामही (परदादी)
7. विमाता (सौतेली माँ)	8. मातामह (नाना)	9. प्रमातामह (परनाना)
10. वृद्धप्रमातामह (वृद्धपरनाना)	11. मातामही (नानी)	12. प्रमातामही (परनानी)
13. वृद्धप्रमातामही (वृद्धपरनानी)	14. स्त्री (पत्नी)	15. पुत्र/पुत्री (सन्तान)
16. भ्रातृव्य (चाचा)	17. चाची	18. चेचरा भाई/बहन
19. मामा	20. मामी	21. मामा का पुत्र/पुत्री
22. स्वभ्राता	23. भाभी	24. भाई का पुत्र/पुत्री
25. फूफा	26. बुआ	27. बुआ का पुत्र/पुत्री

28. मौसा	29. मौसी	30. मौसा का पुत्र/पुत्री
31. स्वभगिनी	32. बहनोई	33. बहन का पुत्र
34. श्वसुर	35. सास	36. गुरु
37. गुरु की पत्नी	38. शिष्य	39. संरक्षक
40. मित्र	41. सेवक	

गया श्राद्ध कब करे ? :- मीन, मेष, कन्या, धनु, और कुम्भ राशि के सूर्य के होने पर गया में पिण्डदान करना चाहिए। यह तीनों लोकों में दुर्लभ व पुण्यकारी योग होता है। मकर के सूर्य में तथा सूर्य व चन्द्रग्रहण के समय में भी गया में पिण्डदान करना चाहिए। प्रत्येक संक्रान्ति के आदि में गयाश्राद्ध किया जा सकता है। माता-पिता के मृत्युदिन में महालय, गयाश्राद्ध, पिण्डदान आदि यथाविधि करना चाहिए। मृताह में सगोत्रियों का पिण्डदान, गयाश्राद्ध महाफलदायक होता है।

श्राद्ध करने का समय तथा गया में श्राद्ध का महत्व :- श्राद्ध के लिए प्रात: काल दैविक, मध्याह्नकाल में मानुष, अपराह्नकाल में पितरों का, सायंकाल के समय राक्षसों का काल कहलाता है, परन्तु गयाक्षेत्र में सभी कालों में पिण्डदान किया जा सकता है। इसमें अधिमास, जन्मदिन और गुरु व शुक्र के अस्त का विचार भी आवश्यक नहीं है।

दैविक, पार्वण, एकोद्दिष्ट व नैमित्तिक श्राद्ध किस समय करे ? :- पूर्वाह्न में दैविक श्राद्ध करना चाहिए, अपराह्न में पार्वण श्राद्ध करना चाहिए, मध्याह्न में एकोद्दिष्ट श्राद्ध करना चाहिए तथा प्रात: काल वृद्धिश्राद्ध करना चाहिए।

नान्दी श्राद्ध किस समय करे ? :- शुक्ल पक्ष के पूर्वाह्न में नान्दीश्राद्ध करना चाहिए तथा कृष्णपक्ष के अपराह्न में रोहिणी नक्षत्र के बाद श्राद्ध नहीं करना चाहिए।

मार्गशीर्ष शुक्ल द्वितीया को पितृपूजन का महत्व :- वृश्चिक राशि में स्थित सूर्य (मार्गशीर्ष मास) में शुक्ल पक्ष की द्वितीया को जो मनुष्य पितरों का पूजन नहीं करता है उसके सात जन्म तक भाईयों का नाश हो जाता है।

धन के अभाव में श्राद्ध की सम्पन्नता :- 1. यदि अन्न-वस्त्रादि के दान हेतु पर्याप्त धन न हो तो उस परिस्थिति में शाक से भी श्राद्ध कर सकते है। यथा - तस्माछ्राद्धं नरो भक्त्या शाकैरपि यथाविधि।

2. यदि शाक खरीदने के लिए भी पैसे न हो तो तृण-काष्ठ आदि को बेचकर धन एकत्रित करे और उन पैसों से शाक खरीदकर श्राद्ध कर सकते है।

3. पद्मपुराण के अनुसार देशकाल के अनुसार लकड़ियाँ भी नहीं मिले तो घास काटकर गाय को खिला दीजिये, तब भी आपका श्राद्धकर्म पूर्ण हो जायेगा।

4. यदि घास भी नहीं मिले तो श्राद्धकर्ता एकान्त में जाकर दोनों भुजाओं को उठाकर निम्नलिखित प्रार्थना करे :- **न मेऽस्ति वित्तं न धनं च नान्यच्छ्राद्धोपयोग्यं स्वपितृन्नतोऽस्मि।**

तृप्यन्तु भक्त्या पितरो मयैतौ कृतौ भुजो वर्त्मनि मारुतस्य।।

अर्थातः् हे पितृगण! मेरे पास श्राद्ध के उपयुक्त न तो धन है, न धान्य आदि। हाँ, मेरे पास आप के लिए श्रद्धा और भक्ति है, मैं इन्हीं के द्वारा आपको तृप्त करना चाहता हूँ, आप तृप्त हो जाये।

श्राद्ध के भेद :- मत्स्यपुराण के अनुसार तीन (1. नित्य, 2. नैमित्तिक, 3. काम्यभेद) प्रकार के श्राद्ध बताये गये है :- नित्यं नैमित्तिकं काम्यं त्रिविधं श्राद्धमुच्यते।।

यज्ञस्मृति में पाँच प्रकार के श्राद्धों का उल्लेख है :-

1. नित्य, 2. नैमित्तिक, 3. काम्य, 4. वृद्धि, 5. पार्वण।

प्रतिदिन किये जाने वाले श्राद्ध को नित्यश्राद्ध कहते है, इसमें विश्वेदेव नहीं होते तथा अशक्तावस्था में केवल जलप्रदान से भी इस श्राद्ध की पूर्ति हो जाती है। एकोद्दिष्ट श्राद्ध को नैमित्तिक श्राद्ध कहते है, इसमें भी विश्वेदेव नहीं होते। किसी कामना की पूर्ति के निमित्त किये जाने वाले श्राद्ध को काम्यश्राद्ध कहते है। वृद्धिकाल में पुत्रजन्म तथा विवाहादि मङ्गल कार्यों में जो श्राद्ध किया जाता है, उसे वृद्धिश्राद्ध (नान्दिश्राद्ध) कहते है। पितृपक्ष, अमावस्या अथवा पर्व की तिथि आदि पर जो सदैव (विश्वेदेव सहित) श्राद्ध किया जाता है, उसे पार्वणश्राद्ध कहते है।

विश्वामित्र स्मृति तथा भविष्यपुराण के अनुसार द्वादश प्रकार के श्राद्ध बताये गये है :- 1. नित्य, 2. नैमित्तिक, 3. काम्य, 4. वृद्धि, 5. पार्वण, 6. सपिण्ड़न, 7. गोष्ठी, 8. शुद्ध्यर्थ, 9. कर्माङ्ग, 10. दैविक, 11. यात्रार्थ तथा 12. पुष्ट्यर्थ। प्राय: सभी श्राद्धों का अन्तर्भाव उपरोक्त पञ्चश्राद्धों में हो जाता है।

जिस श्राद्ध में प्रेतपिण्ड़ का पितृपिण्ड़ों में सम्मेलन किया जाता है, उसे सपिण्ड़नश्राद्ध कहते है। समूह में जो श्राद्ध किया जाता है, उसे गोष्ठीश्राद्ध कहते है। शुद्धि के निमित्त जिस श्राद्ध में ब्राह्मणों को भोजन करवाया जाता है, उसे शुद्ध्यर्थ कहते है। गर्भाधान, सीमन्तोन्नयन तथा पुंसवन आदि संस्कारों में जो श्राद्ध किया जाता है, उसे कर्माङ्ग श्राद्ध कहते है। सप्तमी आदि तिथियों में विशिष्ट हविष्य के द्वारा देवताओं के निमित्त जो श्राद्ध किया जाता है, उसे दैविकश्राद्ध कहते है। तीर्थ के उद्देश्य से देशान्तर जाने के समय घृतद्वारा जो श्राद्ध किया जाता है, उसे यात्रार्थश्राद्ध कहा जाता है। शारीरिक अथवा आर्थिक उन्नति के लिए जो श्राद्ध किया जाता है, वह पुष्ट्यर्थ श्राद्ध कहलाता है। उपर्युक्त सभी प्रकार के श्राद्ध श्रौत व स्मार्त-भेद से दो प्रकार के होते है। पिण्ड़पितृयाग को श्रौतश्राद्ध कहते है और एकोद्दिष्ट, पार्वण तथा तीर्थश्राद्ध से लेकर मरण तक श्राद्ध को स्मार्तश्राद्ध कहते है। श्राद्ध के 96 अवसर है :-

1. बारह महीनों की बारह अमावस्याएँ (12)

1. चैत्रकृष्ण अमावस्या	2. वैशाखकृष्ण अमावस्या
3. ज्येष्ठकृष्ण अमावस्या	4. आषाढ़कृष्ण अमावस्या
5. श्रावणकृष्ण अमावस्या	6. भाद्रपदकृष्ण अमावस्या
7. आश्विनकृष्ण अमावस्या	8. कार्तिककृष्ण अमावस्या
9. मार्गशीर्षकृष्ण अमावस्या	10. पौषकृष्ण अमावस्या
11. माघकृष्ण अमावस्या	12. फाल्गुनकृष्ण अमावस्या

2. सत्ययुग, त्रेतादियुगों की प्रारम्भिक चार युगादि तिथियाँ (4)

तिथियाँ	**युगादि**
कार्तिकशुक्ल नवमी	सत् युगादि

वैशाख शुक्ल तृतीया	त्रेतायुगादि
माघकृष्ण अमावस्या	द्वापरयुगादि
श्रावणकृष्ण त्रयोदशी	कलियुगादि

3. मनुओं के प्रारम्भ की चौदह मन्वादि तिथियाँ (14)

तिथियाँ :- चैत्रशुक्ल तृतीया व पूर्णिमा, कार्तिशुक्ल पूर्णिमा व द्वादशी, आषाढ़शुक्ल दशमी व पूर्णिमा, ज्येष्ठ व फाल्गुनशुक्ल पूर्णिमा, आश्विनशुक्ल नवमी, माघशुक्ल सप्तमी, पौषशुक्ल एकादशी, भाद्रपद शुक्ल तृतीया, श्रावणकृष्ण अमावस्या व अष्टमी।

4. बारह संक्रान्तियाँ (12)

5. बारह वैधृतियोग (12)

6. बारह व्यतिपात योग (12)

7. पन्द्रह महालय श्राद्ध (पितृपक्ष) (15)

8. पाँच अष्टकाश्राद्ध (5)

9. पाँच अन्वष्टका श्राद्ध (5)

10. पाँच पूर्वेद्यु: श्राद्ध (5), इस प्रकार कुल मिलाकर 96 श्राद्ध के अवसर वर्षभर में आते है।

श्राद्ध विधि :- सामान्य रूप से कम से कम वर्ष में दो बार श्राद्ध करना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त अमावस्या, व्यतिपात, संक्रान्ति आदि पर्व की तिथियों में भी श्राद्ध करने का विधान है।

1. क्षयतिथि :- जिस दिन व्यक्ति की मृत्यु होती है, उस तिथि पर वार्षिक श्राद्ध करना चाहिए। शास्त्रों में क्षय तिथि पर एकोद्दिष्ट श्राद्ध करने का विधान है (कुछ स्थानों पर पार्वणश्राद्ध भी करते है)। एकोद्दिष्ट का

तात्पर्य है कि केवल मृत व्यक्ति के निमित्त एक पिण्ड़ का दान तथा एक ब्राह्मण (न्यूनतम) को भोजन करवाया जाये और अधिक से अधिक से अधिक तीन ब्राह्मणों को भोजन करवाया जाये।

2. **पितृपक्ष** :- पितृपक्ष में मृत व्यक्ति की तिथि आये, उस तिथि पर मुख्यरूप से पार्वणश्राद्ध करने का विधान है। यथासम्भव पिता की मृत्यु पर इसे अवश्य करना चाहिए । पार्वणश्राद्ध में पिता, पितामह (दादा), प्रपितामह (परदादा) सपत्नीक अर्थात् मातामह (नाना), प्रमातामह (परनाना), वृद्ध प्रमातामह (वृद्ध परनाना) सपत्नीक अर्थात् नानी, परनानी तथा वृद्ध परनानी- यहाँ भी तीन चट में छ: लोगों का श्राद्ध सम्पन्न होगा। इसके अतिरिक्त एक चट और लगाया जाता है, जिस पर अपने निकटतम सम्बन्धियों के निमित्त पिण्ड़दान किया जाता है। इसके अतिरिक्त दो विश्वेदेव के चट लगते है। इस प्रकार नौ चट लगाकर पार्वणश्राद्ध सम्पन्न होता है। पार्वणश्राद्ध में नौ ब्राह्मणों को भोजन करवाना चाहिए। यदि कम कराना हो तो तीन ब्राह्मणों को ही भोजन कराया जा सकता है। यदि अच्छे ब्राह्मण उपलब्ध न हो तो कम से कम एक सन्ध्यावन्दन आदि करने वाले सात्त्विक ब्राह्मण को भोजन अवश्य करवाये ।

स्त्री, अनुपनीत, द्विज तथा द्विजेतरों के द्वारा श्राद्ध करने की व्यवस्था :-

स्त्रियों तथा अनुपनीत द्विज जिन्होंने यज्ञोपवीत नहीं लिया एवं द्विजेतर उनके लिए भी शास्त्रानुसार श्राद्ध की जो प्रक्रिया यहाँ लिखी गयी है, उन्हें केवल निम्नलिखित बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है :-

1. सङ्कल्प में "प्रणव (ॐ) के स्थान पर "नम: का उच्चारण करना चाहिए।

2. सङ्कल्प में अपने "नाम-गोत्र के आगे "शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं के स्थान पर "दासोऽहम का उच्चारण करना चाहिए ताकि गोत्र में "कश्यप गोत्र कहना चाहिए। स्त्री करे तो "अमुकी देवी कहे ।

3. जहाँ वैदिक मन्त्र है, उनका उच्चारण नहीं करना चाहिए। उनके स्थान पर नाम-मन्त्रों को बोलकर प्रक्रिया पूरी कर लेनी चाहिए।

4. जहाँ वैकल्पिक पौराणिक मन्त्र न हो, वहाँ आमन्त्रक सभी कियाएँ होगी अर्थात् बिना मन्त्र बोले श्राद्ध की सम्पूर्ण क्रिया सम्पन्न होगी ।

5. पक्वान्न की जगह अमान्न से श्राद्ध करना चाहिए। पिण्ड़दान आदि का कार्य भी आमान्न (जौ के आटे अथवा चावल आदि से करने की विधि है) तथा ब्राह्मण-भोजन में भी आमान्न (अपक्व भोजन सामग्री)

ब्राह्मण को देने से यह प्रक्रिया पूरी हो जाती है। शास्त्रानुसार इस प्रक्रिया से श्राद्ध के फल में कोई न्यूनता नहीं है।

श्राद्ध में पञ्चबलि की विधि :- श्राद्ध पक्ष में मृत्यु तिथि को पार्वण श्राद्ध करना चाहिए- 'पर्वणि भव: पार्वण: महालय में एकोदिष्ट श्राद्ध नहीं होता हैं। जो पार्वणश्राद्ध न कर सके, वह कम से कम पञ्चबलि निकालकर ब्राह्मण-भोजन ही कराये, जिसका विधान हम यहाँ बता रहे है। बहुत से व्यक्ति पार्वणश्राद्ध नहीं कराकर केवल ब्राह्मण-भोजन ही करा देते हैं, हम सभी को पञ्चबलि अवश्य ही करनी चाहिए, उसका नियम इस प्रकार है :-

श्राद्ध के निमित्त भोजन तैयार होने पर एक थाली में पाँच जगह थोड़े-थोड़े सभी प्रकार के भोज्य-पदार्थ परोसकर हाथ में जल, अक्षत, पुष्प, चन्दन लेकर निम्नलिखित सङ्कल्प करे :-

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयो: पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव-ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्र: (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मन: श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा-मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशे: नामराशे: वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादश स्थानस्थितक्रूरग्रहास्तै: सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान-स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं ममोपात्तदुरिक्षयपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं मम पितु: (मातु: भ्रातु: पितामहस्य वा) वार्षिक श्राद्धे (महालय श्राद्धे) कृतस्य पाकस्य शुद्ध्यर्थं पञ्चसूनाजनितदोषपरिहारार्थं च पञ्चबलिदानं करिष्ये।

1. गाय हेतु बलि (पत्ते पर) :- मण्डल के बाहर पश्चिम की ओर निम्नलिखित मन्त्र (यदि मन्त्र याद न रहे तो 'गोभ्यो नम: आदि मन्त्र से बलि प्रदान कर सकते हैं।) पढ़ते हुए सव्य (दक्षिणाभिमुख) होकर गोबलि पत्ते पर देवे -**ऊँ सौरभेय्य: सर्वहिता पवित्रा: पुण्यराशय:।**

प्रतिगृन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातर: ।।इदं गोभ्यो न मम।

2. श्वान हेतु बलि (पत्ते पर) :- जनेऊ को कण्ठी करके निम्नलिखित मन्त्र से कुत्ते को बलि देवे -

दौ श्वानौ श्यामशबलौ वैवस्वतकुलोद्भवौ।

ताभ्यामन्नं प्रयच्छामि स्यातामेतावहिंसकौ ।।इदं श्वाभ्यां न मम।

3. काक हेतु बलि (पृथ्वी पर) :- अपसव्य (उत्तराभिमुख) होकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर कौओं को भूमि पर अन्न देवे -

ऊँ ऐन्द्रवारुणवायव्या याम्या वै नैऋर्तास्तथा ।

वायसा प्रतिगृन्तु भूमौ पिण्डं मयोज्झितम् ।। इदम् अन्नं वायसेभ्यो न मम।

4. देवताओं हेतु बलि (पत्ते पर) :- सव्य होकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर देवता आदि के लिए अन्न देवे -

ऊँ देवा मनुष्या: पशवो वयांसि, सिद्धा: सयक्षोरगदैत्यसङ्घा:।

प्रेता: पिशाचास्तरव: समस्ता:, ये चान्नमिच्छन्ति मया प्रदत्तम् ।। इदं देवादिभ्यो न मम।

5. पिपीलिका हेतु बलि (पत्ते पर) :- इसी प्रकार निम्नलिखित मन्त्र से चींटी आदि को बलि देवे -

पिपीलिका: कीटपतङ्गकाद्या, बुभुक्षिता: कर्मनिबन्धबद्धा:।

तेषां हि तृप्त्यर्थमिदं मयान्नं, तेभ्यो विसृष्टं सुखिनो भवन्तु ।।इदं पिपीलिकादिभ्यो न मम।

पञ्चबलि देने के बाद एक थाली में सभी पकवान परोसकर अपसव्य और दक्षिणाभिमुख होकर निम्न सङ्कल्प करे - अद्य अमुक गोत्र: अमुक शर्माऽहममुकगोत्रस्य मम पितु: (पितामहस्य मातु: वा) वार्षिकश्राद्धे (महालयश्राद्धे वा) अक्षयतृप्त्यर्थमिदमन्नं तस्मै (तस्यै वा) स्वधा।

उपर्युक्त सङ्कल्प करने के बाद 'ऊँ इदमन्नम्, 'ऊँ इमा आप:, 'ऊँ इदमाज्यम्, 'ऊँ इदं हवि: इस प्रकार बोलते हुए अन्न, जल, घी तथा पुन: अन्न को दाहिने हाथ के अङ्गुष्ठ से स्पर्श करे ।

सव्य पूर्वाभिमुख होकर आशीर्वाद के लिए निम्नलिखित प्रार्थना करे :-

गोत्रत्रा वद्र्र्तां। दातारो ना5भि वद्र्वनाम्। वेदा: सन्ततिरेव च। श्रद्वा च नो माव्यगमत्। बहुदेयं च नो5स्तु। अत्रं च नो बहुभवेत्। अतिथींश्र लभेमहि। याचितारश्र न: सन्तु। मा च याचिष्म कज्जन। एता: सत्या: आशिष: सन्तु ब्राह्मा: सन्वेता सत्या आशिष:।

तत्पश्चात् दाहिने हाथ में जल, अक्षत आदि लेकर निम्न सङ्कल्प करे -

ब्राह्मण भोजन का सङ्कल्प :- अद्य अमुकगोत्र: अमुकोऽहं मम पितु: (मातु: वा) वार्षिकश्राद्धे यथासंख्यकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

पञ्चबलि निकालकर कौओं के निमित्त निकाला गया अन्न कोएं को, कुत्ते का अन्न कुत्ते को, देवताओं का अन्न देवताओं को, चींटियों का अन्न चींटियों को तथा गाय का अन्न गाय को देने के बाद निम्नलिखित मन्त्र से ब्राह्मणों के पैर धोकर भोजन करायें।

यत् फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे।

तत्फलं पाण्डवश्रेष्ठ विप्राणां पादसेचने ॥

इसके बाद उन्हें अन्न, वस्त्र और द्रव्य-दक्षिणा देकर तिलक करके नमस्कार करे, तत्पश्चात् नीचे लिखे वाक्य यजमान व ब्राह्मण दोनों बोले -

यजमान :- शेषान्नेन किं कर्त्तव्यम्। (श्राद्ध में बचे अन्न का क्या करूं ?)

ब्राह्मण :- इष्टै: सह भोक्तव्यम्। (अपने इष्ट-मित्रों के साथ भोजन करें।)

इसके बाद अपने परिवार वालों के साथ स्वयं भी भोजन करे तथा निम्न मन्त्र द्वारा भगवान को नमस्कार करें -

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

13.4. पारिभाषिक शब्दावली

1. अक्षय्योदक दान :- श्राद्धान्त में अक्षयतृप्ति के लिए दिया जाने वाला अन्न जलादि का दान।
2. अग्न्युत्तारण :- अवघातादि दोषनिवारण के लिए किया जाने वाला प्रतिमा का संस्कार।
3. अग्नौकरण :- अन्नपरिवेषण के पूर्व जल में दी जाने वाली दो आहुतियाँ।
4. अर्घदान :- पूजा अङ्गरूप में जल प्रदान करना।
5. अर्घसंयोजन :- पितरों के अर्घों का परस्पर मेलन।
6. अनुकल्प :- विकल्प।
7. अन्तर्जानु :- हाथों को घुटने की भीतर करना।
8. अपकर्षण :- आगे होने वाले कृत्यों को पहले ही कर लेना।
9. अपरा :- दिन में 01 बजकर 12 मिनट से 03 बजकर 26 मिनट तक का समय।
10. अपसव्य :- जनेऊ तथा उपवस्त्र को दाहिने कन्धे के ऊपर डालकर बायें हाथ के नीचे कर लेना।
11. अवगाहन :- श्राद्ध में परोसे हुए अन्न आदि का अङ्गुष्ठ से स्पर्श करना।
12. अवनेजन :- श्राद्ध में पिण्ड़स्थान को पवित्र करने के लिए पितृतीर्थ से वेदी पर दिया जाने वाला जल।
13. अहोरात्र :- एक सूर्योदय से लेकर दूसरे सूर्योदय तक का समय।

14. आभ्युदयिक श्राद्ध :- विवाह आदि माङ्गलिक अवसरों पर प्रारम्भ में किया जाने वाला श्राद्ध, यह वृद्धिश्राद्ध या नान्दीश्राद्ध भी कहलाता है।

15. आमान्न :- कच्चा अन्न (अनग्नि पाकान्न)।

16. आलोड़न :- जल को घुमाना।

17. उत्तमषोडशी :- सपिण्ड़न के पूर्व तथा एक वर्ष पर्यन्त दिये जाने वाले ऊनमासिकादि सोलह पिण्ड़।

18. उत्तरापोशन :- नैवेद्य अर्पण के पश्चात् आचमन के लिए जल प्रदान करना।

19. उदकालम्भन :- जलस्पर्श।

20. उद्यापन :- व्रत आदि सत्कर्मों की सम्पन्नता के लिए किया जाने वाला पूजा-अनुष्ठान।

21. एकतन्त्र :- एकजातीय अनेक क्रियाओं का एक साथ सम्पादन।

22. एकोद्दिष्ट :- पिता आदि केवल एक व्यक्ति के उद्देश्य से किया जाने वाला श्राद्ध, यह विश्वेदेव रहित होता है। इसमें आवाहन तथा अग्नौकरण क्रिया नहीं होती है। एक पिण्ड़, एक अर्घ तथा एक पवित्रक होता है।

23. औध्र्वदैहिक कर्म :- देहान्त के बाद सद्गति के लिए किया जाने वाला कर्म।

24. करोद्वर्तन :- पूजा में नैवेद्य-अर्पण के बाद दोनों हाथों की अनामिका-अङ्गुष्ठ से चन्दन का समर्पण।

25. कर्मपात्र :- पात्र में मन्त्रद्वारा जल को संस्कारित करके पूजन योग्य बनाना।

26. कव्य :- पितरों के उद्देश्य से दिया जाने वाला द्रव्य।

27. काम्य :- किसी कामना की पूर्ति के उद्देश्य से किया जाने वाला कर्म।

28. कुम्भक (प्राणायाम) :- श्वास रोकना।

29. कुतप :- दिनमान में कुल 15 मुहूर्त्त होते है, उनमें कुतप आठवाँ मुहूर्त्त है। कु - कुत्सित (पाप) + तप (सन्तप्त) अर्थात् पाप को सन्तप्त करने के कारण यह समय कुतप (दिन में 11 बजकर 36 मिनट से 12 बजकर 24 मिनट तक का समय) कहलाता है। खड्गपात्र (गेंडे के सींग से बना पात्र), नेपाली कम्बल, रजत, कुश, तिल, जौ और दोहित्र (पुत्री का पुत्र) - ये आठों कुतप कहलाते है।

30. कुशकण्ड़िका :- हवन से पूर्व वेदी का किया जाने वाला कुशास्तरण आदि संस्कार।

31. कुशवटु :- पार्वण आदि श्राद्धों में पितृब्राह्मण के प्रतिनिधि के रूप में आसन पर रखने के लिए ग्रन्थि लगा हुआ कुशत्रय।

32. कुशास्तारण :- वेदी पर आवरण के रूप में कुश बिछाना।

33. गजच्छाया योग :- जब हस्त नक्षत्र पर सूर्य हो और मघायुक्त त्रयोदशी हो तो ऐसे योग को वैवस्वती या गजकुञ्जर (गजच्छाया) योग बनता है। इसमें श्राद्ध करने का विशेष फल होता है।

34. गोपुच्छोदक :- गाय की पुंछ के माध्यम से तर्पण आदि में दिया जाने वाला जल।

35. घटी :- 24 मिनट का समय, इसको नाड़ी अथवा दण्ड़ भी कहते हैं।

36. चन्दन दान :- पितरों को सदैव तर्जनी से ही चन्दन समर्पित करना चाहिए।

37. जान्वाच्य :- बायाँ घुटना मोड़कर बैठना।

38. तर्पण :- शास्त्रोक्त विधि से देवता, ऋषि तथा पितरों को जल प्रदान करना।

39. तिलतोयपूर्ण पात्र :- तिल से युक्त जल भरा हुआ पात्र।

40. तिलतोयाञ्जलि :- मृत्यु के उपरान्त प्राणी के निमित्त अञ्जलि द्वारा तिलसहित जल प्रदान करना।

41. दशोपचार :- पाद्य, अर्घ, आचमन, स्नान, वस्त्र, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य।

42. दर्श :- अमावस्या।

43. दुर्मरण :- शास्त्रीय विधि से विपरीत अवस्था में मृत्यु।

44. देवतीर्थ :- अङ्गुलियों के आगे का भाग, यह देवकार्यों में प्रशस्त है।

45. दौहित्र :- पुत्री का पुत्र, खड्गपात्र तथा कपिला गाय का घी।

46. नारायण बलि :- शास्त्रोक्त विधि से मृत्यु न होने पर दुर्गति से बचने के लिए किया जाने वाला प्रायश्चित्त अनुष्ठान।

47. निष्क्रय :- किसी वस्तु के मूल्य के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य।

48. निवीती (माल्यवत्) :- जनेऊ को गले में माला की तरह कर लेना।

49. नीबी बन्धन :- श्राद्ध में रक्षा के लिए तिल, कुशत्रय को पत्ते में रखकर श्राद्धकर्ता द्वारा कटि में बाँधना।

50. न्युब्जीकरण :- श्राद्ध में अर्घपात्र को उलटा रखना।

51. पञ्च भूसंस्कार :- भूमि का प्रोक्षण आदि पाँच प्रकार का संस्कार।

52. पञ्चोपचार :- गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य।

53. पवित्री :- कुशा से बनायी हुई विशेष प्रकार की अंगूठी जो कि अनामिका में धारण की जाती है।

54. पवित्रक :- अर्घपात्र में स्थापित किया जाने वाला ग्रन्थि लगा हुआ कुशपत्र।

55. परिवेषण :- पित्रादिकों के लिए भोजन परोसना।

56. पातित वामजानु :- बायें घुटने को टिकाकर जमीन में लगाकर बैठना।

57. पात्रालम्भन :- श्राद्ध में अन्न परिवेषण के अनन्तर किया जाने वाला अन्नपात्र का स्पर्श।

58. पात्रासादन :- कृत्य के पूर्व पात्रों को यथास्थान रखना।

59. पाद्य :- पूजन में पाद-प्रक्षालन के प्रतीक के रूप में दिया जाने वाला जल।

60. पितृतीर्थ :- अंगूठे और तर्जनी अङ्गुली के बीच का स्थान पितृतीर्थ कहलाता है। पितरों के उद्देश्य से द्रव्यत्याग इसी पितृतीर्थ से किया जाता है।

61. पूरक :- श्वास खींचना।

62. प्रत्यवनेजन :- पिण्ड़दान के पश्चात् पोषणार्थ पिण्ड़ पर दिया जाने वाला जल।

63. प्राजापत्यतीर्थ :- कनिष्ठिका अङ्गुली मूल के पास का स्थान, इसका उपयोग ऋषि तर्पण में होता है।

64. मध्यषोड़शी :- एकादशाह के दिन विष्णु आदि देवताओं तथा प्रेत के निमित्त किया जाने वाला सोलह पिण्ड़दान।

65. मध्याह्न :- प्रात: 10:48 से दोपहर 01:12 तक का समय।

66. मलिनषोड़शी :- मृत्यु के पश्चात् दस दिनों के भीतर अशौचकाल में दिये जाने वाले पिण्ड़।

67. महालय :- भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा से आरम्भ होकर आश्विन कृष्ण अमावस्या तक का समय।

68. महैकोद्दिष्ट श्राद्ध :- एकादशाह के दिन किया जाने वाला आद्य श्राद्ध।

69. मार्जन :- जल का छींटा देकर पवित्र करना।

70. मोटक :- पितृकार्य में प्रयुक्त होने वाला दोहर बंटा हुआ कुशविशेष (द्विगुण भुग्रकुशत्रय)।

71. यज्ञपात्र :- प्रणीता, प्रोक्षणी, स्रुवा आदि हवन के पात्रविशेष, पूर्णपात्र (ब्रह्मा को देने का पात्र), चरुस्थाली (चरु पकाने का पात्र), आज्यस्थाली (हवन के लिए घृत रखने का पात्र) आदि।

72. रेचक :- श्वास छोड़ना।

73. रौहिण :- दिन का नवम् मुहूर्त्त (दिन में 12:24 से 01:12 अर्थातः 48 मिनट)।

74. लेपभागभुक् पितर :- तीन पीढ़ियो से पूर्व के पितर।

75. वरण :- यजमान के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के लिए ब्राह्मणों का शास्त्रीय विधि से मनोनयन।

76. विकिरदान :- जिन की जलने से मृत्यु हो गयी हो अथवा जिनका दाह-संस्कार नहीं हुआ हो, उनके निमित्त श्राद्ध में दिया जाने वाला अन्न।

77. षोड़शोपचार :- पाद्य, अर्घ, आचमन, स्नान, वस्त्र, आभूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल, स्तवपाठ और नमस्कार।

78. सङ्गव :- प्रात: काल के पश्चात् तीन मुहूर्त्त तक (दिन में 08:24 से 10:48 तक अर्थात् 02 घण्टा 24 मिनट)।

79. सपिण्ड़ :- स्वयं से लेकर पूर्व की सात पीढ़ी तक के पूर्वपुरुष ।

80. सोदक :- पूर्व की आठवीं पीढ़ी से लेकर चौदहवीं पीढ़ी तक के पूर्वपुरुष ।

81. सव्य (उपवीती) :- जनेऊ को बायें कन्धे पर डालकर दाहिने हाथ के नीचे करना।

82. सपिण्ड़ीकरण :- मृतप्राणी को पितरों की पंक्ति में सम्मिलित करने हेतु विशेष प्रकार की पिण्डदान प्रक्रिया।

83. समिधा :- हवन के लिए यज्ञीय काष्ठ (आम, पलाश, पीपल आदि)।

84. साङ्गतासिद्धि :- कर्म के सभी अङ्गों की पूर्णता के लिए किया जाने वाला सङ्कल्प।

85. सिद्धान्न :- अग्नि पर पकाया गया अन्न।

86. स्वस्त्ययन :- स्वस्तिवाचन।

13.5. सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत छात्रों को श्राद्ध का महत्त्व बताया गया है। इसके अन्तर्गत कन्यागत श्राद्ध, पार्वण श्राद्ध, वृद्धि श्राद्ध, सपिण्ड़न श्राद्ध, नित्य-नैमित्तिक एवं काम्य श्राद्ध तथा श्राद्ध का समय, योग्य व अयोग्य ब्राह्मण,

योग्य व अयोग्य कर्मकर्ता, श्राद्ध में किये जाने वाले महादान, पञ्चसूनाजनित दोष परिहार के लिए पञ्चबलि का विधान तथा श्राद्धकर्म में पारिभाषिक शब्दों का ज्ञान प्राप्त हुआ। श्राद्ध में तपर्ण आदि के पश्चात् पितरों को भोग लगाकर वेदपाठी ब्राह्मण, ऋत्विग्, दामाद, शिष्य आदि को श्रद्धापूर्वक भोजन कराना चाहिए, यह अक्षयफलदायी होता है।

13.6. शब्दावली

1. नित्यश्राद्ध = प्रतिदिन किया जाने वाला श्राद्ध
2. सौभाग्यवती = जिसका पति जीवित हो
3. पूर्णिमा = शुक्लपक्ष का पन्द्रहवाँ दिन
4. अमावस्या = कृष्णपक्ष का पन्द्रहवाँ दिन
5. श्राद्धपक्ष = कन्यागत सूर्य के पूर्णिमा से अमावस्या तक
6. मध्याह्न = दोपहर के सायंकाल के बीच का समय
7. सवत्सा = बछड़े सहित गाय
8. अनुपनीत = जिनका यज्ञोपवीत संस्कार न हुआ हो।
9. आमान्न = बिना पका हुआ अन्न/भोजन सामग्री

13.7. अतिलघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : श्राद्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर : श्रद्धा से पूर्वजों के प्रति जो कर्म किया जाता है, उसे श्राद्ध कहते हैं।

प्रश्न - 2 : कन्यागत शब्द से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर : सूर्य जब कन्या राशि में भ्रमण करता है, वह काल कन्यागत अथवा कनागत कहलाता है।

प्रश्न - 3 : सपिण्ड्न श्राद्ध किसे कहते है ?

उत्तर : प्रेत को पितरों के साथ मिलाने के लिए जो श्राद्ध किया जाता है, उसे सपिण्ड्न श्राद्ध कहते है।

प्रश्न - 4 : पितर कार्यों के लिए सर्वोत्तम तिथि कौनसी मानी गयी है ?

उत्तर : पितर कार्यों के लिए सर्वोत्तम तिथि अमावस्या को माना गया है।

प्रश्न - 5 : वृद्धिश्राद्ध कब किया जाता है ?

उत्तर : विवाह, सन्तान आदि माङ्गलिक कार्यों से पूर्व वृद्धिश्राद्ध किया जाता है।

13.8. लघुत्तरीय प्रश्न

प्रश्न - 1 : श्राद्ध की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न - 2 : श्राद्ध में किये जाने वाले महादानों का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न - 3 : पञ्चबलि का विधान बताइये ?

प्रश्न - 4 : श्राद्ध में ग्राह्य पुष्प व अन्नादि का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न - 5 : बालकों के श्राद्ध की व्यवस्था का वर्णन कीजिये ?

13.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. श्राद्ध पारिजात सम्पादक - डॉ. मधुसूदन पाण्डेय प्रकाशक - राखी प्रकाशन, गया।
2. श्राद्ध विवेक सम्पादक - पं. अनन्तराम डोगरा प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत संस्थान् वाराणसी।
3. अन्त्येष्टि श्राद्धकर्म पद्धति सम्पादक - पं. चतुर्थी लाल शर्मा प्रकाशक - खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई।